सत्यमेव जयते

ज्ञानवार्ता

चौथा संस्करण | अंक : 4 | वर्ष : 2013

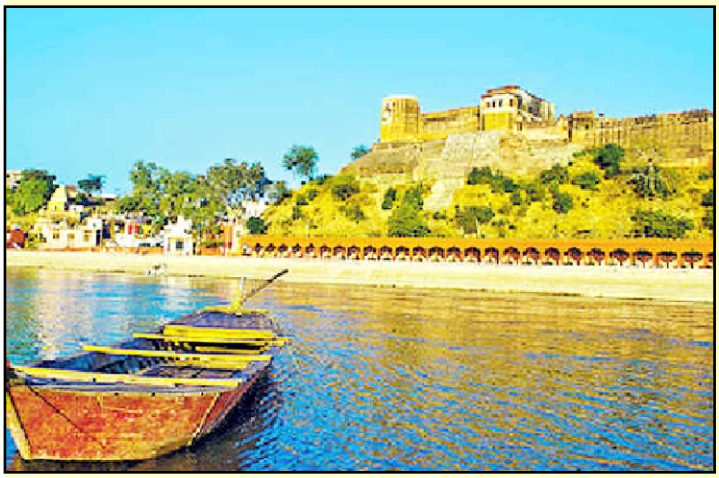

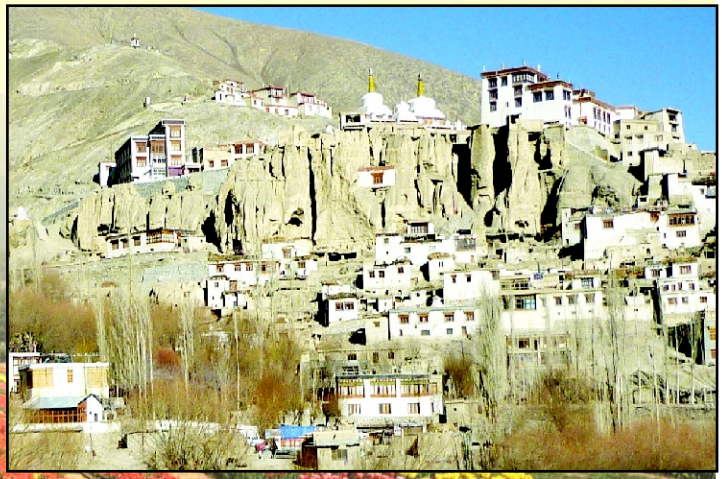

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

नराकास जम्मू की छमाही बैठक 18 दिसम्बर, 2012 की गतिविधियाँ

अध्यक्ष की कलम से .....

अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं निदेशक,
सीएसआईआर–भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की वार्षिक गृह पत्रिका ज्ञानवार्ता के चतुर्थ अंक के प्रकाशन पर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है। मेरी ओर से आप सबको हार्दिक मंगलकामनाएं!

नराकास जम्मू के कुल 125 सदस्य कार्यालय हैं। सभी केन्द्रीय कार्यालयों/बैंकों/उपक्रमों में राजभाषा नीति कार्यान्वयन एवं प्रयोग का कार्य प्रशंसनीय है। हिन्दी आज केवल जनसामान्य की भाषा नहीं है बल्कि सामान्य कार्य से लेकर प्रिन्ट मीडिया/इलैक्ट्रॉनिक मीडिया व इंटरनेट तक के कार्य हिन्दी में बड़ी सरलता से हो रहे हैं। कंप्यूटर के माध्यम से हिन्दी के कार्य करना अब काफी सरल हो गया है। विज्ञापन, मनोरंजन (फिल्मों) तथा अन्तरराष्ट्रीय बाज़ार में भी हिन्दी की पैठ बढ़ती जा रही है। नराकास, जम्मू राजभाषा के कार्यान्वयन की दृष्टि से ''ग'' क्षेत्र में आता है तथा इस क्षेत्र के अधिकांश अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक व प्रवीणता प्राप्त ज्ञान है। राजभाषा की प्रगति एवं विकास की दृष्टि से आशा के अनुकूल पूर्णतः प्रयोग की सम्भावना है। नराकास समिति एवं अन्य सदस्य कार्यालयों में संसदीय राजभाषा समितियों में राजभाषा निरीक्षण के समय राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन की दिशा में उनके मार्गदर्शन से हिन्दी के प्रयोग को बल मिला है।

नराकास सदस्य कार्यालयों के सहयोग से कंप्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम, अखिल भारतीय कवि सम्मेलन समिति के तत्त्वावधान में आयोजित करने का क्रम जारी है। ऐसे सहयोगी सदस्य कार्यालय हार्दिक बधाई के पात्र हैं। समिति की वार्षिक गृह पत्रिका ज्ञानवार्ता के प्रकाशन नियमित रूप से हो रहे हैं। ज्ञानवार्ता पंजीकृत पत्रिका है, जो विश्वविद्यालय स्तर के लेखकों के लिए भी उपयोगी है। हमने नराकास, जम्मू कार्यालय की वेबसाइट तैयार की है और आई.डी., ई–मेल के माध्यम से सभी सदस्य कार्यालयों को पत्राचार के लिए सरल बनाया है। इस वेबसाइट के माध्यम से समिति के कार्यक्रम व अन्य सदस्य कार्यालयों के कार्यकलाप राष्ट्रीय स्तर पर देखने के लिए उपलब्ध होंगे। हमारे कार्यालय द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया जो वेबसाइट पर उपलब्ध है।

ज्ञानवार्ता के इस अंक में लेखकों/रचनाकारों की लेखन प्रतिभा एवं उनकी साहित्यिक अभिरूचि को उजागर करने के साथ–साथ हिन्दी को सर्वव्यापी व सर्वग्राही बनाने में हिन्दी पत्रिकाएं सशक्त माध्यम होती हैं।

मुझे आशा है कि यदि आपका सहयोग इसी प्रकार मिलता रहा तो ऐसे कार्यक्रम करने के लिए हम प्रतिबद्ध हैं। ज्ञानवार्ता के निर्माण में डॉ. अमर सिंह, मुख्य संपादक व श्री राजेश कुमार, हिन्दी टंकक ने श्रमपूर्वक अपने दायित्वों का निर्वाह्न किया है। संपादक मंडल के सभी सहयोगी बंधुओं, लेखकों, रचनाकारों को हार्दिक बधाई।

ज्ञानवार्ता के उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी शुभकामनाएं।

राम विश्वकर्मा

डॉ. राम विश्वकर्मा

संपादकीय....

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की राजभाषा गृह पत्रिका **'ज्ञानवार्ता'** का चतुर्थ अंक सुधी पाठकों के कर–कमलों में प्रस्तुत करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। तृतीय अंक की अपेक्षा ज्ञानवार्ता के प्रस्तुत अंक में आपको नवीन परिवर्तन मिलेगा क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है इस आश्य के साथ आगामी अंक और बेहतर बनाने के प्रयास किए जायेंगे। साहित्य और संस्कृति को समझने के लिए भाषा का अध्ययन एवं लेखन एक अनिवार्य और आवश्यक माध्यम है। भाषा के अध्ययन की विधियां बदली हैं और संरचनात्मक पद्धति पर विशेष बल दिया जा रहा है। हिन्दी भाषा और नागरी लिपि के अध्ययन के कई प्रयास हुए हैं। लेकिन हिन्दी भाषा के इतिहास एवं स्वरूप विवेचन अब तक के प्रयासों में विद्वानों ने कुछ महत्वपूर्ण कार्य किए हैं।

ज्ञानवार्ता के इस अंक में हिन्दी भाषा का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयास किया गया है। जिसमें नई दृष्टि का अनुप्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अंक में प्रकाशित विषय वस्तु उच्च कक्षा के छात्र/छात्राओं व प्राध्यापकों की लेखन सामग्री है।

चूंकि मनुष्य के मनों भावनाओं और बुद्धि के विचारों की कोई इति नहीं है। इन भावनाओं और विचारों के आदान–प्रदान के साधन से भाषा का रूप विकसित होता है। यदा–कदा ऑख दबाकर, खांसकर या हाथ मिलाकर भी कई भावनाएं व्यक्त की जाती हैं वहीं स्काउटिंग में झंडिया दिखाकर, शादी–विवाह में हल्दी बांटकर अथवा कालेज में घण्टी बजाकर भी एक विचार व्यक्त किया जाता है। लेकिन सामान्यतः भाषा का इतना व्यापक अर्थ नहीं लिया जाता। उसे केवल कथन व श्रवण तक ही सीमित माना गया है। किसी भी समाज के सभी वर्गों के उच्चारण अवयवों द्वारा सामूहिक रूप से ढोई जाने वाली भाषा नदी की तरह पीढ़ीदर–पीढ़ी के ढलानंपर प्रवाहित होती है। अतः ज्यों–ज्यों आगे बढ़ती है त्यों–त्यों इसके प्रवाह में सरलता और सहजता आती रहती है। इस परिवर्तन को विकार कहें या विकास, पर यह भाषा की प्रकृति है जिसमें सामाजिकता, परम्परागत, अर्जन, परिवर्तनशीलता, सरलता, प्रवाह, प्रोढ़ता जो स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर बढ़ती रहती है। अर्थात् बोलने वाले के चिन्तन– मनन का स्तर जितना ऊपर उठता जाता है, उनकी अभिव्यक्ति उतनी ही सूक्ष्म होती चली जाती है और भाषाएं उतनी ही प्रौढ़ होती रहती है। प्रौढ़ता से विचारों या अनुभूतियों को गहराई से व्यक्त करने की क्षमता से भाषा के स्वभाव में प्रौढ़ता उत्पन्न होती है।

मुझे गर्व है कि समिति के कार्य–कलापों में समय–समय पर जो दिशा–निर्देश एवं मार्गदर्शन संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष, नराकास, जम्मू परम श्रद्धेय डॉ. राम विश्वकर्मा जी से प्रोत्साहन एवं सहयोग प्राप्त हुआ। उनके प्रति आभाराभिव्यक्तीकरण के लिए शब्द समर्थ प्रतीत नहीं होते, तथापि कृतज्ञता व्यक्त किए बिना संतोष नहीं हो रहा। कुल मिलाकर यह श्रम कितना सार्थक हुआ, इसका निश्चय पत्रिका की उपयोगिता करेगी। ज्ञानवार्ता की त्रुटियों के संदर्भ में पाठकों, विद्वज्जनों की सम्मतियॉ पाकर प्रसन्नता होगी। यह प्रसन्नता की बात है कि इस रचनात्मक स्पर्धा में विद्वान तथा जागरूक लेखकों ने बड़ी संख्या में हिस्सा लिया और अपनी उत्कृश्ट रचनाएं भेजी। इस अंक के लिए लेखों का चयन, संशोधन व गुणवत्ता युक्त बनाने में मेरी स्वयं की व संपादक मंडल की महत्वपूर्ण भूमिका है। टंकण कार्य के लिए श्री राजेश कुमार ने मुझे प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया है। मैं उनका हृदय से आभार सहित धन्यवाद करता हूँ।

प्रस्तुत अंक में लेखकों की उनकी कल्पना शक्ति में उत्साह देखने की इच्छाशक्ति में निरन्तर वृद्धि अवश्य हुई होगी। हमारे बहुत से नये लेखक निकट भविष्य में अच्छे लेखक और रचनाकार होंगे। हमें आशा है कि वे अगले अंक के लिए अपने लेख ज्ञानवार्ता में भेजते रहेंगे।

ज्ञानवार्ता के अपेक्षित सहयोग के लिए आभार सहित!

(डॉ. अमर सिंह)
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं
सदस्य–सचिव, नराकास, जम्मू

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की जून, 2013 की छमाही बैठक के दौरान समिति की वेबसाइट का विमोचन समिति के अध्यक्ष डॉ. राम विश्वकर्मा एवं अन्य गतिविधियाँ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू के सौजन्य से दिनांक 17 सितम्बर, 2013 नराकास कार्यालय द्वारा संस्थान के ऑडिटोरियम हॉल में रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष, नराकास डॉ. राम विश्वकर्मा।

अनुक्रमणिका

क्र.	नाम	लेखक / लेखिका	पृष्ठ
1.	सनातन जीवन में धन की उपयोगिता	– चेतन स्वरूप शर्मा	6
2.	सेवानिवृत्ति एक चुनौती एवं अवसर	- रविकुमार शर्मा	8
3.	ज्योतिष्मति मालकांगनी	– कान्ति रेखा	11
4.	मेरे मन की तपन अछूती	- मधु चतुर्वेदी	13
5.	नव वर्ष मंगलमय हो	– वाहिद अली ''वाहिद''	13
6.	अफसर वाली नौकरी	– आर. बी. सिंह	14
7.	सरस्वती वन्दना	– श्रीकृष्ण निर्मल	22
8.	रास्ता	– संयोगिता शर्मा	22
9.	टूटना या छूटना	– संयोगिता शर्मा	22
10.	अलका सरावगी कृत 'एक ब्रेक के बाद' 12के संदर्भ में कारपोरेशन जगत	– सीमा चौहान	23
11.	सूचना का अधिकार	– आर.एल.मीना	25
12.	सिर्फ तुम	– संयोगिता शर्मा	27
13.	पाश्चात्य काव्य–शास्त्र	– अशोक कुमार	28
14.	जल	– प्रिया कंवर	32
15.	चिनार का पत्ता	– राजेन्द्र कुमार च्रोंगू	32
16.	जल संचयन	– चेतन स्वरूप शर्मा	
17.	स्लोगन – जल बाईसा	– चेतन स्वरूप शर्मा	33
18.	मनुष्य की जीवन यात्रा – कैलाश चन्द्र मठपाल	– चेतन स्वरूप शर्मा	
19.	भूमंडलीकरण और काशी का अस्सी	– मुकेश कुमारी	37
20.	नारी का ''कैसा हो वसन्त''	– मिथिलेश दीक्षित	40
21.	लघुकथा (विवशता)	– मिथिलेश दीक्षित	41
22.	कार्यालयी हिन्दी के प्रति झिझक क्यों	– प्रो. राजकुमार	42
23.	क्या धर्म समाज का साधक ?	– संजय सिंह	45
24.	गीत	– रचना तिवारी (गीतकार)	46
25.	युवा लेखक बलरम प्लेटफार्म	– रचना तिवारी (गीतकार)	47
26.	हिन्दी के सुप्रसिद्ध ललित निबंधकार	– निधि शर्मा	48
27.	प्रकृति का वरदान : गेहूं का ज्वारा	– राकेश कुमार शर्मा	50

28.	निर्देश	– श्रीकृष्ण निर्मल	57
29.	अक्षर	– श्रीकृष्ण निर्मल	58
30.	आम आदमी की पीड़ा का रचनाकार : 33 दुष्यन्त कुमार त्यागी	– राकेश सक्सेना	61
31.	सेना तथा वीर सैनिकों के लिए हमारे जज़बात	– सुमन रैना	46
32.	मुक्तक	– सुमन रैना	64
33.	गीत	– सुमन रैना	64
35.	मेरी राजभाषा हिन्दी	– निशा शर्मा	64
34.	''राष्ट्र भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है''	– उमेशचन्द्र शर्मा	65
36.	राजभाषा हिन्दी का गुणगान	– विजययम्मा पी.	69
37.	स्वात्मबुद्ध पुलिस से समाज को अपेक्षाएँ	– अशोक कुमार दीक्षित	70
	एहसास	– कु0 ऋचा	72
38.	आज हिन्दी दिवस का दिन स्वभाषा	– पवन कुमार	73
39.	ज्ञाण के दीप जलाए–रखूँगा	– विमला सलाथिया	74
40.	हिन्दी की अभिलाषा	– शैलेश शर्मा	74
41.	मेरी मॉ, महाप्रयाण (संस्मरण)	– मंजुलता शर्मा	75
42.	जिन्दगी ना मिलेगी दोबारा	– भूमिका वाधवा	80
43.	एक अलिखित कविता	– जितेन्द्र उधमपुरी	80
44.	'जमीन' उपन्यास में चित्रित नारी	– कामिनी देवी	81
45.	आकाश–गंगा (एक मार्मिक अन्तर्कथा)	– डॉ. बहादुर सिंह निर्दोशी	84
46.	वृद्ध जीवन का आख्यान : समय सरगम	– सुनील कुमार	88
47.	विश्व शान्ति में शिक्षक और प्रशिक्षु	– हरबिलास सिंह	91
48.	गुमशुदा विज्ञापन	– मनीष कुमार	93
49.	हिन्दी पखवाड़ा	– कमलेश राजहंस	94
50.	फिजिक्स का चक्कर	– मनीष कुमार	94
51	समीक्षा	– शकुन्तला रानी	95
52.	ज्ञानवार्ता के तृतीय अंक की समीक्षा	– सारिका शर्मा	96
53	अपनी बात	– कमलेश राजहंस (राष्ट्रीय कवि)	98

वर्ष : नवम्बर, 2013 अंक : चतुर्थ वार्षिक गृह पत्रिका

संरक्षक

डॉ0 राम विश्वकर्मा

निदेशक आइ.आइ.आइ.एम. व अध्यक्ष

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

प्रधान संपादक

डॉ0 अमर सिंह

वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं सचिव

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

संपादक मंडल

1. श्री अब्दुल रहीम
2. श्री रवीन्द्र नाज़
3. श्री सुभाष चन्द शर्मा
4. श्री जगदीश लाल
5. श्री जॉनसन गिल
6. श्री बीरेन्द्र सिंह

सहयोग

श्री राजेश कुमार (कंप्यूटर हिन्दी टंकक)

नोट:

इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। नराकास जम्मू व संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संयोजक संपर्कसूत्र : नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

भारतीय समवेत औषध संस्थान

(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)

नहर मार्ग, जम्मू तवी-180 001 (भारत)

दूरभाष : 0191-2569000-10 फैक्स : 0191-2569333

E-mail : amarsingh@iiim.ac.in www.tolicjammu.org

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की गतिविधियॉ
बैठकों का आयोजन नियमित रूप से (जुलाई-नवम्बर)

- राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 3(3) का अनुपालन सभी सदस्य कार्यालयों में बेहतर ढंग से हो रहा है। पत्राचार की वृद्धि सुनिश्चित की गई है, जबकि हिन्दी में प्राप्त पत्रों के उत्तर अनिवार्य रूप से हिन्दी में देने का क्रम जारी है।
- 13–14 मार्च, 2013 को राजभाङ्गा सम्मेलन/भाषा कौशल/कंप्यूटर कार्यक्रम का आयोजन कुछ सदस्य कार्यालयों के सौजन्य से नराकास, जम्मू के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ।
- भारत सरकार, राजभाषा विभाग द्वारा जम्मू में हिन्दी भाषा, हिन्दी टंकण एवं आशुलिपि का प्रशिक्षण नियमित रूप से संचालित किया जा रहा है। जम्मू स्थित केन्द्र सरकार के कार्यालयों/बैंकों/उपक्रमों/निगमों के कर्मचारी प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं, विभिन्न कार्यालयों में लगभग 95 प्रत्यित कर्मचारी प्रशिक्षत हो चुके हैं और जो कर्मचारी प्रशिक्षण के लिए चेङ्ग हैं उन्हें बारी–बारी से प्रशिक्षण के लिए उनके कार्यालयों द्वारा नामित किया जा रहा है।
- राजभाषा विभाग द्वारा जारी नियम/अधिनियम/सूचनाएं सभी सदस्य कार्यालयों को समिति कार्यालय द्वारा समय से प्रेङ्गित किए जाते हैं।
- नराकास के सभी सदस्य कार्यालयों में कम्प्यूटरों के माध्यम से हिन्दी में कार्य सम्पन्न किए जा रहे हैं। यह राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में सदस्य कार्यालयों की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।
- नराकास कार्यालय द्वारा प्रतिवर्ष अन्तर्विभागीय भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है साथ ही अन्य प्रतियोगिता एवं संयुक्त रूप से भी कार्यक्रमों में सभी कार्यालयों को आमंत्रित किया जाता है।
- सभी कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन किया गया है और विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकें नियमित रूप से सम्पन्न हो रही हैं और उनके कार्यवृत्त व तिमाही प्रगति रिपोर्ट नियमानुसार समय से प्राप्त हो रही हैं।
- समिति के सभी सदस्य कार्यालयों में 2013 के दौरान हिन्दी दिवस/सप्ताह/पखवाड़ा/मास का आयोजन विशेष हर्शोल्लास के साथ किया गया और उनकी रिपोर्ट नियमानुसार समिति कार्यालय को प्राप्त हुई और हिन्दी के प्रगति एवं विकास में बढ़ोत्तरी हुई है।
- यदि सदस्य कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी समस्याऍ हैं तो अध्यक्ष महोदय द्वारा उन्हें दूर करने के लिए सभी संभव प्रयास किये जाते हैं।
- अध्यक्ष नराकास द्वारा सदस्य कार्यालयों को अच्छा कार्य करने पर पुरस्कृत किया जा रहा है साथ ही संबंधित कार्यालय के हिन्दी अधिकारियों/अनुवादकों/हिन्दी सेवियों को अध्यक्ष महोदय द्वारा प्रशस्ति पत्र (Merrit Certificate) प्रदान किए जा रहे हैं।
- नराकास, जम्मू के सभी कार्यालयों में हिन्दी पुस्तकों के साहित्य की उपलब्धता है, अर्थात् सभी सदस्य कार्यालयों में पुस्तकालयों की विधिवत व्यवस्था की गई।
- संसदीय समिति द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं अन्य सदस्य कार्यालयों में बेहतर ढंग से निरीक्षण कार्य सम्पन्न हो रहे हैं। वर्ष 2012–2013 में कई सदस्य कार्यालयों के राजभाषा निरीक्षण किये गये हैं।
- नगर समिति कार्यालय द्वारा वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की समेकित प्रशासन–शब्दावली सभी सदस्य कार्यालयो को उपलबध करवाई गई है।
- वर्ष 2011–2012 के लिए नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति जम्मू को राजभाषा नीति के श्रेष्ठ निष्पादन के लिए राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय से प्रथम पुस्कार प्राप्त हुआ।
- नराकास, जम्मू की आइ.डी. ई मेल/वेबसाइट (tolicjammu.org) तैयार की गयी और इसके माध्यम से पत्राचार किया जा रहा है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग

भारतीय समवेत औषध संस्थान

(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)

केनाल रोड, जम्मू तवी-180001 (भारत)

के तत्त्वावधान में

हाउसिंग एंड अर्बन डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन (हडको),

क्षेत्रीय कार्यालय, जम्मू

रूरल इलेक्ट्रीफिकेशन कारपोरेशन लिमिटेड, जम्मू

पंजाब नेशनल बैंक (मंडल कार्यालय), जम्मू

भारतीय स्टेट बैंक (प्रशासनिक कार्यालय), जम्मू

द्वारा प्रायोजित

राजभाषा सम्मेलन/भाषा कौशल/कंप्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम

13-14 मार्च, 2013

कार्यक्रम की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक एवं नराकास अध्यक्ष डॉ. राम विश्वकर्मा करेंगे।

स्थल : कॉन्फ्रेंस हॉल, आइ.आइ.आइ.एम. (आर.आर.एल.), जम्मू

आपकी उपस्थिति प्रार्थित है।

संयोजक : डॉ. अमर सिंह, सदस्य-सचिव, नराकास, जम्मू

मो. 9858629580

E-mail : amarsingh@iiim.ac.in

राजभाषा सम्मेलन/भाषा कौशल/कंप्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम

<u>बुधवार 13-14 मार्च, 2013</u>

<u>उद्घाटन सत्र</u>

पूर्वाह्न	9.30 बजे	पंजीकरण
पूर्वाह्न	9.45 बजे	अतिथियों का पुष्प गुच्छ द्वारा स्वागत
पूर्वाह्न	9.55 बजे	दीप प्रज्ज्वलन एवं सरस्वती वंदना
पूर्वाह्न	10.00 बजे	स्वागत भाषण - डॉ. अमर सिंह, संयोजक
पूर्वाह्न	10.10 बजे	श्री अशोक गुप्ता, महाप्रबंधक, पंजाब नेशनल बैंक (मंडल कार्यालय), जम्मू श्री अजीत कुमार जैन, उपमहाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक (प्रशासनिक कार्यालय), जम्मू श्री हरजीत कुमार, प्रमुख, हाउसिंग एंड अर्बन डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन (हडको), क्षेत्रीय कार्यालय, जम्मू श्री राकेश सरीन, आंचलिक प्रबंधक, रूरल इलैक्ट्रीफिकेशन कारपोरेशन लिमिटेड, जम्मू सदस्य कार्यालयों द्वारा संबोधन
पूर्वाह्न	10.30 बजे	अध्यक्ष महोदय द्वारा संबोधन - डॉ. राम विश्वकर्मा
पूर्वाह्न	10.45 बजे	धन्यवाद प्रस्ताव - डॉ. आर.के.रैणा, वरिष्ठ वैज्ञानिक
पूर्वाह्न	10.55 बजे	वन्दे मातरम्
पूर्वाह्न	11.00 बजे	जलपान एवं चाय
पूर्वाह्न	11.20 बजे	भाषा कौशल प्रशिक्षण सत्र प्रारम्भ श्री महेशचन्द गुप्त, पीएच.डी., डी.लिट, लेखक एवं साहित्यकार, दिल्ली द्वारा हिन्दी का व्यवहारिक ज्ञान, राजभाषा प्रबंधन एवं भारतीय भाषाएं परस्पर साम्य ।
पूर्वाह्न	11.40 बजे	श्री कृष्ण निर्मल, शिक्षा अधिकारी, दिल्ली द्वारा अक्षर, शब्द, 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' ।
पूर्वाह्न	12.00 बजे	तकनीकी सत्र : श्री अमित कुमार, आई.टी.प्रबंधक, पंजाब नेशनल बैंक, मंडल कार्यालय, जम्मू द्वारा हिन्दी में यूनिकोड तथा फॉन्ट कैसे सक्रिय करें । अन्य वक्ताओं द्वारा प्रस्तुतीकरण। संसदीय प्रश्नावली, सतर्कता, खुला सत्र ।
अपराह्न	1.30 बजे	दोपहर भोज - आइ.आइ.आइ.एम. कैफे

सनातन जीवन में धन की उपयोगिता

भारत ऋषि–मुनियों का देश है। भारतीय मनीषियों ने मानव जीवन को 100 वर्ष तक मुख्यतः चार आश्रमों में विभक्त किया था। उनमें प्रथम 25 वर्ष ब्रह्मचर्य, 25 से 50 वर्ष गृहस्थ, 50 से 75 वर्ष वानप्रस्थ और 75 से 100 वर्ष तक सन्यास आश्रम प्रमुख थे। उनके अपने विशेष सिद्धांत थे, उच्च आदर्श थे जिनके अनुसार मनुष्य अपना सार्थक एवं समर्थ जीवन यापन करता था। इससे वह दैहिक, दैविक और भौतिक शक्तियों का स्वामी बनता था। भारत की नैतिकता, आध्यात्मिकता और संस्कृति महान् थी।

प्रथम 25 वर्ष ब्रह्मचर्याश्रम में विद्या ग्रहण, 25 से 50 वर्श गृहस्थाश्रम में सांसारिक कार्य, 50 से 75 वर्ष वानप्रस्थाश्रम में आत्म चिन्तन–मनन करते हुए आत्म साक्षात्कार और 75 से 100 वर्ष तक सन्यासाश्रम में जन कल्याण करने का सुनियोजित कार्य किया जाता था। इनके अंतर्गत सनातन समाज को सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षणिक और धार्मिक दृष्टि से विश्व भर में सर्वोन्नत श्रेणी में सम्पन्न ही नहीं गिना जाने लगा था बल्कि विश्व ने उसकी आर्थिक सम्पन्नता देखते हुए, उसे सोने की चिड़िया के नाम से भी विभूषित किया था।

सनातन समाज की इस आर्थिक सम्पन्नता और उन्नति के पीछे जिस महान् शक्ति का योगदान रहा है, वह शक्ति थी, योगियों की योगसाधना और कर्मयोग। श्रीकृष्ण जी उनके महान् आदर्श रहे हैं। उन्होंने संसार में रहते हुए भी कभी संसार से प्रेम नहीं किया। उन्होंने पल भर के लिए भी योग को, स्वयं से कभी अलग नहीं किया। वे संसार में कभी लिप्त नहीं हुए। यही कारण है कि हम आज भी उन्हें अपना नायक, निराकार, सनातन, सत्पुरुष मानते हैं और वे हमारे सबके हृदयों में विराजमान रहते हैं।

यह तो सत्य है कि प्राचीन काल में **⅓ %** को छोड़कर **¾ %** सनातन समाज भौतिक सुख सुविधाओं से अभाव ग्रस्त था और उस समय प्राकृतिक शोषण न के समान हुआ था। इसका मुख्य कारण यह रहा है कि पहले सनातन समाज सादगी पसंद अध्यात्म प्रिय और प्राकृतिक प्रेमी था जबकि आज वही समाज वैसा होने का मात्र ढोंग, दिखावा कर रहा है। वह प्रकृति के विरुद्ध अनेकों कार्य करते हुए, उससे शत्रुता बढ़ा रहा है। इस तरह वह कल आने वाली महाप्रलय को, आज ही आमन्त्रित कर रहा है।

प्रकृति की परिवर्तनशीलता के प्रभाव से सनातन समाज के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षणिक और धार्मिक क्षेत्रों में परिवर्तन होना निश्चित था, परिवर्तन हुआ। यह समस्त भूखण्ड जिस पर कभी मात्र आर्य लोगों का **''वसुधैव–कुटुम्बकम''** दृष्टि से अपना अधिपत्य था, वह धीरे–धीरे कई राष्ट्रों के रूप में परिणत हो गया। उस भूखण्ड पर अनेकों देश जिनमें वर्तमान भारतवर्ष भी है, वह अपने अस्तित्व में आने से पूर्व कई छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त लेकिन उन्नत एवं समृद्ध भी था। वह विदेशी व्यापारी कम्पनियों, अक्रांता एवं लुटेरों की कुदृष्टि से बच न सका। जहां भारत के सम्राट साहसी और परमवीर थे, वहां वे अहंकार में चूर और विलासी भी, कम नहीं थे। परिणाम स्वरूप वे विदेशी व्यापारी कम्पनियों, अक्रांता एवं लुटेरों की छल विद्या एवं बांटो और राज करो, नीति को समझ न सके। अतः उन्हें उनसे हर स्थान पर मुंह की खानी पड़ी।

आज भारतीय समाज में, उसका हर मार्गदर्शक, अभिभावक, गुरु, नेता प्रशासक, सेवक और नौजवान योगसाधना से विमुख हो गया है और होता जा रहा है, जो एक बड़ी चिन्ता का विषय है। उन्हें पाश्चात्य देशों

की तरह मात्र अच्छा खाना, गाड़ी, बंगला, अपार धन और सर्व सुख–सुविधाएं ही चाहिएं, भले ही वह घोटाला करके, चोरी से, रिश्वत–घूस लेकर या फर्जीवाड़े से ही क्यों न जुटाई गई हों, जुटानी पड़े। इसमें उनकी धन लोलुपता अत्यंत घातक सिद्ध हुई है और बढ़ रही है। उन्हें राष्ट्रहित से कुछ भी नहीं है, लेना देना।

वह भारतीय दिव्य ब्रह्मज्ञान जो विदेशों तक कभी अज्ञान का अंधेरा दूर किया करता था, वह उत्पादन और हस्तकला कौशल का जीवंत जादू जो उनके सिर पर चढ़ कर बोला करता था, को ग्रहण लग गया है। भारत आर्थिक शक्ति बनने के स्थान पर, भीतर ही भीतर खोखला होता जा रहा है। देश के सामने आर्थिक चुनौती उभर आई है। उसमें आए दिन नए–नए घोटाले हो रहे हैं। लोगों का सफेद धन बे–रोक टोक, तेजी से कालाधन बन कर, विदेशी बैंकों की तिजोरियों में समाए जा रहा है फिर भी सरकारों के द्वारा राष्ट्रीय विकास का ढोल पीटा जा रहा है और वह उस विकास की पोल भी खोल रहा है। चोरी करना घूस और रिश्वत लेने–देने का प्रचलन जोरों पर है। भ्रष्टाचार की सदाबहार बेल निर्भय होकर, हर तरफ विष उगल रही है।

ब्रह्मचर्य जीवन में ज्ञानार्जित करना, गृहस्थ जीवन में सांसारिक कार्य करना सुख सुविधाएं जुटाना और उनका भोग करना, वानप्रस्थ जीवन में आत्म चिंतन, आत्म साक्षात्कार करना तथा सन्यास जीवन में समाज का मार्गदर्शन करना मानव जीवन का परम उद्देश्य रहा है। उसे प्राप्त करने के लिए प्रयास करना अनिवार्य था। इसलिए भारतीय मनीषियों ने जीवन के चार आश्रमों की कल्पना को कार्यान्वित किया था।

''वीर भोग्य वसुंधरा'' अर्थात वीर पुरुष ही धरती का सुख भोगते हैं। वीर वे हैं जो अपने अदम्य साहस के साथ जीवन की हर चुनौती का सामना करते हुए अपने परम जीवनोद्देश्य को सफलता पूर्वक पूरा करते हैं। इसी आधार पर गृहस्थाश्रम में सांसारिक सुख भोग किया जाता था। शेष तीनों आश्रमवासी गृहस्थाश्रम पर निर्भर रह कर अपने विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अपना–अपना कार्य किया करते थे।

विद्यार्थी गुरुकुल में रह कर विद्या अर्जित करते थे। पराक्रमी राजा वन गमन–एकांत वास करने, वानप्रस्थी बनने से पूर्व, स्वेच्छा से भोग्य वस्तुओं को अपने योग्य उत्तराधिकारी को सौंप देते थे और सन्यासी बहते जल की तरह कभी एक स्थान पर निवास नहीं करते थे। वे भ्रमण करते हुए लोक मार्गदर्शन किया करते थे। इस प्रकार भोग–सुख की सभी सुख सुविधाएं मात्र गृहस्थाश्रम वासियों की सम्पदा होती थी। यही भारतीय संस्कृति है। इसी कारण भारत में संग्रहित अपार धन–सम्पदा, विदेशियों के लिए आकर्षण, सोने की चिड़िया, उनकी आंख की किरकिरी बनी और उन्होंने उसे पाने और हथियाने के लिए साम, दाम, दंड और भेद नीतियों का भरपूर प्रयोग किया।

हमारी इसी अपार धन सम्पदा को पहले विदेशियों ने लूटा था और अब उसे अपने ही लोग अपने दोनों हाथों से दिन–रात लूट रहे हैं। इस तरह न जाने कब थमेगा, लूटने का यह सिलसिला! हम चाहें तो इस लूट को नियंत्रित कर सकते हैं। यह कार्य भारतीय सनातन जीवन पद्धति पर आधारित मानव जीवन आश्रम व्यवस्था अपनाने से सम्भव हो सकता है। इस भयावह आर्थिक चुनौती के विरुद्ध, समाज हित में, हम सबकी सकारात्मक एवं रचनात्मक इच्छा शक्ति और कार्य क्षमता अवश्य होनी चाहिए।

चेतन स्वरूप शर्मा
के. भू. जल बोर्ड, जम्मू

सेवानिवृत्ति एक चुनौती एवं अवसर

सेवानिवृत्ति किसी भी कर्मचारी की व्यावसायिक जीवन का वो ऐतिहासिक लाभ होता है जब वो अपने कार्यालय से अपना सरकारी कार्यकाल समाप्त कर वहां से हमेशा के लिए अवकाश प्राप्त करता है। यानि कि उस कार्यालय के रोजमर्रा के कामकाज से मुक्ति प्राप्त करता है तथा अपने आप को पूर्णतः सरकारी बंधन से आजाद महसूस करता है।

सेवानिवृत्ति का यह दिन कर्मचारी की जिन्दगी का एक बहुत ही महत्वपूर्ण दिन माना जाता है। उसे इस चीज़ का एहसास होता है कि उसने अपने जीवन का बहुमूल्य समय अपने कार्यालय के कार्यों को निष्ठा पूर्वक करके अपने संगठन को प्रगति और उन्नति में अपना योगदान दिया है तथा अंत के समय जब उसे कार्यालय से विदा लेनी ही होगी।

यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि कर्मचारी की सेवानिवृत्ति का दिन उसी दिन निर्धारित हो जाता है जिस कार्यालय से अपना पहला कदम रखता है और एक निश्चित समय सीमा के बाद उसे अपने कार्यालय को अलविदा कहना है। कर्मचारी एक लम्बा समय कार्यालय को देता है। जब कार्यालय में कर्मचारी की भर्ती होती है तो बिलकुल अनपढ़ होता है। उसे कार्यालय के कामकाज के बारे में कुछ भी मालूम नहीं होता! लेकिन धीरे–धीरे एक–एक दिन निकालकर नये–नये कार्यालयों के कामों को करता है तथा सीखता है। उसकी जिन्दगी में ना जाने कितने पल ऐसे आते हैं। उन सभी को करने में सफलता प्राप्त करना। कार्यालय के काम करते समय उसे बेहद खुशी मिलती है तथा जैसे–जैसे उसका कार्यकाल बढ़ता जाता है। अपने दफतरी काम में पकड़ भी बढ़ती जाती है तथा कर्मचारी को एक अलग प्रकार की खुशी का एहसास होने लगता है। अपनी ईमानदारी और अथक मेहनत से वह कार्यालय में समय–समय पर उन्नति प्राप्त करता है तथा एक लम्बा समय अपने कार्यालय को देने के बाद पूरी तरह पक कर कार्यालय में अनिश्चित काल के लिए सेवानिवृत्ति के रूप में अवकाश लेता है।

सेवानिवृत्त होने वाले कर्मचारी को अधिकारी के कार्यालय की मनोरंजन करता हुआ एक भव्य प्रहरी का अभिनय किया जाता है। जिसमें कार्यालय के सभी कर्मचारी एवं अधिकारीगण उपस्थित होते है। कार्यालय के उच्च अधिकारी की इस अलख पर उपस्थित होकर सेवानिवृत्त होने वाले कर्मचारी/अधिकारी का मान–सम्मान बढ़ाते हैं तथा उसे यह एहसास दिलाते हैं कि वो उसके द्वारा अपने लम्बे कार्यकाल में किये गये कार्यों को जानते हैं तथा पहचानते हैं तथा उसे एहसास दिलाने की कोशिश करते हैं कि भले ही कर्मचारी/अधिकारी प्रत्यक्ष रूप से उन कर्मचारियों के साथ नहीं रहेगा। लेकिन प्रत्यक्षरूप से वह कर्मचारी

हमेशा के लिए कार्यालय का हिस्सा बना रहेगा।

उसकी विदाई पार्टी में उसके द्वारा किये गये कार्यो को सराहा जाता है तथा उसके समग्र जीवन के उज्जवल भविष्य में मंगल कामना की जाती है। जिसे पाने का अधिकार भी लिया है। फूलों से सेवानिवृत्त कर्मचारी का स्वागत किया जाता है तथा उसे स्मृति चिन्ह भी प्रदान किया जाता है एक मिशनरी के रूप में और सचमुच में उन भावुक लोगों में किसी कर्मचारी व अधिकारी के जीवन का यह दिन एक ऐतिहासिक बन जाता है। विदाई पार्टी के समापन के बाद कर्मचारी/अधिकारी अपने सहयोगियों एवं घर से आये सदस्यों के साथ घर लौट जाता है, उन मीठी (सही) यादों के साथ जिन्हें भले सेवानिवृत्ति के बाद के दिन में एक बहुमूल्य धरोहर के रूप में संयोज्य रखना चाहेगा।

तो उसके बाद शुरू होती है एक नये जीवन की शुरूआत और शायद यह नये जीवन की शुरूआत उसके नौकरी के दौरान व्यतीत किये गये दिनों से बिल्कुल अलग हो तथा उसे दिन प्रतिदिन नई चुनौतियों का सामना करना पड़े। इसी संदर्भ में अमेरिका के एक रिचर्ड़ आरमर के कामनी की तमन्ना चढूंगी जिसने कहा था। कहने का तात्पर्य यह है कि यह है कि नौकरी के दौरान कर्मचारी कार्यालय के कार्यो को करता करता थक जाता है तथा सेवानिवृत्त होने के बाद अमर के घर बैठ जाता है और क्रोध नहीं करता है तो भी वह थक जाता है। यानि की उस गति के अनुसार सेवानिवृत्ति कर्मचारी को दो तरह से थकाती है।

सेवानिवृत्ति के बाद उसे किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है थोड़ा सा उनका भी यहां विचार करने के प्रयास किए गये हैं। सेवानिवृत्त व्यक्ति को पहले की अपेक्षा धन की कमी महसूस होती है। उसे यू प्रतीत होने लगता है कि शायद घर के सद्भाव अब उसकी उतनी देखभाल नहीं करते। उसे इज्जत या आदर सम्मान नहीं देते जितनी पहले मिलती थी और अगर कर्मचारी अधिकारी अपने शादी शुदा बच्चों और बहुओं के साथ रह रहा हो और वो भी नौकरी करने वाली हो तो शायद सेवानिवृत्त कर्मचारी को प्रतिदिन उनकी बातों को भी सुनना पड़ता होगा। बढ़ती उम्र के साथ बीमारियां भी साथ–साथ चलने लगती हैं, तो ऐसे में कौन सुबह शाम उसकी देखभाल करे वो भी जब दोनों ही मियां–बीबी को बच्चों को स्कूल भेजकर अपनी नौकरी के लिए विलम्ब हो। दिन व दिन मंहगाई इतनी बढ़ती जा रही है और ऊपर से बच्चों की फीस आदि दोनों के कमाने पर भी उन्हें संतोष नहीं मिलता तथा उन लोगों की नजर पिता के सेवानिवृत्ति पर मिले पैसों पर रहे। हमेशा पैसे के लिए पापा का दरवाजा खटखटाते रहे। लेकिन वहां खुशी तभी जब उनकी देखभाल करने का अवसर हो तो उससे सभी कतराये। जैसा कि आजकल समाज में अक्सर देखने को मिलता है तथा कभी–कभी तो नौबत यहां तक आ जाती है कि अपने ही बेटे अपने माता–पिता को अपने साथ रखने के लिए भी राजी नही हैं तथा मजबूरी उन्हें कभी–कभार वृद्ध आश्रम जैसे स्थानों में रहने के लिए विवश कर देते हैं। (भगवान करे ऐसा किसी

के साथ न हो) इसी विषय पर बनी फिल्म ''बागवान'' जिसमें ''अमिताभ और हेमामालिनी'' ने काम किया है। सेवानिवृत्त कर्मचारी की स्थिति को बहुत ही अच्छे ढंग से दर्शाया गया है। इस प्रकार सेवानिवृत्त कर्मचारी के लिए उसकी सेवानिवृत्ति के बाद का समय भी एक चुनौती बनकर उसके सामने आता है और वह उस चुनौती को कैसे स्वीकार करता है उस पर निर्भर करता है।

उसके साथ ही साथ सेवानिवृत्ति कर्मचारी को एक बहुमूल्य अवसर भी प्रदान करती है कि अब अपने आपको उन कार्यों में पूर्णतया सम्मिलित करें जिन्हें वो नौकरी के दौरान भलीभांति करना चाहता हो लेकिन नहीं कर पाया हो और अगर थोड़ा बहुत कर भी पाया हो लेकिन उसे पूर्णतया सन्तुष्टि नहीं है। मेरा इशारा उसके अधूरे शौक, रूचि अथवा लगाव की तरफ है। जिसके लिए नौकरी में रहते हुए प्राप्त समय नहीं मिल पाया। या फिर सरकारी नौकरी की पाबंधियों के चलते अपने संविधान द्वारा दिये गये बोलने व लिखने के अधिकार का प्रयोग नहीं कर पाया तो सेवानिवृत्त ऐसे कर्मचारी को एक अवसर प्रदान करती है कि वह समय का सद्पयोग करे तथा समाज में पनप रही कमियों को समाप्त करने हेतु मीडिया के माध्यम से अपने विचारों को अभिव्यक्त करे। या फिर किसी न किसी संगठन के साथ जुड़ कर समाज कल्याण का काम करें जिससे उसके समय का सद्पयोग हो सके तथा उसके जीवन में सार्थकता बनी रहे। सेहत का भी ध्यान रखे ताकि जो कुछ भी वो करना चाहे उसे अच्छे ढंग से कर पाये।

अक्सर देखा गया है कि जिन लोगों को किसी न किसी तरह का शौक, रूचि अथवा लगन होती है वो सेवानिवृत्त होने के बाद अपने आप को अकेला महसूस नहीं कर लें या फिर अपने आप को निरभय नहीं मानते बल्कि अपने काम पूरे उल्लास के साथ कर जीवन की नैय्या को आगे बढ़ाने के लिए हमेशा प्रयत्नशील रहते हैं। अपने जिंदगी भर के अनुभवों को दूसरो के साथ बांटें, उनके जीवन को भी सार्थक बनाने में लोग कार्य करते हैं तथा समाज को अच्छा बनाने के लिए सेवानिवृत्ति होने पर प्राप्त अवसर को पल भर के लिए भी व्यर्थ नहीं जाने देते।

''जीवन एक प्रवाह है, चलता ही रहे। सेहत रहे उमंग रहे व साहस रहे। जीवन में खुशी, खुशहाली हो बेशुमार बस यही उन सबके लिए दुआ रहे''।

रविकुमार शर्मा
स. लेखा अधिकारी

ज्योतिष्मति मालकांगनी

पिछले कुछ दशकों में जड़ी–बूटियों पर आधारित अनेक प्रकार की सामग्रियां बाजार में आने लगी हैं। आयुर्वेद तथा यूनानी पद्धति में इन औषधीय जड़ी–बूटियों का बहुत प्रयोग हो रहा है। आधुनिक समय में जड़ी–बूटियों पर आधारित औषधियों को लोकप्रियता बहुत तेजी से बड़ रही है और ऐलोपैथी चिकित्सा प्रणाली की ओर आकर्षित उपचार, आयुर्वेद यूनानी, तिब्बती, सिद्धा तथा दूसरे प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों से संभव है। इन सभी चिकित्सा पद्धतियों में औषधीय वनस्पतियों का उपयोग केवल उपचार के लिए नहीं किया जाता है। उनका उपयोग रोगमुक्त करने के लिए तथा स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए भी किया जाता है।

ऋग्वेद संसार का सबसे प्राचीन ग्रंथ माना जाता है जिसमें पेड़–पौधों के औषधीय गुणों का वर्णन मिलता है।

इसी प्रकार ज्योतिष्मती एक बहुत ही प्रभावशाली पौधा है जिसके औषधीय गुणों का वर्णन चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, यूनानी तथा अन्य आयुर्वेदिक ग्रंथों में किया जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत में इस औषधीय पौधे के उपयोग की परंपरा बहुत प्राचीन है और इसका आधार वैज्ञानिक तथ्यों पर रहा है इस औषधीय वनस्पति का उपयोग केवल प्रारम्भिक चिकित्सक प्रणाली में ही नहीं अपितु आधुनिक चिकित्सा पद्धति में भी अधिकाधिक हो रहा है। मालकांगनी के गुणों को देखते हुए हमारे देश में इस औषधीय पौधे से जुड़ा व्यापार निरन्तर बढ़ रहा है। इसकी माग केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में तेजी से बढ़ रही है।

पारंपरिक चिकित्सा पद्धति को बढ़ती लोकप्रियता तथा इस आधारित सामग्रियों ने जहां बहुत तेजी से लोगों को अत्याधिक लाभ दिया है वहीं एक समस्या भी उत्पन्न हो रही है। औषधीय वनस्पति की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए इस धरोहर का बहुत अधिक दोहन होने लगा है। दूसरी और अत्यधिक दोहन होने के कारण मालकांगनी जहाँ प्राकृतिक रूप में पाया जाता था वहाँ लुप्त होने का खतरा है। अगर यह सिलसिला इसी प्रकार चलता रहा तो निकट भविष्य में हम अपने इन बहुमूल्य धरोहर से हाथ धो बैठेंगे।

भारत सरकार ने केन्द्रीय स्तर पर एक औषधीय वनस्पति बोर्ड का गठन किया है तथा राज्यों में भी ऐसे बोर्ड का गठन हो रहा है। यह बोर्ड औषधीय वनस्पतियों के संरक्षण के लिए काम कर रहा है और जिन वनस्पतियों की मॉग अधिक है या जिनके लुप्त होने की संभावना है उनकी खेती को भी प्रोत्साहन दे रहा है, ताकि उन पर मंडराने वाला खतरा कम हो सके।

मालकांगनी भारत में मध्य प्रदेश, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक तथा उड़ीसा के जंगलों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता था। जंगलों के अन्धाधुंध कटाई के कारण इस लता को सहारा नहीं मिला। अतः धीरे–धीरे इसका उत्पादन कम होता जा रहा है व मांग के अनुरूप इसकी आपूर्ति नहीं हो पा रही है। भारत के अतिरिक्त मालकांगनी। ज्योतिष्पति उष्ण कटिबन्धीय उत्तरी अमेरिका, एशिया के कई राष्ट्र चीन, जापान व पैसिफिक आईलैण्ड में भी पायी जाती है। भारत में इसकी सात प्रजातियां पायी जाती है। इसकी संरक्षण एवं व्यापक औषधीय मांग को देखते हुए भारतीय समवेत औषध संस्थान

(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्) ने पहली बार ज्योतिष्मति की खेती विस्तार पूर्वक जम्मू में आरम्भ की है।

वनस्पति विवरणः–

ज्योतिष्मति एक वृक्षारोही झाड़ी के समान एक लम्बी लता है, इसका कुल सिलैस्ट्रेसी है यह बहुवर्षीय लता पेड़ों पर व बाड़ पर आसानी से चढ़ जाती है। इसकी शाखाएं कोमल एवं झुकी हुई होती हैं। भौगोलिक व प्राकृत्तिक अवस्थाओं के आधार पर उसके पत्तों की लम्बाई, चौड़ाई व रूपरेखा में परिवर्तन होता रहता है। आर्द्र क्षेत्रों में इसके पत्ते बड़े आकार के होते हैं। इनके पत्ते गोलाकार, अण्डाकार अथवा आयताकार होते हैं। इसकी शाखाओं पर सफेद धब्बे होते हैं। इसके पुष्प छोटे–छोटे व पीतांभ हरित वर्ण के होते हैं तथा मंजारियों में लगते हैं, इसके फल मटर की आकार के होते हैं जो पकने पर लाल रंग के होते हैं। इसके फल में तीन कोष्ठक होते हैं। प्रत्येक कोष्ठक में तिकोने दो–तीन बीज होते हैं। बीजों का अच्छे तरह मुखबन्द पात्रों में अनाद्र शीतल स्थान में संग्रहण करें ।

उपयोगिता एवं औषधीय गुणः–

ज्योतिष्मति एक बहु उपयोगी पौधे के रूप में सामने आया है। जहां इसके लाल–पत्ते फल अपने पोषक मान के लिए फल एवं बीजों से निकलने वाला तेल जिसे ज्योतिष्मति तेल, मांलकागनी तेल या रोगन माल करंगुनी कहते है। अनेक रोगों के उपचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसकी लता शोभाकार होती है। फूल व फल अति सुन्दर दिखते हैं। वृक्षों, पत्थर शिलाओं दीवारों व घर के चारों और इस लता को आच्छादित कर सुन्दर लगते हैं। तेजी से बढ़ने एवं मजबूत जड़तन्त्र के कारण यह भूमि का कटाव रोकने एवं बाद में नियंत्रण में भी प्रभावकारी पाया गया है ।

इसके बीजों का प्रयोग स्मरण शक्ति को तेज करने में किया जाता है तथा घृत एवं मिश्री के साथ बीजों का प्रयोग टांनिक के रूप में किया जाता है। मानसिक अवसाद हिस्थेरिया, लकवा, स्केबीज, गठिया का दर्द, एक्जीमा, वेरी–बेरी, रक्तचाप को कम करना आदि रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है। ''जेरीफोट'' एवं मगज़शुद्धि नामक औषधि का भी यह एक घटक है।

चरक व सश्रुत संहिता के अनुसार ज्योतिष्मति तेल उन्माद एवं उपस्मार में उपयोगी है। यह हृदय के आवरण कम और तम को दूर कर मन को विकल और उत्कृष्ट बनाता है। मन के उत्कृष्ट होने से मेघ विकसित होता है और स्मरणशक्ति व ग्रहनशक्ति में बढ़ोत्तरी होती है। इसकी प्रधान क्रिया मस्तिष्क और बाड़ियों पर होती है।

त्वचारोग, कुष्ठरोग, विविध ज्वरों नपुंसकता तथा अन्य शारीरिक विकारों को ठीक करने में यह लाभदायक है। इसके उपयोग से रक्तसंवहन में वृद्धि होती है और विटामिन 'बी' की कमी से होने वाले ''बेरी–बेरी'' नामक रोग की यह श्रेष्ठ औषधि है। अफीम का विष उतारने में इसके पत्तों का सेवन किया जाता है। सर्प विष में आदिवासी लोग इसकी जड़ को पानी में घिस कर लेप करते हैं। इससे सर्प विष उतर जाता है। बीजों का तेल जलोदर रोग में लाभदायक है व मूत्र भी अधिक मात्रा में विसर्जित होता है।

कान्ति रेखा
आइ.आइ.आइ.एम., जम्मू

मेरे मन की तपन अछूती

मेरे मन की तपन अछूती, सुख की ठंडी छांव से ।
अनजाने में गुज़र गए ये पग, सपनों के गांव से।।

चाहों की नगरी में घायल मन क्यों मारे फेरा,
दुर्बल तेरे पंख कठिन है, कुंठाओं का घेरा।
भोले पंछी, बचकर रहना कुटिल काल के दांव से,
सुख से क्या लेना, वो छलिया छद्म वेश में आए।

छल के, भोली आशाओं को पल भर में उड़ जाए।
पीड़ा का स्थाई नाता है इस मन की ठांव से।
कोमल भावुक मेरी कल्पना, ये कांटों का वन है।
अस्त–व्यस्त सी फिरे बावरी पीड़ा हुई सघन है।
कौन निकाले अनगिन कांटे उसके नंगे पांव से।

मधु चतुर्वेदी
गजरौला (उ.प्र.)

नव वर्ष मंगलमय हो 2013

सन् 13 की नयी किरण का मोती सा मुस्काना देख ।

सुख–दुःख तो आना–जाना है, इसका आना जाना देख।

समय साज़ पर गूंज रहा है, नये साल का गाना देख।

नया वर्ष है नयी उमंगें, नयी–नयी आशाएं हैं,

सन् 13 की नयी किरण का मोती सा मुस्काना देख।

कंकरीट के जंगल से निकलो गांवों, खलिहानों में,

खेतों में लहराती फसलें, सोने जैसा दाना देख।

जाति धर्म से राजनीति से देश बड़ा है गांधी का,

लोकतंत्र के इस गुलशन का कोई दृश्य सुहाना देख ।

मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारों में जाकर शीश झुकाता हूँ,

अली और बंजरंग बली का यह शायर दीवाना देख।

आतंकों के अंधकार से जगमग सूरज निकलेगा,

अंधकार में कवि ''वाहिद'' का दीपक राग सुनाना देख ।

नव वर्ष–2013 की हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

वाहिद अली ''वाहिद''
राष्ट्रीय कवि लेखक
लखनऊ (उ.प्र.)

अफसर वाली नौकरी

'अफसर वाली नौकरी' लेखक द्वारा लिखा जा रहा एक उपन्यास है।
यहाँ इस उपन्यास के कुछ अंश प्रस्तुत किये गये हैं।

रेलवे लाइन के किनारे के टेढ़े–मेढ़े और उबड़–खाबड़ रास्ते पर अपनी साइकिल तेजी से चलाता हुआ घुरहू आज जल्द से जल्द अपने गाँव पहुँच जाना चाहता था। बरसात की रात्रि का घना अंधकार, वीरान और सुनसान जंगल से आती हुई डरावनी आवाजें, और गरजते–चमकते चले आ रहे घने बादल भी उसे अपने घर जाने से रोक नहीं पा रहे थे।

सामान्य परिस्थितियों में घुरहू भी रात्रि के इस कठोर और भयंकर रूप को देखकर घबरा जाता, लेकिन अपने मालिक राणा महेन्द्र प्रताप की झिड़की और अपमान ने उसे इतना आहत कर दिया था कि वह बिना कुछ सोचे समझे ही अपने गाँव की ओर चल पड़ा था। रास्ता तो उसका जाना पहचाना था, किन्तु इसके पहले वह दिन के उजाले में ही इस रास्ते से होकर आता जाता रहा है। शहर में मालिक के बँगले की चमकती हुई बिजली में पिछले पाँच वर्षों से रहते–रहते वह यह भी भूल गया था कि बरसात की काली रात में रेलवे लाइन के किनारे कच्चे रास्ते पर तेजी से साइकिल चलाना किसी सर्कस की रस्सी पर चलने से कम नहीं है।

शरीर में 26 वर्षीय जवानी का जोश और मन–मस्तिष्क में बैठ चुकी मालिक द्वारा किये गये अपमान की नफरत। घुरहू अनेक प्रकार के उमड़ रहे विचारों के झंझावत से जूझता जैसे ही नदी के रेलवे पुल पर पहुँचा, अचानक आयी तेज बारिश के झोंकों ने उसे वहीं रुकने के लिए विवश कर दिया। वह साइकिल को वहीं खड़ी कर, पास के टिन के टूटे–फूटे पुराने शेड के नीचे आकर खड़ा हो गया। थोड़ी साँस भरकर जैसे ही आस–पास देखा, एक अज्ञात भय ने उसके युवा जोश को भी पराजित कर दिया।

टिन के उस जर्जर शेड के नीचे रुककर अज्ञात भय से घबराया हुआ घुरहू बारिश थमने का इन्तजार करने लगा। बारिश रुकने की जगह और बढ़ने लगी। नदी में बरसात के पानी का उफान भी बढ़ता ही जा रहा था। रात और भी भयानक होती जा रही थी।

थोड़ा समय बीतने पर यद्यपि अब घुरहू अपने को कुछ सुरक्षित महसूस कर रहा था, लेकिन मालिक महेन्द्र प्रताप द्वारा किये गये अपमान की ज्वाला उसके तन–मन को बरसात की उस रात में भी झुलसा रही थी।

अपमान छोटे–बड़े सभी पर एक ही तरह प्रहार करता है। ऐसा प्रहार जिससे अमीर, गरीब, बच्चे, युवक, वृद्ध, रोगी, बलवान सभी प्रभावित होते हैं। विवशता और पराधीनता अपमान को सहन करने का सम्बल प्रदान करती है। घुरहू भी यदि विवश न होता तो किसी का नौकर बनकर इतना अपमान क्यों सहता?

अचानक टार्च की तेज रोशनी से घुरहू चौंक पड़ा। रोशनी सीधे उसके चेहरे पर पड़ी थी।

'कौन ?' एक तेज और रोबीली आवाज घुरहू को सुनाई पड़ी।

'मैं ..... मैं ..... घुरहू।'

'कौन घुरहू ?'

'राणा महेन्द्र प्रताप का नौकर।'

'राणा महेन्द्र प्रताप कौन ?'

'इस शहर के बहुत बड़े अफसर।'

'यहाँ क्या कर रहे हो ?'

'पानी बरसने लगा.....'

'इतने पानी में शहर से निकले क्यों ?'

'गाँव में अपने घर जा रहा था।'

'घर जा रहे थे, कि नदी में डूबने ?'

'डूबना होता तो अभी तक बैठा क्यों रहता।'

घुरहू के उत्तर में दम था। टार्च वाला व्यक्ति थोड़ा शान्त हुआ। पुराने बरसाती ओवरकोट में ऊपर से नीचे तक ढँका हुआ लम्बा चौड़ा और गठीला बदन, एक हाथ में टार्च और दूसरी में लाठी को देखकर घुरहू ने अनुमान लगाया कि सामने वाला युवक रेलवे पुल की रखवाली करने वाला या पुलिस का सिपाही होगा।

'आप कौन ?' घुरहू के होंठ धीरे से बुदबुदाये।

'मैं...। मैं बलवन्त। शहर जा रहा हूँ। नौकरी ढूढने।' अजनबी ने उत्तर दिया।

नौकरी शब्द सुनकर घुरहू ने राहत की साँस ली। अन्दर के भय और घबराहट की जगह अब घुरहू के चेहरे पर बड़प्पन और गर्व का भाव स्पष्ट रूप से झलकने लगा। आखिर वह 'नौकर' था और सामने खड़ा अजनबी युवक 'नौकर' बनने जा रहा था। नौकरों की जमात में सभी नौकर अपने–अपने काम और अनुभव के अनुसार स्वयं को बड़ा–छोटा मान लेते हैं। बड़ा नौकर छोटे नौकर पर रोब जमाने लगता है और छोटा, बड़े के सामने सिर झुका लेना ही अपनी नियति मान लेता है।

जैसे घुरहू अपने आप को बड़ा मान बैठा, वैसे ही बलवन्त भी अपने को छोटा मानकर घुरहू के और निकट आकर खड़ा हो गया। जिन्दगी में पहली बार किसी से छोटा बनने की झेंप मिटाने के लिए बलवन्त ने कहना आरंभ किया–

'मैं बी0 ए0 पास कर चुका हूँ। पास के गाँव में ही मेरा घर है। जब मैं बारहवीं में पढ़ता था, मेरी शादी हो गयी थी। अभी तक हमारे घर का खर्च मेरे पिताजी ही चलाते हैं। मुझे अभी तक कोई नौकरी नहीं मिल पायी। नौकरी खोजने के लिए, बिना किसी को बताये, रात में ही घर से निकलकर शहर जा रहा हूँ।'

'इतनी जल्दी क्या थी ?कल दिन में निकल लिए होते।' घुरहू ने आत्मीयता जताते हुए कहा।

'बेरोजगारी क्या होती है, यह आप क्या जानें, आप तो आराम से नौकरी कर रहे हैं।' बलवन्त ने रुँआसे स्वर में कहा।

घुरहू के ओठों पर शरारत एवं व्यंग्यपूर्ण मुस्कान फैल गयी। बोला, 'नौकरी क्या होती है, यह तो तब जानोगे, जब नौकरी करोगे।'

दोनों ने लम्बी साँसें खींचकर एक दूसरे को ध्यान से देखा। आँखों ही आँखों में कुछ बातें हुईं। थोड़ी देर

रुकने के बाद महीने की पहली तारीख को शहर के बड़े सिनेमा हाल के सामने मिलने का वादा करके दोनों अपने–अपने रास्ते पर चल पड़े।

शहर से 15 किमी0 दूर के गाँव में घुरहू जब अपने घर पहुँचा, तब भी रात का घना अँधेरा छाया हुआ था। मिट्टी से बने हुए छोटे और पुराने घर के दरवाजे को जैसे ही खटखटाने के लिए उसने कुंडी पर हाथ लगाया, दरवाजा अपने आप खुल गया। दरवाजा अन्दर से बन्द ही नही था।

टूटी चारपायी के पास पहुँचकर घुरहू ने देखा कि उसकी पत्नी लोटकी गहरी नींद में सोयी हुई थी। घुरहू को क्रोध भी आया कि इस तरह तो कोई भी घर में घुसकर उसके साथ कुछ भी कर सकता है। कहीं उसकी पत्नी ने जान बूझकर तो दरवाजा खुला नहीं छोड़ दिया था?वह तो बिना बताये ही अचानक घर आ गया था। फिर वह दरवाजा खोलकर किसकी प्रतीक्षा कर रही थी?

घुरहू क्रोध में भड़क उठा। अब वह नौकर नहीं, अपने घर का मालिक था। चिल्लाकर पुकारा– 'लोटकी... ।'

लोटकी हड़बड़ाकर टूटी चारपायी से उठ खड़ी हुई। पति को सामने खड़ा देख वह आश्चर्य से बोली, 'अरे.. ..तुम।'

'हाँ मैं। क्या किसी और की राह देख रही थी ?' घुरहू ने कटाक्ष किया।

'तुम तो बस, हमेशा शंका ही करते रहते हो। इतना भरोसा नहीं था, तो ब्याह कर यहाँ छोड़ा क्यों ?' लोटकी ने भी आँखें मीचते हुए व्यंग्य बाण चलाया।

घुरहू अनुत्तरित था।

इसके पहले कि वह कुछ और कहता, चंचल, चपल और नटखट लोटकी ने झपटकर मोढ़े पर रखी हुई लालटेन को जला दिया। लालटेन के धीमें प्रकाश में अपने से 5 साल छोटी लोटकी के खिले सौन्दर्य की कांति को देखते ही घुरहू का क्रोध शांत हो गया।

यद्यपि घुरहू के मालिक का बँगला यहाँ से लगभग 15 किमी0 ही दूर था, लेकिन बड़ी कोठी की नौकरी और चमक–दमक में वह इतना रम गया था कि अपनी सुन्दर नवोढ़ा पत्नी को घर में अकेले छोड़ आया था, यह उसे याद ही नहीं रहा।

2 वर्ष के बाद अपनी चन्द्रमुखी पत्नी को सामने पाकर, बरसात की उस घनी रात में घुरहू ने लपककर उसे अपने आलिंगन में ऐसे जकड़ लिया, जैसे वह उसका प्रथम मिलन हो।

घुरहू की बाहों में आते ही लोटकी ने उसे ऐसे झटका कि वह गिरते–गिरते बचा। घुरहू उसे दुबारा पकड़ पाता इससे पूर्व ही वह छिटक कर एक किनारे खड़ी हो गयी। घुरहू कुछ समझ नहीं पाया कि लोटकी को हो क्या गया है।

'दो साल यहाँ कैसे रही, यह तो पूछा नहीं, झूठा आरोप लगा दिया?' लोटकी बिफर पड़ी।

'कौन सा झूठा आरोप?' घुरहू खीझ उठा।

'यही कि मैने दरवाजा किसी और के लिए खोल रखा था।'

'लेकिन दरवाजा तो खुला था।'

'जब दरवाजे की कुंडी टूटी हो, वह बन्द कैसे होगा ?'

'मैने तो यह देखा ही नहीं।'

'तुम क्या देखोगे, तुम्हें तो दो साल तक मैं भी नहीं दिखायी पड़ी।'

'वह तो मजबूरी थी।'

'मजबूरी..... कैसी मजबूरी?'

'नौकरों की मजबूरी तुम क्या जानो।' घुरहु उत्तेजित हो गया।

'हाँ ..... ठीक कह रहे हो। मुझे क्या मालूम नौकरों की मजबूरी। मैं तो यहाँ अपने घर की मालकिन हूँ न।' लोटकी ने आँखें नचाते हुए कहा।

'मालकिन तो हो ही। यहाँ तुम्हारी देखभाल करने के लिए माँ जी हैं, बाबू जी हैं। फिर तुम्हें क्या परेशानी है।' घुरहू ने बढ़ती बहस को शान्त करने का प्रयास किया।

'तुम्हारे जाने के दूसरे ही दिन माँ जी को साँप ने काट लिया।' कहकर लोटकी उदास हो गयी।

'कैसे ?' घुरहू घबरा उठा।

'पायल और झुमके की पोटली निकालने के लिए जैसे ही मिट्टी की गगरी में हाथ डाला, उसमें बैठे हुए काले भुजंग ने उनकी पूरी उँगली को अपने मुँह में भर लिया। बाबूजी गाँव के ओझा को तुरंत बुला लाए। वह दो घंटे तक झाड़–फूँक करता रहा, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। दो घंटे में ही माँ जी चल बसीं।' लोटकी की आँखों में आँसू छलक आये।

'लेकिन तुमने मुझे क्यों नहीं बताया। मैंने तो चिट्ठी में अपने मालिक का फोन नम्बर लिख दिया था और यह भी लिख दिया था कि कोई परेशानी हो तो बताना।' घुरहू ने सहानुभूति दिखाते हुए कहा।

'बताती कैसे। उस समय मैं रोटी बना रही थी। बगल का लड़का तुम्हारी चिट्ठी लेकर आया था। मैंने उसी से पढ़वा लिया। वह वहीं पर उसे रखकर चला गया। उड़कर आग में पड़ गयी और जल गयी। तब से आज तक तुम्हारी और तुम्हारी दूसरी चिट्ठी की राह देख रही हूँ।' लोटकी एक साँस में कह गयी।

'और बाबू जी कहाँ हैं।' घुरहू को कुछ आशंका हुई।

'माँ जी की तेरवी के दूसरे दिन ही वे भी नहीं रहे। उन्हें क्या हो गया, किसी को कुछ पता नहीं चल पाया।' लोटकी ने आँसू पोछते हुए कहा।

घुरहू के ऊपर वज्रपात हो चुका था। उसने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि पचास की उमर में चालीस की दिखने वाली उसकी माँ और गाँव के नामी पहलवान पिता इतनी जल्दी इस दुनिया को छोड़ जाएंगे। उसकी आत्मा चीत्कार कर उठी। उसे लगा जैसे उन दोनों की मौत का जिम्मेदार वह स्वयं है।

दो साल से लोटकी इस घर में अकेले कैसे निर्वाह कर रही है, यह कल्पना करते ही वह सिहर उठा। माता–पिता के निधन के समाचार से उत्पन्न शोक अब आत्म ग्लानि में परिवर्तित हो गया।

घुरहू ने तो सोचा था कि शहर में नौकरी मिलने की सूचना और अपने मालिक का फोन नम्बर लिखकर लोटकी को भेज ही दिया है। अगर उसे कोई परेशानी होगी तो फोन कर ही देगी। वह घर के बारे में निश्चिंत

था। उसने तो सोचा था कि साल–दो साल में कुछ रुपये एकत्र हो जाएंगे तो ठाठ–बाट से अपने गाँव जाएगा और अपने माता–पिता और पत्नी को कपड़ों और गहनों से लाद देगा। गाँव वाले भी उसका ठाठ देखते रह जाएंगे।

घुरहू बेदम होकर अपना सिर पकड़कर बैठ गया।

मनुष्य अपना खेल खेलता रहता है और नियति अपना। एक हँसता खेलता परिवार..... कुछ ही दिन में टूटकर बिखर सकता है, जानते सुनते तो सभी हैं, लेकिन महसूस तभी कर पाते हैं, जब उनके ऊपर स्वयं बीतती है।

गाँव के इतने बड़े और नामी पहलवान के बेटे घुरहू का स्वाभिमान, अपने मालिक राणा महेन्द्र प्रताप सिंह की एक झिड़की से उस समय इतना आहत हो गया था कि वह तुरंत उनकी नौकरी छोड़कर अपने गाँव चला आया था, लेकिन आज उसे महसूस हो रहा है कि वह कितना निरीह, असहाय और गरीब है। अपने मालिक की जिस नौकरी से उसे नफरत हो गयी थी, वही नौकरी आज उसके लिए एकमात्र सहारा थी। अब उसके ऊपर लोटकी की भी जिम्मेदारी आ गयी थी। उसने मन ही मन निश्चय किया कि कल सबेरे ही लोटकी के साथ जाकर वह मालिक के चरणों में गिर पड़ेगा और अपनी गलती की माफी माँग लेगा। मालिक कितना भी दुत्कारेंगे, वह वहाँ से टस से मस नहीं होगा। लोटकी को भी साथ में देखकर मालिक और मालकिन का दिल पसीज ही जाएगा।

घुरहू और लोटकी रात भर सो नहीं सके। दो साल लोटकी ने गाँव में अकेले कैसे बिताये, घर का सब रुपया सास–ससुर की तेरही में गाँव वालों को खिलाने पिलाने, और दान–दक्षिणा देने में कैसे खर्च हो गये, गहनों और बर्तनों को एक–एक कर कैसे गिरवी रखना पड़ा, कर्ज देने के बाद लाला ने उसे कितना सताया, गाँव के कितने शोहदों की उसने लात घूँसों से धुनाई की..... लोटकी एक–एक कर सुनाती रही....., धुरहू छत की ओर सूनी आँखों से निहारता हुआ चुपचाप सुनता रहा।

सवेरा होते ही पड़ोस वाली चाची जी को मकान की चाभी सौंपकर लोटकी को अपनी साइकिल पर बैठाकर घुरहू शहर की ओर चल पड़ा। रास्ते भर उसके मन में एक ही विचार आता रहा कि मालिक महेन्द्र प्रताप सिंह और मालकिन माधवी देवी को वे दोनों मिलकर कैसे मनाएंगें। एक बार छोड़ी हुई नौकरी दुबारा इतनी आसानी से मिलती भी तो नहीं है।

राणा महेन्द्र प्रताप के बंगले के पीछे आहाते में नौकरों के लिए कई कमरे एक ही पंक्ति में बने थे। घुरहू ने अपने रहने के लिए सबसे किनारे वाला कमरा पसन्द किया था। इन कमरों की पंक्ति के पीछे ही आहाते की दीवार थी। घुरहू के कमरे से दस कदम की दूरी पर ही आहाते की दीवार में एक छोटा सा लोहे का गेट बना था जिस पर सदैव बड़ा सा ताला लटका रहता था। गेट लोहे की मजबूत सरियों से बना था। वहाँ से बाहर का दृश्य साफ–साफ दिखायी पड़ता था।

लोटकी को इस कमरे में आये हुए अभी कुछ ही दिन हुए थे। गाँव के खुले प्राकृतिक वातावरण में रहने और अकेले होने के कारण, दिन भर में अपने गाँव का दो–तीन चक्कर तो वह लगा ही लेती थी।

समाज के लोगों से मिले जुले बिना जीवन निर्वाह असंभव है। लोग अपनी प्रकृति, स्वभाव और आर्थिक स्तर के अनुसार समाज के कुछ लोगों को अपना मित्र और कुछ को अपना शत्रु बना ही लेते हैं। दो

वर्षों तक गाँव में अकेले रहने वाली लोटकी के भी कई शत्रु और मित्र बन गये थे। मित्र तो बहुत सीमित थे, शत्रुओं की सूची दिनों दिन बढ़ती ही जा रही थी। शत्रुओं की संख्या बढ़ाने में उसका अपना हाथ कम, उसकी सुन्दरता, चंचलता और चपलता का योगदान अधिक था।

राणा महेन्द्र प्रताप के बँगले के इस एकान्त वाले कमरे में लोटकी का मन इन थोड़े से दिनों में ही ऊबने लगा। बगल के सभी कमरे अभी खाली ही पड़े थे। लोटकी अपने कमरे से निकली और लोहे के छोटे से गेट के पास पहुँचकर बाहर दूर तक की चहल–पहल को देखने लगी। वह टहलने के लिए बाहर जाना चाहती थी, किन्तु गेट में लटके हुए बड़े ताले ने उसका मार्ग अवरुद्ध कर दिया। उसने बाहर चाय की दूकान पर काम करने वाले एक बड़े लड़के को इशारा किया। लड़का दौड़कर गेट के पास आ गया।

'तुम्हारी दूकान पर क्या–क्या बनता है ?' लड़के के पास आने पर लोटकी ने पूछा।

'चाय.....पकौड़ी.....जलेबी.....मटरी..... ।' लड़के ने हँसते हुए उत्तर दिया।

'अनरसा नहीं बनता क्या ?' लोटकी ने भी स्वाभाविक मुस्कान बिखेर दी।

'अनरसा..... यह क्या होता है ?'

'अनरसा नहीं जानते ?'

'नहीं।'

'तो क्या जानते हो।'

'यहाँ जो जो बनता है, सब जानता हूँ।'

'अनरसा क्यों नहीं बनता ?'

'मैं क्या जानूँ ?'

'तुम नहीं जानोगे तो कौन जानेगा ?'

'मालिक जानें। मैं तो वहाँ नौकर हूँ।'

'तुम वहाँ नौकर क्यों हो ?'

'नौकर क्यों हूँ .....?' लड़का सोच में पड़ गया।

'हाँ..... तुम वहाँ नौकर क्यों हो ?' लोटकी उस लड़के को सताने लगी।

'देखो मेम साहब..... मुझसे फालतू बातें नहीं करो।' लड़के ने सिर खुजाते हुए कहा।

बराबर उम्र वाले सीधे–सादे लड़के को सताने में लोटकी को गाँव वाली प्रसन्नता प्राप्त हो रही थी। वह उस लड़के से और बातें करना चाहती थी, किन्तु संकोचवश लड़का बातचीत को शीघ्र ही समाप्त करने के पक्ष में था।

'तुमने मुझे मेम साहब क्यों कहा ?' लोटकी का चेहरा चमक उठा।

'तुम मेम साहब की तरह ही तो सुन्दर हो।'

'लेकिन मैं मेम साहब नहीं हूँ। मैं एक नौकर की बीवी हूँ।'

नगर राजभाषा कार्यान्वचयन समिति, जम्मू की छमाही बैठक 27 अगस्त, 2013 को बैठक के दौरान समिति की वेबसाइट का विमोचन करते हुए संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष, नराकास डॉ. राम विश्वकर्मा एवं उपस्थित अन्य कार्यालय प्रमुखगण।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू के सौजन्य से दिनांक 17 सितम्बर, 2013 नराकास कार्यालय द्वारा संस्थान के ऑडिटोरियम हॉल में रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम की गतिविधियाँ

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू के तत्वावधान में दिनांक 13–14 मार्च, 2013 के दौरान राजभाषा सम्मेलन/भाषा कौशल/कंप्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष, नराकास डॉ. राम विश्वकर्मा एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम की गतिविधियाँ।

दिनांक 13–14 मार्च, 2013 के दौरान दो दिवसीय राजभाषा सम्मेलन/भाषा कौशल/कंप्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम की गतिविधियाँ।

'नहीं हो, तो एक दिन हो जाओगी।'

'क्या हो जाऊँगी ?'

'मेम साहब।'

'क्या कहा.....? मैं मेम साहब बन जाऊँगी।' लोटकी आश्चर्यचकित थी।

'हाँ..... तुम बहुत बड़ी मेम साहब बन जाओगी।' कहकर लड़का वहाँ से भाग गया।

लोटकी ने हल्के से अपने सिर को झटका देते हुए लड़के की बात को हवा में उड़ा दिया। इस तरह की बहुत सी बातें गाँव में भी तो वह सुना करती थी। किन–किन बातों पर ध्यान दे। उसे प्रसन्न व अप्रसन्न करने के लिए लोगों द्वारा कही हुई बातों को यदि वह सोचने–विचारने लगे तो पागल ही हो जाएगी।

वह अपने कमरे में आ गयी। फर्श पर बिछी चादर पर लेटते ही विचारों के विस्तृत संसार में भ्रमण करने लगी।

गाँव की बात कुछ और है। वहाँ सभी से सभी का कोई न कोई नाता रिश्ता होता है। देवर–भौजाई, सास–बहू, देवरानी–जेठानी, काका–काकी, सखी–सहेलियाँ,, छोटे–बड़े, ...। सभी अपनी सीमाओं और सामाजिक मर्यादाओं में रहकर हास–परिहास, हँसी–ठिठोली करते रहते हैं। शहर में क्या होता है, क्या नहीं, लोटकी को अभी इसका अनुभव नहीं था।

'तो मेम साहब आराम कर रही हैं।' घुरहू ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा।

'तुम भी मुझे..... मेम साहब.....।' लोटकी कहते–कहते रुक गयी। वह गाँव की अवश्य थी, किन्तु इतनी अकल थी कि यदि आगे वह बोलेगी तो घुरहू तुरंत शक करने लगेगा कि क्या किसी और ने भी उसे मेम साहब कहा है।'

'क्यों क्या हुआ?मेम साहब कहना अच्छा नहीं लगा।' बैठते हुए घुरहू ने अपनेपन से कहा।

'बहुत अच्छा लगा..... तुम हमारे साहब, मैं तुम्हारी मेम साहब।' लोटकी ने बात बनायी।

'अच्छा अब जल्दी से तैयार हो जाओ। चलो, तुम्हें मालकिन से मिला लाता हूँ।' घुरहू ने गर्व से कहा।

'मैं मालकिन से आज दोपहर में ही मिल चुकी हूँ।' लोटकी मुस्करायी।

'क्या..... मालकिन से मिल चुकी हो ?तुम्हें डर नहीं लगा।'

'इसमें डरने की क्या बात है ?'

'मालिक और मालकिन से बड़े–बड़े लोग भी डरते हैं।'

'डरें वे, जिन्हें उनसे कुछ लेना है। मैं क्यों डरूँ।'

'तुम उनके नौकर की बीवी हो।'

'उनके नौकर की बीवी हूँ, नौकर तो नहीं।'

'देखो..... शहर में इतना अधिक नहीं बोलते। यहाँ पर बड़ों को तो जाने दो, छोटे लोग भी बात–बात में तुनक जाते हैं, और मरने मारने पर उतारू हो जाते हैं। यहाँ कोई छोटा भी अपने को छोटा नहीं समझता, बड़े

लोगों की तो बात ही कुछ और है।'

'लेकिन मालकिन तो मुझे अपने पास बिठाकर बातें कर रहीं थीं और वह भी हँस–हँसकर।' लोटकी ने चुटकी ली।

'हँस–हँसकर..... मैंने तो उन्हें कभी हँसते हुए नहीं देखा। शायद किसी ने नहीं देखा। बड़े अफसरों और उनके परिवार वालों को कभी किसी ने नौकरों से हँस कर बातें करते हुए देखा है?बड़े लोग बड़े हैं, उनके नौकर तक अपना जबड़ा भींचे रहते हैं।' घुरहू ने अपने सांस्कारिक अनुभव के आधार पर कहा।

'सभी नौकरों को अपने मालिकों का रोब–दाब ही दिखायी पड़ता है। मालिकों के अन्दर की उदारता और बड़प्पन उन्हें नहीं दिखती।' लोटकी ने हवा में हाथ लहराते हए कहा।

'तुम बोलती बहुत हो। कभी–कभी तो मुझे डर लगने लगता है।'

'बस दो–चार दिन में ही डरने लगे। देखते जाओ, आगे क्या होता है ?'

हँसी मजाक में सहजतापूर्वक कही गयी लोटकी की इस बात ने घुरहू को वास्तव में डरा दिया। वह कुछ समझ नहीं पाया कि लोटकी कहना क्या चाहती थी।

'क्या करने वाली हो ?' घुरहू ने अपने डर को छिपाते हुए मुस्कराने का प्रयास किया।

'मुझे मेम साहब बनना है।' लोटकी ने व्यंग्य किया।

'तो क्या तुम मुझे छोड़ने जा रही हो ?' घुरहू घबरा गया।

'तुम मुझे दो साल तक गाँव में अकेले छोड़े रहे, तो क्या मैंने तुम्हें छोड़ दिया।' लोटकी मुस्करायी।

घुरहू कुछ आश्वस्त हुआ। किन्तु उसके शंकालु मन ने उसमें एक अज्ञात भय उत्पन्न कर दिया। एक दीन–हीन गरीब नौकर की सुन्दर, चंचल और चपल पत्नी जब मेम साहब बनने का स्वप्न देखने लगे तो उस असहाय पति की वेदना को समझ पाना इतना सरल नहीं है।

घुरहू सोच में पड़ गया। लोटकी को शहर में लाकर कहीं उसने गलती तो नहीं की है। नौकरों की इच्छायें और आवश्यकतायें जितनी छोटी हों, वह उतना ही सुखी रहता है। महत्वाकांक्षा का नौकरों से क्या संबंध है। मालिकों की इच्छा ही नौकरों की इच्छा और मालिकों की खुशी ही नौकरों की खुशी होती है। दूसरे नौकर इसे मानें या न मानें, वह तो यही मानता था।

लोटकी ताड़ गयी। उसका मेम साहब बनने का स्वप्न देखना उसके गरीब पति को अच्छा नहीं लगा था। लोटकी उठी और घुरहू को अपने अंक में लेते हुए, उस पर प्रेम और अपनत्व की बरसात कर दी।

नारी के इस रूप को घुरहू ने पहली बार देखा और महसूस किया था।

डॉ. आर. बी. सिंह
उप निदेशक
(राजभाषा)
लखनऊ (उ.प्र.)

सरस्वती वन्दना

जयतु जय जय मॉ सरस्वती, जयतु जय वागेश्वरी।

लाज रखले आज जननी, आपने कविवंश की।

इसलिए आओ जननि तुम, चढ़ सवारी हंस की।।

कण्ठ को वीणा बना मॉ, बुद्धि की माहेश्वरी। जयतु जय जय मॉ.....

जीत ले हम इस जगत को, ऐसी कोई भक्ति दो।

काट दे तम इस जगत को, ऐसी कोई शक्ति दो।।

ज्ञान की तलवार दे मॉ, आज तू ज्ञानेश्वरी। जयतु जय जय मॉ .....

राखले जननी हमें तू, आ गये तेरी शरण।

इसलिए ही हो गया मॉ, फूल सा अन्तःकरण।।

परम पुस्तक ज्ञान की दे, भगवती परमेश्वरी। जयतु जय जय मॉ .....

श्रीकृष्ण निर्मल
शिक्षा–अधिकारी, दिल्ली

रास्ता

वक्त लौटता नहीं है
रास्ते वहीं रहते हैं
पर वक्त के साथ
रास्ते पहचाने नहीं जाते
कभी रास्ता वही होता है
पर, गुजरे हुए लौटते नहीं हैं
कभी गुजरते हुए लोग वहीं होते हैं
पर पहचाने नहीं जाते ।

टूटना या छूटना

छूटना बहुत कुछ होता है
टूटना सब कुछ होता है
जीवन तो कांच होता है
कांच का क्या टूटना, क्या छूटना
अपने सब छूट जाते हैं
तो कई सूत्र टूटते हैं
क्या महत्वपूर्ण है–टूटना या छूटना ।

संयोगिता शर्मा,
एम.ए.हिन्दी
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

प्रान्तीय ईर्षा द्वेष दूर करने में जितनी सहायता हिन्दी प्रचार से मिलेगी उतनी दूसरी चीज से नहीं।

–सुभाष चन्द्र बोस

अलका सरावगी कृत 'एक ब्रेक के बाद' के संदर्भ में कारपोरेशन जगत

अलका सरावगी ने अपने पहले बहुचर्चित उपन्यास 'कलिकथा : बाया बाईपास' के माध्यम से कलकत्ता की पृष्टभूमि में मारवाड़ी समाज के माध्यम से काल–कथा प्रस्तुत की है। 'शेष कादम्बरी' में भी अलका इसी पृष्ठभूमि पर एक और काल–कथा, प्रस्तुत करती है। 'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में अलका कथा के केन्द्र में मुख्य रूप से कॉरपोरेशन जगत, व्यावसाय जगत, भूमण्डलीय व्यापार जगत, आर्थिकता के पक्षों, कंप्यूटर क्रान्ति के लाभ–हानियां, इंडिया के इकानोमी कल्चर, मल्टीनेशनल कंपनियों के अधिकारियों, कला बाज़ार, मॉल्स और डिपार्टमेंटल स्टोर्स, इंडियन स्काई शाप आदि के भूमण्डलीकरण दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती हैं।

कॉरपोरेशन जगत की दुनिया में गत दस वर्षों से अत्यधिक परिवर्तन हुआ है। परिवर्तन की गति अत्यधिक तीव्र है। उपन्यास के एक पात्र के.वी. शंकर अय्यर के अनुसार इस तीव्र गति को पकड़ पाना युवाओं के लिए भी कठिन होता जा रहा है। मार्केटिंग की दुनिया जहॉ अत्यधिक जटिल है वहीं चौंकाने वाली भी है। उम्र के जिस पड़ाव पर लोग अपनी क्षमता अनुसार जीवन को समझकर रिटायर हो जाते हैं, उसी पड़ाव पर के.वी.शंकर अय्यर जैसे कॉरपोरेशन जगत से संबंधित व्यक्ति मार्केटिंग कंसल्टेंट बन कर क्रियाशील रहते हैं। यहॉ तक कि नौकरियॉ भी इनके इर्द–गिर्द घूमती हैं। सामाजिक स्तर पर कारपोरेट जगत ने जहॉ एक ओर जनता को स्वप्न दिखाएँ, वहीं शासन के स्तर पर यह जगत सरकारें चला रहा है।

कारपोरेट जगत का अधिकार पहले केवल थोक बाज़ार पर था परन्तु अब उसने खुदरा बाज़ार पर भी अधिकार कर लिया है ''दुनिया के सबसे बड़े रिटेल या खुदरा मार्केट को संगठित कर उसका रस खींचने के लिए टाटा, आई.टी.सी. और रिलायंस ही नहीं अमेरिका की वालमार्ट जैसी कम्पनियॉ तक कूद पड़ी हैं क्योंकि दस साल के अन्दर–अन्दर भारत का यह रिटेल सेक्टर 65 सौ करोड़ रूपये का हो जाएगा।''1 औरतें अब कॉरपोरेशन जगत से प्रभावित होकर आलू–गोभी तक एयरकंडीशन सुपर मार्केट से फोन पर घर बैठे मंगवा रही है और वह भी मोहल्ले के सब्जी वाले से सस्ती और ताज़ा क्योंकि यदि आज इंडस्ट्री में कोई तूफान है तो वह है रिटेल इंडस्ट्री ।

कारपोरेट जगत में शुद्ध व्यवसायिकता का प्राधान्य है। इसमें महत्त्वपूर्ण चीजें संवेदना, मनष्यता, नैतिकता और सामाजिकता छूटती जा रही है। जनता से इसका रिश्ता मात्र धन का है। उपन्यास का एक पात्र के.वी. दूसरे पात्र गुरूचरण से बातचीत में उसकी कंपनी के तथ्य को इस प्रकार उधेड़ देता हैः ''अरे यार तुम्हारी मल्टीनेशनल कंपनी इंडिया में क्या बेचती है ? अरे क्या नाम है, भूल गया मैं क्या नाम है तुम्हारे प्रोडक्ट का ? गुरूचरण ने धीरे से कहा 'पावरिक्स'। कितना बेचते हो एक साल में ? दो सौ करोड़ का ? चार सौ करोड़ का ? और उसमें क्या है ?थोड़ी सी चीनी, थोड़ा सा आटा, थोड़ा सा फ्लेवर – यही तो ?उसे पिला–पिलाकर तुम इस देश का क्या भला कर लोगे। बेचारा गरीब मर–मर कर खरीदेगा कि पावरिक्स उसे पावरफुल बना देगा ..... अरे बेटा, दाल–भात खा प्रभु के गुण गा। ये पावरिक्स किसी को ताकत नहीं देगा, न गरीब को न अमीर को। यह तो खाली गुरूचरण की मल्टीनेशनल कंपनी को ताकत देगा।''2

कॉरपोरेशन जगत में हो रहे घोटालों ने सरकारी अर्थ तंत्र को भी खोखला कर दिया है। बैंकों की आर्थिक दशा है, कॉरपोरेट भ्रष्टाचार के विषय में अरविन्द मोहन का कथन है ''कॉरपोरेट जगत या पूंजीपति वर्ग की तरफ से काम निकलवाने, सौदे करने, मुनाफा करने और बाज़ार में दूसरों को पछाड़ने के लिए उल्टे सीधे तरीके अपनाने का चलन नया नहीं है, बी.एस.एन.एल., एम.टी.एन.एल. की हालत खस्ता है और प्राइवेट फोन ऑपरेटर विदेशों की कम्पनियॉ खरीद रहे हैं और करोड़ों का घोटाला कर रहे हैं।''2

कॉरपोरेट जगत ने देह–संदर्भ और स्वास्थय दोनों को केन्द्र में रख कर व्यावसायिकता का आश्रय लिया है। आम आदमी के घर में भी सौंदर्य उत्पाद प्रवेश कर गए हैं, पहले जहॉ घरेलू वस्तुओं बेसन, तेल, नीम आदि या बाज़ार से सस्ती दर पर खरीद काजल आदि का प्रयोग किया जाता था वहीं अब मॅहगे उत्पादों पर दृष्टि गड़ी रहती है। कॉरपोरेट जगत ने ''इस पोस्टल–ग्लोबल दुनिया में जवान दिखना और वजन घटाना अरबों डालरों का कारोबार है..... घर बैठे मालिश करने वाला तकिया आ जाए, सेक करने वाली बिजली की थैली आ जाए, बाल उगाने का लोशन आ जाये, गोरा करने की क्रीम आ जाए तो और क्या चाहिए ऊपर से कम दामों की गारंटी टी.वी. दे रहे हैं।''4

कॉरपोरेट जगत में विज्ञापन की महत्वपूर्ण भूमिका है डॉ. जगदीश्वर चतुर्वेदी का कथन है – ''बहुराष्ट्रीय कंपनियों की आय का प्रमुख स्रोत विज्ञापन है। विज्ञापन का पूॅजीवाद बाज़ार के विकास से अविभाज्य सम्बन्ध है। विज्ञापन को पूंजीबाद की संजीवनी भी कह सकते हैं।''5 उपन्यास का पात्र भट्ट अपने आइडियाज से विज्ञापन एजेंसी को इतना सफल बना देता है कि वह कम्पनी ''मिरैकल एडवरटाइजिंग कम्पनी'' के नाम से प्रसिद्ध हो जाती है। भट्ट द्वारा बनाया गया विज्ञापन अन्य कंपनियों की बिक्री को कम कर देता है। भट्ट के विज्ञापन के केन्द्र में दक्षिण भारतीय फ़िल्मों का हीरो रविकान्त है। उसकी तस्वीर को देखकर ही लोग उत्पाद की ओर आकृष्ट होते है क्रोंकि ''कौन नहीं जानता कि एक आम दक्षिण भारतीय के लिए उसका हीरो कोई इष्ट देवता से कम नहीं। क्योंकि बोट उसी को देते हैं। बड़ी–बड़ी मालाएं उसके कट–आऊट को पहनाते आएं हैं।6 रविकान्त अगर इस योजना में नहीं होता तो कंपनी को पॉच करोड़ की सेल नहीं होती ।

बड़ी–बड़ी कम्पनियाँ विज्ञापनों पर बढ़–चढ़ कर पैसा खर्च करती हैं क्योंकि विज्ञापन व्यवसाय को सफल बनाता है। अलका सरावगी कॉरपोरेट जगत और विज्ञापन को एक दूसरे का पूरक समझती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कॉरपोरेशन जगत व्यावहारिक दृष्टि से खुदरा बाज़ार नियंत्रित कर रहा है। इस जगत में होने वाले घोटाले इसी दृष्टि का परिणाम हैं। यह जगत भारतीय उपभोक्ता के सौंदर्य के प्रति झुकाव की मानसिकता को भुनाने में लगा हुआ है और यह सारा कार्य विज्ञापनों के माध्यम से हो रहा है।

सन्दर्भः–

(1) एक ब्रेक के बाद, पृ. 72; (2) वही, पृ. 91–92; (3) शुक्रवार पत्रिका 02 से 8 सितम्बर 2011, पृ. 28; (4) एक ब्रेक के बाद, पृ. 72; (5) कल के लिए मार्च–जून, 2007, पु. 13; (6) एक ब्रेक के बाद, पृ. 71 ।

सीमा चौहान
शोध अध्येता, हिन्दी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

सूचना का अधिकार

प्रशासन में पारदर्शिता (Transparency) अपनाने तथा आम आदमी को प्रशासन द्वारा सूचना प्रदान करने के लिए विश्व भर में सूचना के अधिकार की मांग लंबे समय से उठाई जाती रही है। लोकतंत्र में सरकार की सुरक्षा तथा प्रतिष्ठा बहुत सीमा तक स्वच्छ, कुशल तथा पारदर्शी प्रशासनिक तंत्र पर निर्भर करती है। भारत का संविधान देश के नागरिकों को भाषा एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करता है, किन्तु जानने का अधिकार इसमें सम्मिलित नहीं रहा है। सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो बिना सूचना या जानकारी के अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का क्या औचित्य है। वर्तमान युग में तो सूचना ही जीवन का प्राण है। सूचना के अधिकार को वैशिवक स्तर पर प्रायः 'Freedom of information', 'Access to information', 'Public information', 'Code on access to information' इत्यादि नामों से भी जाना जाता है।

हमारे देश में सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 दिनांक 12 अक्टूबर 2005 से सम्पूर्ण भारत (जम्मू व कश्मीर को छोड़ कर) में लागू हो गया है। जम्मू–कश्मीर कैडर के पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी वजाहत हबीबुल्ला देश के प्रथम मुख्य सूचना आयुक्त बनाए गए ।

सूचना का अधिकार (RTI) का उद्देश्य :–

इस कानून का उद्देश्य सरकारी महकमों की जवाबदेही तय करना और पारदर्शिता लाना है ताकि भ्रष्टाचार पर अंकुश लग सके। यह अधिकार जनता को ताकतवर बनाता है। इसके लिए सरकार ने केंद्रीय सूचना आयोग और राज्य सूचना आयोगों का गठन भी किया है। सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के अनुसार ऐसी जानकारी जिसे संसद या विधानमंडल सदस्यों को देने से इंकार नहीं किया जा सकता, उसे किसी आम व्यक्ति को देने से भी इंकार नहीं किया जा सकता। इसलिए अगर आपके बच्चों के स्कूल के टीचर अक्सर गैर–हाजिर रहते हों, आपके आसपास की सड़कें खराब हालत में हों, सरकारी अस्पतालों या हेल्थ सेंटरों में डाक्टर या दवाइयॉ न हों, अफसर काम के नाम पर रिश्वत मांगे या फिर राशन की दुकान पर राशन न मिले तो आप सूचना के अधिकार यानि RTI के तहत ऐसी सूचना पा सकते हैं। सिर्फ भारतीय नागरिक ही इस कानून का फ़ायदा ले सकते हैं। इसमें निगम, यूनियन, कंपनी वगैरह को सूचना देने का प्रावधान नहीं है क्योंकि ये नागरिकों की परिभाषा में नहीं आते। अगर किसी निगम, यूनियन, कंपनी या एन जी ओ का कर्मचारी या अधिकारी RTI दाखिल करता है तो उसे सूचना दी जाएगी, बशर्ते उसने सूचना अपने नाम से मांगी हो, निगम या यूनियन के नाम पर नहीं। हर सरकारी महकमें में एक या ज्यादा अधिकारियों को सूचना अधिकारी (पब्लिक इंफोर्मेशन आफिसर यानि पी आई ओ) के रूप में नियुक्ति करना जरूरी है। आम नागरिकों द्वारा मांगी गई सूचना को समय पर उपलब्ध कराना इन अधिकारियों की जिम्मेदारी होती है। नागरिकों को डिस्क, टेप, वीडियो कैसेट या किसी और इलेक्ट्रानिक या प्रिंटआउट के रूप में सूचना मांगने का हक है, बशर्ते मांगी गई सूचना उस रूप में पहले से मौजूद हो। रिटेन्शन पीरियड यानि वक्त तक रिकार्ड सरकारी विभाग में रखने का प्रावधान हो, उतने वक्त तक की सूचना मांगी जा सकती है।

सूचना का अधिकार RTI का दायरा :–

इसके दायरे में राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राज्यपाल और मुख्यमंत्री दफ्तर इसके अलावा संसद, विधानमंडल,

चुनाव आयोग, सभी अदालतें, तमाम सरकारी दफ्तर सभी सरकारी बैंक, सभी सरकारी अस्पताल, पुलिस महकमा, सेना के तीनों अंग, पी.एस.यू. सरकारी बीमा कंपनियॉं, सरकारी फोन कंपनियॉं, सरकार से फंडिंग पाने वाले एन.जी.ओ. इत्यादि ।

सूचना का अधिकार RTI का कानून इन पर लागू नहीं होताः–

किसी भी खुफिया एजेंसी की वे जानकारियाँ, जिनके सार्वजनिक होने से देश की सुरक्षा व अखंडता को खतरा हो, दूसरे देशों के साथ भारत से जुड़े मामले थर्ड पार्टी यानि निजी संस्थाओं संबंधी जानकारी, लेकिन सरकार के पास उपलब्ध इन संस्थाओं की जानकारी को संबंधित सरकारी विभाग के जरिये हासिल कर सकते हैं। प्राइवेट फोन कंपनियों की जानकारी संचार मंत्रालय के जरिये ली जा सकती है। स्कूल–कालेज सरकारी सहायता प्राप्त प्राइवेट स्कूल भी इसके दायरे में आते हैं। सरकारी सहायता नहीं लेने वाले स्कूलों पर यह कानून लागू नहीं होता, लेकिन शिक्षा विभाग के जरिए उनकी जानकारी भी ली जा सकती है। कालेजों के मामले में भी यही नियम है।

सूचना का अधिकार RTI का प्रयोग कैसे करें ?

संबंधित विभागों के पब्लिक इन्फार्मेशन आफिसर को एक ऐप्लीकेशन (प्रार्थना पत्र) देकर इच्छित जानकारी मांगी जा सकती है। सरकार ने सभी विभागों में एक जनसूचना अधिकारी यानि पी.आई.ओ. की नियुक्ति की है। सूचना प्राप्त करने के लिए सादे कागज़ पर हाथ से लिखी हुई या टाइप की गई ऐप्लीकेशन के जरिए संबंधित विभाग से जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ऐप्लीकेशन के साथ 10 रुपए की फीस भी जमा करानी होती है। फीस नकद, डिमांड ड्राफ्ट या पोस्टल आर्डर से दी जा सकती है। डिमांड ड्राफ्ट या पोस्टल आर्डर संबंधित विभाग (पब्लिक अथारिटी) के अकाउंट आफिसर के नाम होना चाहिए। डिमांड ड्राफ्ट के पीछे और पोस्टल आर्डर में दी गई जगह पर अपना नाम और पता जरूर लिखें। पोस्टल आर्डर किसी भी पोस्ट आफिस से खरीद सकते हैं। सूचना लेने के लिए RTI एक्ट में ऐप्लीकेशन फीस के साथ एक्स्ट्रा फीस का प्रोवीज़न है। गरीबी रेखा के नीचे की कैटेगरी में आने वाले आवेदक को किसी भी तरह की फीस देने की जरूरत नहीं है। इसके लिए उसे अपना बी.पी.एल. सर्टिफिकेट दिखाना होगा। उसकी फोटो कापी लगानी होगी। अगर सूचना अधिकारी आपको समय पर सूचना उपलब्ध नहीं करा पाता और 30 दिन की समय सीमा गुजरने के बाद डाक्यूमेंट उपलब्ध कराने के नाम पर अतिरिक्त धनराशि जमा कराने के लिए कहता है तो गलत है। ऐसे में अधिकारी आपको मुफ्त डाक्यूमेंट उपलब्ध कराएगा, चाहे उनकी संख्या कितनी भी हो।

सूचना के अधिकार के तहत मांगी गई जानकारी 30 दिन में मिल जानी चाहिए। जीवन और सुरक्षा से संबंधित मामलों में 48 घंटों में सूचना मिलनी चाहिए जबकि थर्ड पार्टी यानि प्राइवेट कंपनियों के मामले में 45 दिन की लिमिट है। ऐसा न होने पर संबंधित विभाग के संबंधित अधिकारी पर 250 रुपए रोजना के हिसाब से 25 हजार रुपए तक जुर्माना हो सकता है।

<u>अपील का अधिकार</u> : अगर आवेदन को तय समय सीमा में सूचना मुहैय्या नहीं कराई जाती या वह दी गई सूचना से संतुष्ट नहीं होता है तो वह प्रथम अपील अधिकारी के सामने अपील कर सकता है। प्रथम अपील के लिए कोई फीस नहीं है। अपनी ऐप्लीकेशन के साथ जन सूचना अधिकारी के जबाव और अपनी पहली ऐप्लीकेशन के साथ–साथ ऐप्लीकेशन से जुड़े दूसरे दस्तावेज़ अटैच करना जरूरी है। ऐसी अपील सूचना

उपलब्ध कराए जाने की समय सीमा के खत्म होने या जनसूचना अधिकारी का जबाव मिलने की तारीख से 30 दिन के अंदर की जा सकती है। अपील अधिकारी को अपील मिलने के 30 दिन के अंदर या खास मामलों में 45 दिन के अंदर अपील का निपटान करना जरूरी है।

सेकंड अपील : अगर आपको पहली अपील दाखिल करने के 45 दिन के अंदर जबाव नहीं मिलता या आप उस जबाव से संतुष्ट नहीं हैं तो अगले 45 दिनों में राज्य सरकार की पब्लिक अथारिटी के लिए उस राज्य के स्टेट इन्फार्मेशन कमीशन से या केन्द्रीय प्राधिकरण के लिए सेंट्रल इन्फार्मेशन कमीशन के पास दूसरी अपील दाखिल कर सकते हैं। सूचना के अधिकार एक्ट के तहत सूचना पाने की आपकी रिक्वेस्ट ठुकरा दी जाए या आधी–अधूरी जानकारी दी जाए तो आप केंद्रीय सूचना आयोग के इस पते पर : सेंट्रल इन्फार्मेशन कमिशनर, अगस्त क्रांति भवन, भीकाजी कामा प्लेस, नई दिल्ली–110077, फोन नंवर 011–26161137 पर अपील कर सकते हैं। आर.टी.आई. (राइट टू इन्फार्मेशन) यानि सूचना का अधिकार ने आम लोगों को मजबूत और जागरूक बनाने में बड़ी भूमिका निभाई है। **जम्मू–कश्मीर** को छोड़कर यह कानून देश के सभी हिस्सों में लागू है।

डॉ. आर.एल. मीना
हिंदी प्राध्यापक,
हि.शि.यो., रा.वि.,गृ.मं., जम्मू

सिर्फ तुम

सिर्फ तुम हो मेरे
न हवा हो, न दिशा हो,
न धरती आसमां की सीमा हो,
कहीं जाने की जल्दी न हो,
किसी के आने का इन्तजार न हो।

कोई गम न हो
न कोई खुशी हो।
बस ऐसा भी एक दिन हो।
न कोई सवाल हो,
न कोई जवाब हो।

न कोई गिला हो,
न कोई शिकायत हो।
कुछ पाने की चाहत न हो,
कुछ खोने का गम न हो ।

बस हो तो क्या हो,
सिर्फ तुम हो, और कुछ भी न हो ।

संयोगिता शर्मा,
एम.ए.हिन्दी
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

पाश्चात्य काव्य-शास्त्र

वर्जीनिया वूल्फ कृत 'अपना कमरा' (ए रूम ऑव वन्ज़ ओन) में नारी लेखन का इतिहास

वर्ष 1929 में प्रकाशित वर्जीनिया वुल्फ की पुस्तक 'ए रूम ऑव वन्ज़ ओन' से पाश्चात्य काव्य–शास्त्र में नारी अधिकारवादी आलोचना का आरंभ माना जाता है। इस पुस्तक में वुल्फ महिलाओं द्वारा लेखन का सम्पूर्ण इतिहास प्रस्तुत करने की अपेक्षा इतिहास के उन बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करती है जहां पर लेखन के लिए उपयुक्त या अनुपयुक्त परिस्थितियां उपस्थित रही हैं। सन् 1400 में अंग्रेजी के कवि चोसर की मृत्यु के तुरन्त बाद के समाज में औरत की स्थिति से वह अपना विमर्श आरम्भ करती है। वह प्रोफेसर ट्रेविलियन द्वारा लिखित इंग्लैंड के इतिहास में से कुछ अंश उद्धरित करते हुए स्त्री की दशा का प्रत्यक्षीकरण कराती है। उस समय 'पत्नी को पीटना मर्द का मान्यता प्राप्त अधिकार था और इसका चलन बिना किसी लज्जा के ऊपरी और निचले वर्गों में एक समान था.... उसी तरह जो लड़की अपने मां–बाप की पसंद के दूल्हे से शादी करने से इंकार कर देती थी उसे ताले में बंद किया जा सकता था, पीटा जा सकता था और फर्श पर पटका जा सकता था और इससे जनमत को कोई धक्का नहीं पहुंचता था। शादी व्यक्तिगत लगाव से नहीं धनलोलुपता से तय होती थी खासकर शूरवीर ऊपरी वर्गों में .... सगाई तभी हो जाती थी तब वर–वधु में कोई एक या दोनों पालने में ही होते थे और शादी तब जब वे आया के संरक्षण से मुश्किल से निकले होते थे।'[1] अगला संदर्भ स्टूआर्ट्स के समय का है जब औरतें अपने लिए पति का चुनाव नहीं कर सकती थीं। पति तय हो जाने के पश्चात कानून और परम्परा के अनुसार पति पत्नी का मालिक हो जाता था। ऐसी परिस्थितियों में किसी महिला का लेखन की ओर प्रवृत्त होना असंभव था।

ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन करने पर वुल्फ यह पाती है कि कविता में चित्रित स्त्री व्यक्तित्व और चरित्र से संपन्न है। काव्य में वह प्रकाश स्तंभ की तरह जल रही है। कथा साहित्य में राजाओं और विजेताओं के हृदय पर उसका साम्राज्य है, लेकिन वास्तविक जीवन में उसकी कथा भिन्न है। 'वह उस किसी भी लड़के की गुलामी करती है जिसके मां–बाप उसकी उंगुली में एक अंगूठी ठूंस देते हैं।' साहित्य में वह गंभीर विचारों से संपन्न और प्रेरक है जबकि वास्तविक जीवन में वह अनपढ़, कठिनाई से बोल पाने वाली और अपने पति की संपत्ति है; उसका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं है। इतिहास में ऐसी औरतों का जिक्र नहीं है जिनके पास पूंजी के रूप में 'दिमाग और चरित्र हो, उन्होंने महान आंदोलनों में हिस्सा लिया हो, जो एक साथ मिलकर अतीत के प्रति इतिहासकार के दृष्टिकोण का निर्माण करते हैं।'

वुल्फ शेक्सपियर के समय को भी प्रतिभा संपन्न महिला लेखकों के होने की दृष्टि से अनुपयुक्त घोषित करती है। वह किसी वृद्ध व्यक्ति का उल्लेख करती हैं जिसने यह कहा था कि 'भूत, वर्तमान और भविष्य में किसी भी औरत के लिए शेक्सपियर की प्रतिभा को प्राप्त करना असंभव है।'[4] वुल्फ का तर्क है कि शेक्सपियर के समय में शेक्सपियर जैसी प्रतिभा के किसी औरत में होने की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि शारीरिक श्रम करने वालों, अशिक्षितों और दासों में शेक्सपियर जैसी प्रतिभा उस समय उत्पन्न नहीं होती थी। अगर शेक्सपियर जैसी प्रतिभा मज़दूर वर्ग में न भी रहती हो तो एक प्रकार की प्रतिभा औरतों में अवश्य रही है जिसका परिणाम ऐमिली ब्रोंटे या राबर्ट बर्न्स जैसी लेखिकाएँ हैं। लोकगीतों और लोकगाथाओं को जन्म देनी वाली अज्ञात महिलाएँ भी प्रतिभा संपन्न रही हैं।

सोलहवीं शताब्दी, जो शेक्सपियर का भी समय उसमें औरत की दशा को देखते हुए उसका आकलन है

कि अगर सौलहवीं शताब्दी में कोई औरत अत्यधिक प्रतिभाशाली होती तो उसका अंत बहुत दुखत होता; वह या तो पागल हो गई होती या स्वयं को गोली मार कर उसे आत्महत्या करनी पड़ती या वह गांव के बाहर आधी डायन या आधी जादूगरनी की संज्ञा प्राप्त कर अकेली झोंपड़ी में जीवन बिताती । इस आकलन की पृष्ठभूमि में उस समय की स्त्री–विरोधी मानसिकता है जो किसी महिला द्वारा कविता लिखे जाने के तथ्य को सहज मान कर नहीं पचा सकती थी। उस समय की स्त्री परिवार और लोगों के विरोध और लेखन की सहज प्रवृत्ति के बीच संघर्ष के कारण मानसिक संतुलन खो देती। सौलहवीं शताब्दी में कोई स्त्री उन्मुक्त जीवन नहीं बिता सकती थी, अगर वह ऐसा करती तो तनाव और दुविधा उसे रुग्ण बना देते; इसका प्रभाव उसकी कल्पना शक्ति पर पड़ता और वह श्रेष्ठ साहित्य न लिख पाती। इसके अतिरिक्त धार्मिक महत्व वाली यौन–शुचिता स्त्री के लिए अलग प्रकार समस्या रही है। करेर बेल, जार्ज इलियट और जार्ज सैंड ये सभी नाम पुरुषों के हैं। इन नामों से जो रचनाएँ प्रकाशित हुई वे महिलाओं द्वारा रची गई थीं। महिलाओं द्वारा पुरुषों के नाम का अवलम्ब लेने का कारण वुल्फ यौन–शुचिता के अवशेषों को मानती है। साथ ही पश्चिम में यह धारणा भी रही है कि औरतें गुमनामी में रहें, ख्याति और मान–सम्मान प्राप्त न करें। इस रूढ़ि को वहां के पुरुषों ने बढ़ावा दिया। साथ ही सौलहवीं शताब्दी में औरत की मानसिक स्थिति कविता लिखने के लिए उपयुक्त नहीं थी।

सत्रहवीं शताब्दी में लेडी विंचिलसी कवयित्री के रूप में उभर कर सामने आती है। वह कविता इसलिए लिख पाईं कि वह किसी साधारण परिवार संबंधित नहीं थी; वह कुलीन थी। उसकी कविताओं में महिलाओं की स्थिति के प्रति क्षोभ और महिला लेखक के प्रति सामाजिक दृष्टि की झलक स्पष्ट दिखाई देती हैः

मेरा लेखन निंदित है और कार्य हमारा समझा जाता
अनुपयुक्त बेवकूफी या फिर गलती एक ढिठाई वाली[5]

लेडी विंचिलसी का जिक्र करते हुए वुल्फ इस बात को नहीं भूलती कि लोगों का कहना है कि पोप या ग्रे ने कहा कि इस औरत को लिखने की खुजली है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अगर पुरुष लेखकों की कुलीन लेखक महिला के प्रति ऐसी धारणा हो सकती है तो साधारण परिवार से संबंधित महिला लेखक के प्रति साधारण लोगों की क्या प्रतिक्रिया रही होगी। वुल्फ इस परिणाम पर पहुंचती है कि कोई भी विवेकवान और शिष्ट औरत पुस्तक नहीं लिख सकती थी। वह केवल पत्र लिखती थी। वुल्फ डोरोथी नाम की महिला के पत्रों की चर्चा में यह साक्ष्य ढूंढ लेती है कि उसमें लेखन की प्रतिभा थी शायद सामाजिक भय ने उसे लेखक नहीं बनने दिया।

अठारहवीं शताब्दी में औरतों द्वारा लेखन के मार्ग पर एफ्रा बेन महत्वपूर्ण मोड़ पर खड़ी दिखाई देती है। एफ्रा बेन, जीवंत मध्यवर्गीय औरत पुरुषों के साथ उन्हीं की तरह कार्य करती दिखाई पड़ती है; अपनी वक्तृत्वकला के बल पर वह जीवन–निर्वाह करने में सफल हो सकी। उसकी कृतियों से यह संभावना उत्पन्न हुई कि औरतों का मस्तिष्क मुक्त होगा और उन्हें लिखने के लिए स्वतंत्र वातावरण प्राप्त होगा। एफ्रा बेन ने यह सिद्ध किया कि औरतों के लिए लेखन मूर्खता और दिमाग़ खराब होने का चिन्ह नहीं रह गया है। अठारहवीं शताब्दी तक अनेक औरते अनुवाद करके या घटिया उपन्यास लिखकर जेब खर्च का इंतजाम करती रहीं।

अठारहवीं शताब्दी के अंत में औरतों द्वारा लेखन के क्षेत्र में परिवर्तन जेन आस्टेन, एमिली ब्रोंटे, शार्लोट बोंटे और जार्ज इलियट के लेखन द्वारा आता है। वुल्फ़ का तर्क है कि ये औरतें अच्छा लेखन इसलिए कर पाई, कि इनके समक्ष लेखन की परम्परा थी। जेन आस्टेन कृत 'प्राइज एण्ड प्रीज्युडिस' (1813), 'एम्मा' (1816), एमिलि ब्रोंटे कृत 'वूदसिंग हाइट्स' (1847), शार्लोट ब्रोंटे कृत 'विलेट' (153) और जार्ज इलियट कृत 'मिडिल

मार्च' (1871) जैसी कृतियां, जैसाकि टी.एस.इलियट ने भी कहा था, अचानक और अकेले में उत्पन्न न हो कर परम्परा के सांझा चिन्तन की उपज होती हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक औरतों द्वारा काफी मात्रा में लेखन हो चुका था। कुछ अपवादों को छोड़ कर यह सारा लेखन उपन्यास के रूप में हमारे समक्ष आता है। वुल्फ का अनुमान है कि उस ज़माने में मध्यवर्गीय परिवारों में एक ही बैठक हुआ करती थी। यह स्थिति कविता लिखने के अनुकूल नहीं थी। उसमें उपन्यास ही लिखा जा सकता था। वुल्फ के इस अनुमान के पीछे उसका अपना अनुभव है। बीसवीं शताब्दी के जिस काल बिन्दु पर वह थी उसमें भी साधारण परिवार की सभी औरतों के लिए अलग कमरा एक स्वप्न था। वुल्फ अपने अध्ययन के बल पर स्थापित करती हैं कि इस शताब्दी में सभी महिला उपन्यासकार बेहतर लेखक और व्यवसाय में दक्ष हो सकती थीं अगर उन्हें जीवन के व्यावहारिक अनुभव प्राप्त हुए होते। बंद कमरे में जीवन के अनुभव प्राप्त नहीं किए जा सकते। उन्हें प्राप्त करने के लिए स्वतंत्रता का होना आवश्यक है। जेन आस्टेन, ब्रोंटे बहिनों और जार्ज इलियट को उतने ही अनुभव प्राप्त हुए जितने एक पादरी के घर के भीतर रहकर प्राप्त हो सकते थे। महिला लेखन को दूसरा धक्का महिला लेखकों के भीतर के क्रोध ने पहुंचाया। उपन्यास में अनेक प्रकार के विरोधी और विपरीत मनोभाव होते हैं और जीवन का अजीवन के साथ टकराव होता है।[6] उपन्यास का जटिल ढांचा उसे आकर्षण प्रदान करता है। जटिल ढांचें में ईमानदारी होती है जो सत्य के प्रति लेखक के अर्जित विश्वास से उत्पन्न होती है। इसका अनुभव वह पाठक को भी कराता है। इसी ईमानदारी को महिला लेखकों के भीतर के क्रोध का शिकार होना पड़ा। इस रूप में उपन्यास विधा पर लिंग का प्रभाव पड़ा। उपन्यास विधा पर लिंग का प्रभाव दूसरे रूप में भी पड़ा। उपन्यास में वास्तविक जीवन के मूल्य होते हैं और औरतों के मूल्य पुरुषों के मूल्यों से अक्सर भिन्न होते हैं। उसका मानना है कि औरतों द्वारा लिखा गया उपन्यास 'ऐसे मस्तिष्क का निर्मिति है जो सीधी राह से थोड़ा हटा हुआ था।''[7] जेन आस्टेन और एमिली ब्रोंटे जैसी महिला कथाकारों की उपलब्धि यह है कि वे पितृसत्ता द्वारा खड़ी की गई तमाम बाधाओं, उपदेशों और प्रभावों के बावजूद औरतों की तरह लिख सकीं। उनकी उपलब्धि यह भी है कि उन्होंने नारी–प्रकृति में ढले हुए वाक्य–विन्यास को विकसित किया।

वुल्फ के अपने समय में औरतें उपन्यास के अतिरिक्त ग्रीक पुरातत्व, इतिहास, सौंदर्य शास्त्र, आलोचना, जीवनी, यात्रा वृत्तांत, शोध, दर्शन आदि विषयों की पुस्तकें लिख रही थीं। वुल्फ ने यह देखने का प्रयत्न किया कि मेरी कारमाइकेल का पहला उपन्यास 'लाइफ्स एडवेंचर' पूर्ववर्ती लेखिकाओं से किन अर्थों में भिन्न है और किन अर्थों में समान है क्योंकि उसकी धारणा है कि हमें प्रत्येक पुस्तक की अलग से समीक्षा करने की आदत है, लेकिन वास्तव में पुस्तकों में निरन्तरता प्राप्त होती है। इस उपन्यास में भावुकता से बचने की कोशिश की गई है, इसका कारण यह रहा कि औरतों क`लेखन पर प्रायः भावुक होने का दोष लगाया जाता रहा है। उपन्यास में तेजस्विता और तथ्यों का आधिक्य है । भाषा के स्तर पर उसने जेन आस्टेन के वाक्य विन्यास को तोड़ा है, क्रम भंग किया है और उसने औरतों के परस्पर सबंधों को पारम्परिक रूप से थोड़ा–सा हट कर नए रूप में भी चित्रित किया। पारम्परिक चित्रण में उनके बीच सम्बन्ध सरलीकृत थे, ईर्ष्या के थे, मित्रता के थे, मां–बेटी के थे। जेन आस्टेन से पहले तक की कथाओं में महान औरतें वैसी ही थीं जैसी वे पुरुषों द्वारा देखी जाती थीं या वे पुरुषों के साथ संबंधों के माध्यम से देखी जाती थीं। पहली बार कारमाइकेल ने औरत के साथ औरत के संबंध को औरत के माध्यम से देखा। उनके उपन्यास के वाक्य हैं – 'कलो ओलीविया को चाहती थी। वे दोनों प्रयोगशाला में साथ काम करती थीं।'[8] कलो और ओलीविया के संबंध नए धरातल पर खड़े हैं। एक स्त्री का दूसरी स्त्री को चाहने का अर्थ है कि उनकी परस्पर मित्रता अधिक टिकाऊ और बहुरंगी है। वुल्फ इन

संबंधों में जो मानसिक स्थिति देखती है उसे 'मन की एकता' कहती है। 'मन की एकता' ऐसी मानसिक स्थिति है जो अत्यधिक सृजनात्मक है। यह ऐसी एकता है जिसमें लिंगों को भिन्न दृष्टि से नहीं देखा जाता।[9] उसकी Androgyny की यह धारणा इस प्रवृत्ति से प्रेरित है कि व्यक्ति में अत्यधिक उल्लास (उमंग) दोनों लिंगों के परस्पर सहयोग से आता है। (Androgyny ग्रीक पारिभाषिक शब्द है। ग्रीक में 'पुरुष' और 'स्त्री' के लिए जो शब्द हैं उनका मिश्रण करके इस शब्द को बनाया गया है। इस पारिभाषिक शब्द को प्लेटों और कॉलरिज से ग्रहण किया गया है।)[10] Androgyny के सिद्धांत के अनुसार हम में से प्रत्येक में दो शक्तियां स्थित हैं– एक नर की दूसरी मादा की। आदमी के मस्तिष्क में नर मादा पर हावी हो जाता है और स्त्री के मस्तिष्क में मादा नर पर हावी हो जाती है। सामान्य और सुखदायक दशा वह है जिसमें दोनों सामंजस्य स्थापित करके रहें। कॉलरिज का शायद यही आशय है जब उसने कहा था कि महान मन Androgynous होता है।

वुल्फ यह अनुभव करती है कि औरतों की सृजनात्मक शक्ति पुरुषों की सृजनातमक शक्ति से भिन्न है। इसका स्रोत वह कठोर अनुशासन है जो शताब्दियों से स्त्रियों पर लादा गया है। इतिहास के जिस बिन्दु पर मेरी कारमाइकेल लिख रही थी वह ऐसा बिन्दु है जहॉ औरत के लिए पुरुष 'विरोधी पक्ष' नहीं रह गए थे। उसे पुरुषों का विरोध करके समय नष्ट करने की आवश्यकता नहीं थी। घर से बाहर की दुनिया जहां हमें जीवन के अनुभव प्राप्त होते हैं वहां तक जाने पर कोई कठोर अनुशासन नहीं था। लेखिकाओं के पास कुछ वे सहुलियतें भी थीं जो उनसे पहले की लेखिकाओं के पास नहीं थीं। मेरी मारमाइकेल के पास अनुभव थे जिनके बल पर वह साधारण और छोटी लगने वाली वस्तुओं का भी चित्रण कर सकी। 'उसके पास अपनी पूर्ववर्तियों, लेडी विंचिलसी, शार्लोट ब्रोंटे, एमिली ब्रोंटे, जेन आस्टेन और जार्ज इलियट की तरह प्रकृति से प्रेम, ज्वलंत कल्पना शक्ति, आदिम कवित्व, बुद्धिमतापूर्ण वक्तृता, चिंतायुक्त समझदारी नहीं है; वह डोरोथी आसबोर्न की तरह लयबद्ध और गरिमायुक्त लेखन नहीं कर'[11] सकी लेकिन उसने एक औरत की तरह लिखा, औरत जो लेखन के समय यह भूल जाती है कि वह लिंग दृष्टि से स्त्रीलिंग है; इसी कारण उसका लेखन विचित्र लिंगीय गुणों से संपन्न हो पाया। औरत में संवेदना की बहुलता और इन्द्रियबोध की परिष्कृति तभी अर्थवान है जब इनकी सहायता से हुआ लेखन गंभीर, स्वाभाविक और अमिट हो।

वर्जीनिया वुल्फ अपने समय को पकड़ती है तो पाती है कि 'तमाम बिशिप और डीन, तमाम डॉक्टर और प्रोफेसर, तमाम पितृसत्तावादी और शिक्षक उसे (स्त्री को) चिल्ला कर चेतावनी और सलाह दे रहे हैं। तुम यह नहीं कर सकती और तुम वह नहीं करोगी। केवल फेलो महाशयों और विद्वानों को घास पर चलने की इजाज़त है। औरत को किसी अनुशंसा–पत्र के बगैर प्रवेश नहीं मिल सकता– वुल्फ के अपने समय में कोई औरत किसी बड़े व्यवसाय, थलसेना, जलसेना, व्यापार, राजनीति और कूटनीति के क्षेत्र में प्रवेश नहीं पा सकती थी। इतिहास के इस बिन्दु पर खड़ी औरत को वह आह्वान करती है कि वह किसी भी चीज का नोटिस लिए बिना परीक्षा की घड़ी को पार कर जाए। न तो वह पुरुष का विरोध करे, न किसी को गाली दे, न हंसे, इस प्रकार अपना ध्यान औरत पर से काम पर केन्द्रित न करे। वह संभावना व्यक्त करती है कि अगर औरत पर से काम का बोझ आधा कर दिया जाए, उसे आर्थिक रूप से सृदृढ़ किया जाए और अलग कमरा दिया जाए तो आने वाले सौ वर्षों में वह श्रेष्ठ पुस्तकें लिखने लगेगी और कविता का क्षेत्र जो लगभग उससे छूटा हुआ है उस पर भी अधिकार कर ले तो आश्चर्य नहीं है।

डॉ. अशोक कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

जल

जल ही जीवन, जल से ही हैं वन
जल के बिना, है जलता जीवन
जल से मछली, जल से है घन
जल के बिन, हैं निर्जन से वन
जल के कितने! रूप धरती पर
झरना जल का, बहता झर–झर
धूप बढ़ी, पर वाष्प बनाती
वाष्प उठकर, घन में जाती
घन बरसकर देते पानी
वन ना हो तो सब बे–मानी
नदियां करती हैं मनमानी
ले जातीं हैं सारा पानी
समुद्र भरता है, इस जल से
पर पानी होता, खारा इसमें
काम न आए जो पीने के
सब बेकार, अगर ना जीने दे
जल जीवन का है आधार
इसे न जाने दें बेकार
पेड़ लगाएं, वन बचाएं
जल बचाएं, जल बढ़ाएं
करें सुरक्षित, भविष्य कल का
समझें महत्व, जीवन में जल का।

प्रिया कंवर
के. भू. जल बोर्ड, जम्मू

चिनार का पत्ता

पतझड़ के मौसम में चिनार के
वृक्ष से गिरा हुआ पत्ता,
अपनी व्यथा यदि बता सकता
तो अवश्य ही बता देता,
चिनार–हां, कश्मीर की
प्राकृतिक सुन्दरता का प्रतीक।
वसन्त आने पर
खिल उठते हैं चिनार के पत्ते।
विड़म्बना तो देखिये
खिलता है,
पर अल्प समय के लिये।
पता है इस पल्लव को कि
पतझड़ उसे विनाश की ओर....
सुख से दुःख की ओर .....
प्रकाश से अन्धकार की ओर ले जायेगा।
इस बार–बार के
विनाश–चक्र पर भी,
वह हर वसन्त में जन्म लेता है,
खिलने के लिये,
लोगों को आत्मिक सुख
प्रदान करने के लिये.....
इस आशा में कि शायद
अब की बार पतझड़ न आये ।

राजेन्द्र कुमार चोंगू
कार्यालय महालेखाकार, जम्मू

स्लोग्न - जल बाईसा

जल है गुणों की खान,
धरती की बढ़ाए शान,

स्वच्छ बहे जल – धारा,
स्वस्थ रहे जीवन हमारा,

जल रहेगा,
जीवन बचेगा,

जल है,
जीवन है,

जल बचाओ,
जीवन बचाओ,

जल संचित,

जीवन रक्षित,

जल है जहां,

जीवन है वहां,

जल के संग,

जीवन के रंग,

जल–जीवन की आशा,

सूखा–निराशा ही निराशा,

जल मिलेगा जब तक,

जीवन बचेगा तब तक,

जल की कहानी,

जीवन की कहानी,

जल गुणों की खान,

बचाए हम सबकी जान,

जल ही तो,

हमारा जीवन है,

जल के सहारे,

प्राण हैं हमारे,

जल से पेड़, पेड़ों से जंगल,

सूखे में सबका करते मंगल,

पेड़ों से आती है शुद्ध वायु,

वायु से हमें मिलती है आयु,

पेड़, पानी हैं जीवन–आधार,

बंद करो इन पर अत्याचार,

जंगल संतुलित वर्षा हैं लाते,

हम सबका जीवन हैं बचाते,

जल संपदा, जंगल संग,

खिलता जीवन, भरता रंग,

जल, जमीन, जंगल संरक्षण प्रण हमारा,

पल–पल वारी जाए, इन पर जीवन हमारा,

खुद जागो और दूसरों को जगाओ,

जल, जमीन, जंगलों को बचाओ,

सूखी धरती करे पुकार,

मुझ पर करो यह उपकार,

बहते पानी पर बांध बनाओ,

भूजल पुनर्भरण करो, जलस्तर बढ़ाओ !

चेतन स्वरूप शर्मा,
के.भू. जल बोर्ड, जम्मू

मनुष्य की जीवन यात्रा

प्रत्येक जीव जन्म लेते ही जीवन की यात्रा पर आ जाता है। यों तो जीवात्मा अपने कर्मों की गति के अनुसार एक जीवन से दूसरे में जीवन भ्रमण करती है। जन्म के बाद जब तक जीव का मानसिक/शारीरिक विकास नहीं होता तब तक उसे अपने पुराने जन्मों के बारे में याद रहता है और ज्यों ही जीवात्मा का मानसिक एवं शारीरिक विकास हो जाता है वह अपने पुराने जन्म के बारे में भूल जाता है और संसार के बारे में सुनने एवं समझने लग जाता है। इस प्रकार जीवन यात्रा पर निकल पड़ता है।

श्री सुधांशु जी महाराज कहते हैं कि यह संसार एक पुल है और पुल पार करने के लिए ही होता है। जीवात्मा को संसार रूपी पुल पार करना ही होता है। जीवात्मा पुल पर ठहरने की कोशिश करती है जो कि सर्वथा असंभव होता है।

आम बोलचाल की भाषा में जीव को बंदा बोला जाता है। उदाहरण के लिए ''अरे ये तो भोला बंदा है अथवा ये तो चालाक बंदा है।'' बंदा का अर्थ है, बँधा हुआ है। प्रत्येक जीवात्मा दो बंधनों में बंधी हुई है।

(1) Highness –अंहकार – Ego- अर्थात प्रत्येक जीवात्मा अज्ञानताकश अहंकार में रहती है और हमेशा अपने आप को श्रेष्ठ ठहराने की सत्त कोशिश में लगी रहती है।

(2) Myness – मेरा है यानि ममता Attachment अर्थात प्रत्येक जीवात्मा राग अथवा द्वेश की वजह से किसी न किसी के साथ संलग्न है और सांसारिक नश्वर चीजों के मोह ममता में लिप्त है।

इस प्रकार दो बंधनों में यानि अहंकार एवं मोह में प्रत्येक जीव बंधा हुआ है इसलिए उसे बंदा कहा जाता है।

एक चीज और चमत्कारिक है, वह है जो भी चीजें इस संसार में इन आखों से देखी जाती हैं वे सब नश्वर होती हैं अथवा वे शरीर छोड़ने पर आत्मा के साथ नहीं जा सकती हैं। इसलिए जीवात्मा को इस जीवन यात्रा में सँभल के चलना होता है। यात्रा के दौरान यदि जीव अपने साथ हल्के–फुल्के सामान लेकर यात्रा करें तो यात्रा सुलभ व सरल होती है। ये हल्की–फुल्की चीजे हैं – आध्यात्मिक ज्ञान। आध्यात्म में रहकर कि ''मैं परमधाम का बच्चा हूँ। मेरा असली घर परमपिता परमात्मा के परमधाम में है। इसलिए मैं संसार के अनावश्यक लफड़ों में लिप्त न होकर वैराग्य (Detached) को अपनाते हुए जीवन रूपी यात्रा तय करूं। यात्रा के दौरान यदि हम माया–मोह से मुक्त हों और अहंकार को अपने पास फटकने भी न दें तो हमारी यात्रा सुलभ व सरल हो जाएगी।''

संसार रूपी पुल को पार करने के लिए हमें ज्ञान चक्षु खोलने होते हैं। यात्रा के दौरान जीवात्मा जब सांसरिक चीजों की जकड़ में आ जाती है तो अनायास ही अपने लिए नीच कर्म जोड़ लेती है जैसे ईर्ष्या, द्वेष, ममता, लालच, अहंकार आदि। इसे उदाहरण के साथ समझ सकते हैं।

एक व्यक्ति जम्मू से ग्वालियर की यात्रा रेल द्वारा करता है। व्यक्ति ने सफेद पोशाक पहनी होती है। रेल में यात्रा के दौरान उसके कपड़ों पर धूल–मिट्टी एवं दाग पड़ जाते हैं और जब वह अपने गंतव्य स्टेशन ग्वालियर पहुँचता है तो उसके कपड़े धूमिल–गंदे हो जाते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि कपड़े का

वास्तविक रंग ही बदल गया हो। यदि कपड़े को धो दिया जाए तो कपड़ा पुनः अपने वास्तविक रंग सफेद में हो जाता है।

उसी प्रकार प्रत्येक जीवात्मा वास्तविक रूप से परम पवित्र, शांत, शक्तिशाली, ज्ञानयुक्त सत्य, प्यारी एवं सौभाग्यशाली है लेकिन जीवन यात्रा के दौरान जीव अहंकार एवं ममता में बँधने की वजह से अपने जीवन रूपी चोला अपवित्र, अशांत, कमजोर, जड़, असत्य, क्रूर एवं अभाग्यशाली बना लेता है। जैसे ही ज्ञान रूपी गंगा में जीवन रूपी चोले को धोया जाता है वैसे ही आत्मा पुनः अपने वास्तविक स्वरूप पवित्र, शक्तिशाली, शांत, ज्ञानी, सत्यवादी एवं सौभाग्यशाली स्वरूप प्राप्त कर लेती है।

इस प्रकार संसार रूपी भव सागर को ज्ञान रूपी पुल से पार किया जा सकता है। एक बात चिर सत्य है कि हम अपना भाग्य स्वयं बनाते हैं जो कि हमारे द्वारा निर्मित सोच एवं किए गए कर्मो से बनता है। हम जो भी सोच मन में उत्पन्न करते हैं हमारा दिमाग उसे कर्म में परिणित करता है। यदि कर्म करते समय अनुभव को स्मृति में नहीं रखा जाए तो जीवात्मा गलत कर्म कर बैठती है। कर्मों का फल तो उसे भोगना ही होता है, उसमें भगवान भी मदद करने के लिए असहाय होते हैं।

<u>कर्मों का फल</u>

कर्मो का फल तो जीव को भोगना ही पड़ता है। इसमें ईश्वर भी असहाय होते हैं। इसे भी एक उदाहरण देकर ठीक से समझा जा सकता है। एक माँ–बाप अपने बेटे को सही संस्कार देते हैं और उससे सही कार्यो की अपेक्षा करते हैं। यदि बेटा किसी तरह का गलत कर्म करता है तो माँ–बाप उसे सही मार्ग दिखाते हैं लेकिन संतान गलत मार्ग को ही स्वीकारती है, फिर मॉ–बाप अपने बच्चे की स्वतंत्रता पर अंकुश नहीं लगाते। संतान को फिर उस गलत कर्म का भोग करना ही होता है। फिर मॉ–बाप भी उसमें किसी तरह से सहायता नहीं कर सकते। इस पुनः दूसरे उदाहरण से समझते हैं।

हमें सीख दी गई है कि कभी भी मदिरा का सेवन मत करो वरना शरीर को नुकसान होगा। हम फिर भी मदिरा आदि सेवन कर लेते हैं तो उसका कुप्रभाव भी हमारे ही शरीर को भोगना होता है। इसमें कोई भी दूसरा असहाय होता है। यदि बेटा शराब पीकर शरीर को नुकसान पहुँचाता है तो माँ–बाप उसे माफ तो कर देते हैं, उसे तब भी पहले की तरह ही प्यार करते हैं लेकिन उसके शरीर पर पड़ने वाले कुप्रभावों को वे समाप्त नही कर सकते। कर्म के समय मॉ–बाप ने बच्चे को बताया था कि मदिरा पीने से नुकसान होगा फिर भी संतान को निर्णय लेने की स्वतंत्रता होती है अन्यथा संतान अपने आप को माँ–बाप के चंगुल में दबी–दबी सी अथवा फँसी सी अहसास करेगी।

इसी प्रकार परमपिता परमात्मा भी जीवात्मा को हमेशा प्यार करते हैं चाहे वह सुकर्मी हो अथवा कुकर्मी, लेकिन जीवात्मा को अपने कर्मो के अनुसार फल को भोगना ही होता है उसमें परमात्मा भी कुछ नहीं कर पाते क्योंकि जीव ने स्वयं ही कर्म को चुना होता है।

कई बार हमें बताया जाता है कि भगवान से डरो या भगवान नाराज हो जांएगे। यद्यपि ये संकल्पना कोरी झूठी अथवा भ्रम है। भला परमपिता परमात्मा क्यों अपने संतानों से नाराज होंगे अथवा डराएंगें या दंड देगें। वह तो क्षमा का सागर एवं आशीर्वादों के सागर हैं, फिर भला वे क्यों किसी जीव को कष्ट देंगे बल्कि वे तो अपनी संतान को गले लगाते हैं। जैसे कि संतान को संसार में माँ–बाप लगाते हैं, चाहे फिर संतान कुकर्मी ही क्यों न

हो। वे संतान को माफ कर ही देते हैं, लेकिन संतान द्वारा किए गए कर्मों का फल भोगते समय वे भी असहाय होते हैं। जैसे कि उपर उदाहरण में स्पष्ट किया गया है कि मदिरा सेवन गलत है । बेटे को समझाया लेकिन उसके स्वतंत्रता में बाधा नहीं डाली और बेटे ने मदिरा पीया। मदिरा का शरीर पर पड़ने वाले कुप्रभावों का भोग भी बेटे को ही करना होता है। माँ–बाप तो माफ कर देते हैं और प्यार करते हैं।

किसी भी कर्म की भोगना जीव को चार कारक पूरे होने पर ही भोगना के लिए आते हैं, वे हैंः–

समय, स्थान, द्रव्य एवं साधन । उदाहरण के लिए चाय तभी बनती है जब **स्थान** यानी किचन हो, **समय** हो और **पैसा** हो ताकि **साधन** जुटाए जा सके जैसे दूध, पानी, चीनी, गैस आदि।

कर्मों के भोग को कम कैसे कर सकते हैं :–

कर्मों की भोगना तो जीवात्मा को अवश्य आएगी। यदि जीवात्मा ज्ञान के प्रकाश में आ जाती है अथवा आध्यात्म शक्ति जागृति कर लेती है तो वह परामात्मा से जुड़ जाती है। जब कर्मो की भोगना आती है और यदि जीव ज्ञान से इतनी शक्ति प्राप्त कर लेता है कि भोगना का प्रभाव को सहजता में ही सह लेता है। इस प्रकार पड़ताड़ना नहीं आती है । उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति द्वारा किसी को व्यापार में धोखा देना का फल जब भोगना के रूप में आएगी तो यदि व्यक्ति ज्ञानावस्था में है तो उसे सहर्ष रूप से स्वीकार कर इस प्रकार स्थिति का शक्ति से सामना करेगा कि भोगना कितनी ही बड़ी क्यों न हो छोटी हो जाएगी। हमारे साथ जो भी परिस्थिति सामने आती है हम उसे समभाव से शांत होकर शक्ति से सामना कर सकते हैं। जिससे परिस्थिति हमारी अपनी स्थिति से छोटी हो जाएगी और हम अपनी स्थिति से मजबूत होकर परिस्थिति की भोगना को कम कर सकते हैं।

इस प्रकार जीवात्मा इस संसार रूपी भवसागर को ज्ञान रूपी पुल से आसानी से पार कर सकती है और इस जीवन को और इस जीवन के बाद की स्थिति को अच्छी गति प्रदान कर सकती है।

कैलाश चन्द्र मठपाल
निरीक्षक (अनुवादक), राजभाषा हिंदी कक्ष,

जल संचयन

हमने बात वर्षा जल संचयन करने की मानी है,
कृत्रिम भूजल पुनर्भरण करने की ठानी है,
बावड़ी, कुआं, तालाब, पोखर, जोहड़ का पानी,
जंगल, पेड़–पौधे, खेतों में लाता है हरियाली,
भूजल दोहन, नियम से अपनाओ!
भूजल बचाओ और ज्यादा बचाओ!
आज बचाए पानी ने, कल सबको बचाना है,
बाग–बगीचे, फूलों पर, भंवरों ने गुनगुनाना है,
परागण होगा इससे, फसलें होंगी भरपूर,
निर्धनता, मजबूरी, भूख, लाचारी होगी दूर,
आओ! मिलकर जल संचयन अपनाएं,
भूजल पुनर्भरण कार्य सफल बनाएं,

चेतन स्वरूप शर्मा
केन्द्रीय भूमि जल बोर्ड, जम्मू

भूमंडलीकरण और काशी का अस्सी

वर्तमान युग को यदि हम भूमंडलीकरण का युग कहें तो संभवतः समय की सबसे सटीक अभिव्यक्ति होगी क्योंकि हम जिन बहुमुखी हानि–लाभों से गुजर रहे हैं, वे प्रायः भूमंडलीकरण की फलश्रुति हैं। चीजों, घटनाओं और जीवन तक को ऐसे समाज से जोड़ने की बात जिसमें समूची दुनिया शामिल हो भूमंडलीकरण है। वैश्वीकरण, ग्लोबलाइजेशन, बाज़ारवाद, उदारीकरण आदि भूमंडलीकरण के पर्याय हैं। ''वर्तमान संदर्भ में भूमंडलीकरण का अर्थ व्यापक तौर पर बाज़ारीकरण है।"[1]

हिन्दी कथासाहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखने वाले काशीनाथ सिंह का 2002 में राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित उपन्यास 'काशी का अस्सी' भूमंडलीकरण का जीवन्त दस्तावेज़ है। भूमंडलीकरण के कारण बदलते काशी के ऐतिहासिक तथा सबसे जिन्दादिल इलाके 'अस्सी' की त्रासद कथा है। 'अस्सी मुहल्ला एक गांव का ही नहीं अपितु पूरे भारत के दिन–प्रतिदिन पत्तनोन्मुख होते जा रहे अनेक मुहल्लों का प्रतीक है। उपन्यास में 'अस्सी' के सामाजिक जीवन यथार्थ के साथ ही यह भी बताया गया है कि विकास के नाम पर हो रहे सामाजिक परिवर्तन एक तरफ तो विकास (पूंजीवादी विकास) का रास्ता दर्शाते हैं, वही दूसरी ओर उपभोगवाद पलायनवाद के पीछे चलने को भी प्रेरित करते हैं। उपन्यास में वर्तमान जीवन के नैत्तिक मूल्यों की गिरावट में मूल्यहीणता को भी प्रतिपादित किया है।

उपन्यासकार ने भूमंडलीकरण की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करने के लिए व्यंग्य का सहारा लिया है। मल्टीनेशनल कंपनियों का भारत में आना, लघु उद्योग–धंधों का समाप्त होना, उपभोक्तावाद, भूमंडलीकरण, बाज़ारवाद, विसंस्कृतिकरण और इन सबकी गिरफ्त में बदलता इन्सान और समाप्त होती इन्सानियत सब उपन्यास में मौजूद है। कुछ विकसित देश जो इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं, भारत को भी वहॉ ले जाना चाहते हैं। कहने को तो वे भारत को विकसित देश बनाना चाहतें हैं लेकिन वे इसके नाम पर देश को अन्या–अन्य तरीकों से लूटना चाहते हैं। यहॉ पर मुझे उपन्यास के प्रारंभ में ही एक पंक्ति इस सच को उजागर करती नज़र आती है जब लेखक का कोई परिचित मित्र एक बार उसे अपने साथ घूमने ले जाता है तो वह लेखक से अपने सारे काम करवाता है। वहीं पर लेखक को इस बात का ज्ञान होता है कि–"जो भी तुम पर पैसा खर्च करता है, वह तुम्हारे लिए नहीं अपने लिए.।"[2]

भूमंडलीकरण का प्रभाव ऐसा है कि शुरू–शुरू में अच्छा तथा विकास की तरफ ले जाता हुआ प्रतीत होता है किंतु इसका परिणाम भंयकर होता है। लेखक द्वारा इस कड़वे सच को बड़ी कुशलता के साथ प्रस्तुत किया गया है–"दीनबन्धु, डालर अमेरिका की जीभ है। वह शुरू में ऐसे ही किसी मुल्क को चाटना शुरू करता है जैसे

गाय बछड़े को चाटती है प्यार के साथ! बाद में जब चमड़ी छिलने लगती है, खाल उधड़ने लगती है, दर्द शुरू हो जाता है, जीभ पर कॉटे उभरते दिखाई पड़ने लगते हैं, जबड़े चलने की आवाज़ सुनाई पड़ती है तब पता चलता है कि यह जीभ गाय की नहीं किसी और जानवर की है। और क्या समझते हो, जो देखते ही देखते देश का देश चबा गया हो और उसमें भी सोवियत रूस जैसा देश उसके लिए नगर का मुहल्ला क्या चीज है?"[3]

अस्सी में विदेशियों का प्रवेश, फर्जी शादियाँ, साइबर कैफे! सब भूमंडलीकरण को भारत में लाने के उपकरण हैं। उपन्यास में भूमंडलीकरण की दलाली करने वाला कन्नी गुरू पूरी तरह से पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित हो चुका है। वह मुहल्ले के लोगों के घर विदेशी किराएदारों को प्रतिदिन के हिसाब से किराए पर दिलवाता है तथा मकान–मालिक से कमीशन वसूलता है।

आज बाज़ार का प्रभाव इतना बढ़ गया है कि जो दूसरों के पास है वह सब हासिल करने के लिए व्यक्ति ईर्ष्या तथा स्पर्धा की दौड़ में सम्मिलित हो गया है। विदेशियों के आगमन से जब 'अस्सी' मुहल्ले के घर होटल, लॉज, पेइंग गेस्ट एकमोडेशन में तबदील होने लगते हैं तो परंपरागत धार्मिक जड़ता का शिकार धर्मनाथ शास्त्री जो पहले इसका विरोधी था, बाद में इसी में अपनी बेहतरी देखता है और घर के मन्दिर तक को टॉयलट में बदलने के लिए तैयार हो जाता है।

बाज़ारवाद के इस युग में प्रत्येक चीज विकाउ है जिसकी अभिव्यक्ति उपन्यासकार ने व्यंग्यात्मक शैली में यह बताकर की है कि प्राकृतिक चीजें– हवा, पानी, धूप, ठण्ड आदि जो भगवान की इच्छा पर निर्भर करती थीं, आज पूंजीपतियों, सेठों के अधीन हो गई है। आज हवा, पानी, धूप, ठण्ड आदि प्राकृतिक चीजें पैकटों, लिफाफों में बिक रही हैं! कहने का अर्थ है आज सब बिकाउ है।

भूमंडलीकरण के इस युग का सामाजिक यथार्थ यही है कि बच्चों की मंजिल मल्टीनेशनल कंपनियॉ हो गयी हैं। औरतें भी खूबसूरत फिगर तथा कांतियुक्त चेहरे के लिए बाज़ार की ओर चल पड़ी हैं। बूढ़े बुजूर्ग घरों में उपेक्षित होते जा रहे हैं। परंपरागत मूल्य टूटते जा रहे हैं। राजेंद्र यादव के शब्दों में– "बाज़ार की संस्कृति आज हमारे सारे मूल्यों और मान्यताओं को बदल रही है। बाज़ार सिर्फ खरीदने–बेचने की जगह ही नहीं बल्कि एक व्यापक तंत्र–व्यवस्था और एक विचारधारा भी होता है।"4 परिवार में मां–बाप बोझ लगने लगे हैं। उपन्यास में कन्नी गुरू द्वारा अपनी मॉ को आटा–दाल देकर अपने से अलग 'सर्वेंट क्वार्टर' में रखना आज के युग में तेजी से बदलते मूल्यों–मान्यताओं को दर्शाता है। उपभोक्तावाद सामाजिक सद्भाव को निगल रहा है। लोग जितने भौतिकवादी और सभ्य होते जा रहे हैं उतने ही अपनी लोकसंस्कृति तथा लोकपरंपराओं से कटते जा रहे हैं। 'अस्सी' में शुरु से ही विरहा–दंगल आदि के गीतों की परंपरा रही है लेकिन अब इनमें भी फिल्मी धुनें प्रयुक्त होने लगी हैं जो भूमंडलीकरण के प्रभाव को लक्षित करती हैं।

भूमंडलीकरण ने व्यक्ति को इतना व्यस्त तथा उसके सामाजिक घेरे को इतना संकीर्ण कर दिया है कि वह

अपने घर के अतिरिक्त किसी से भी मतलब नहीं रखना चाहता। उसके आस–पड़ोस में कौन रहता है तथा क्या हो रहा है उसे न इसकी जानकारी है और न ही वह रखना चाहता है। "किसी को इतनी फुरसत ही नहीं कि दूसरे को पहचाने। पूछिए, डॉक्टर गया सिंह कहॉ रहते हैं?तो, कौन गया, क्या गया, क्यों गया, कैसे गया, कहॉ गया? और वह भी तब जब जल्दी में न हो। वरना पूछ डालिए घूम–घूम, कोई नहीं बोलेगा।"[5] भूमंडलीकरण ने उसे व्यस्त रखने के लिए टी0वी0 तथा अन्य उपकरण प्रदान किए हैं। आज बच्चों के लिए हॅसी केवल टी0वी0 तथा किताबों तक ही सीमित है। वे अक्सर अपने मॉ–बाप से प्रश्न करते हैं– "पापा कौन हॅसता हैं? क्या वह जिसके पास सब कुछ होता है?फिर सामने वाले अंकल खन्ना क्यों नहीं हॅसते हैं?पापा आदमी हॅसता है तो चेहरा कैसा हो जाता है?पापा देखिए! किताब में लिखा है–वह दिल खोलकर हॅसा। दिल खोलकर कैसे हॅसते है।?"[6] कहने का अर्थ है कि व्यक्ति ने भूमंडलीकरण की दलाली कर अपने लिए अतिरिक्त सुविधाएं तो हासिल कर ली हैं किन्तु उनके घरों में हॅसी, विश्वास और चैन खत्म हो गया है। जगदीश चतुर्वेदी के शब्दों में–"आज सारी दुनिया में जितना तनाव और अन्तर्विरोध है वैसा मानव सभ्यता में कभी नहीं देखा गया।"[6] डेविड जी मेयर्स ने अमरीकी समाज की विडंबना पर अनुसंधान करते हुए लिखा है–'अब हम अपनी दुगुनी आमदनी कर लेंगे, पैसे से दुगुनी चीज़ें खरीद पाएंगे। हमारे यहां एसप्रेसो कॉफी होगी, वर्ल्ड वाइड वेब होगा, खेलों के वाहन होंगे, कॉलर आइ डी होगा, और हमारे पास कम से कम खुशियां होंगी, ज्यादा अवसाद होगा, ज्यादा से ज्यादा बिखरते सामाजिक संबंध होंगे। कम से कम सामुदायिक प्रतिबद्धता होगी...।'[8] इसी तरह उपन्यास में पहली पीढ़ी में वे लोग थे जिनका भोजन अनाज कम तथा हॅसी –मजाक अधिक था। उनकी आपसी खींचतान, हॅसी–मजाक, प्रेम–बैर और आत्मीयता से भरी गालियां यानी जीवन की स्वाभाविक गति धीरे–धीरे समाप्त हो गयी। देखते–देखते उनका 'अस्सी' मुहल्ले से म्यूजियम बन जाता है। इस तरह बनारस का सबसे जिन्दादिल इलाका 'अस्सी' अस्सी न रहकर 'तुलसीनगर' बन जाता है।

आज भूमंडलीकरण ने न केवल व्यक्ति को बाहरी रूप से बदला है अपितु उसकी मानसिकता को भी बदल कर रख दिया है। बाज़ार न केवल हमारे घर, गांव तथा शहर को लूट रहा है बल्कि पूरे देश पर बाज़ार की शक्तियां हावी हैं। इस बाज़ार की गिरफ्त में आम आदमी छटपटा रहा है। उसकी छटपटाहट से निकला हुआ इक्कीसवीं शताब्दी का चेहरा कैसा होगा?इसकी सशक्त अभिव्यक्ति उपन्यास के अन्तिम वाक्यों में मिलती है–'जहॉ एक आदमी जिसके होठों पर बच्चों–सी मुस्कान थी उसका लहुलूहान धड़ था'। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि यह उपन्यास 'अस्सी' मुहल्ले के माध्यम से पूरे भारत पर तेजी से पढ़ने वाले भूमंडलीकरण के प्रभाव को दर्शाता हुआ एक सफल उपन्यास है।

मुकेश कुमारी,
शोघ अहपेता, हिन्दी विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

नारी का ''कैसा हो वसन्त''

दूर्गा जैसी दृढ़ता से जब
आगे बढ़ने का चाव दिखे,
धरती का धैर्य दिखे उसमें,
जननी–सा वत्सल–भाव दिखे;
पृथ्वी–पुत्री की गरिमा से
सम्पूर्ण सृष्टि परिवर्द्धित हो,
वन्दित हों ऋतु–ऋतु–पर्वोत्सव,
संस्कृति–संस्कृति सवंर्द्धित हो;
उसका कोमल कर लहराये
जब कीर्ति–पताका दिकंदिगन्त।
नारी का ऐसा हो वसन्त ।।

'महिला' महनीया होने से
जानने के कारण 'जननी' है,
सदियों के झेले कष्टों से
वह हृदय भले ही छलनी है;
पर, नहीं किसी से हारी है,
अरि नहीं किसी की 'नारी' है,
कोई भी गाली दे न सके
वह अबला या बेचारी है;
ऐसा गौरव वह पा जाये
जिसका न कहीं हो कभी अन्त!
नारी का ऐसा हो वसन्त!!

मलयानिल–सा शीतल सौरभ
उसके ऑचल से लहक उठे,
उसकी वाणी के अमृत से
रसधार प्रेम की छलक उठे;
नयनों से ममता का सागर
लेकर हिलोर जब झलक उठे,
आशीशों की वर्षा करने
उर मातृभूमि का ललक उठे,
प्रत्येक हृदय में भर जाये
श्रद्धा अनन्त, करूणा अनन्त!
नारी का ऐसा हो वसन्त!!

प्रत्येक वर्ण गौरव पाये,
प्रत्येक सुमन खिल–खिल जाये,
रोमांचित हो हरियाली भी
पूरी वसुधा पर छा जाये;
प्रत्येक वाटिका झूम उठे,
जब प्रात–समय कलरव आये,
रोली–दीपक का थाल लिये
जब सान्ध्य प्रकृति मंगल गाये;
सम्पूर्ण सृष्टि यह दोहराये–
नारी का ऐसा हो वसन्त!
नारी का ऐसा हो वसन्त!!

डॉ. मिथिलेश दीक्षित
लखनऊ (उ.प्र.)

लघुकथा (विवशता)

सुरभि आपबीती सुना रही थी। वह बोलती जा रही थी और मेरे सामने चित्र बनता जा रहा था–नुकीली लम्बी नाक पर अटका चश्मा और चश्मे से ऊपर घूरती दो ऑखें... अक्सर याद आ जातीं रौबीली, कठोर और स्मार्ट मिसेज करूणा गुप्ता! ''टाइमटेबल बना या नहीं'', उन ऑखों ने घूरकर देखा। मैं अन्दर तक कॉप गयी, लेकिन अपने को संयत कर बोली, ''जी, अभी पूरा किये देती हूँ। ''चार बजे तक मेरे पास आ जाना चाहिए।'' पैर पटकती हुई वे विभागीय कक्ष से बाहर चलीं गयीं। नियम चला आ रहा था कि उनके केवल दो पीरियड होते थे, उनकी खास प्रवक्ता के तीन और शेष हम दोनों के पॉच–पॉच। इस असमानता पर अन्दर–अन्दर खीझती हुई, मैंने नया टाइमटेबुल बनाया और उन्हें दे दिया। उन्होंने उड़ती हुई दृष्टि डाल कर कहा, ''ठीक है, कल से यह लागू होगा और इस पूरे माह मेरे दोनों पीरियड भी तुम्हीं को लेने होंगे। मुझे सेमीनार की तैयारी करवानी है।'' मैं केवल 'जी' कहकर रह गयी । सुबह नौ बजे से शाम साढ़े चार बजे तक मुझे कक्षाएँ लेनी होंगी। मैं परेशान थी कि मेरे छह माह के बेटे को कौन देखेगा। वे भी एक बेटे की मॉ थीं, लेकिन उनके कठोर चेहरे पर ममता का कोई निशान नहीं दिखायी देता था। अपनी समस्या बताना, हमदर्दी के स्थान पर उनके क्रोध को भड़काना था, इसलिए चुप रही। हालॉकि, मेरे परिश्रम को वे जानती थीं, लेकिन अहंकार के कारण व्यक्त नहीं करती थीं।

अगले दि नही तेज़ बुखार से बेटे की हालात बिगड़ गयी। पड़ोसी ने मुझे सूचना दी। उन्होंने मुझे छुट्टी नहीं दी और नसीहत दे डाली कि घर की समस्या को घर में छोड़कर आया करो। मैं डाक्टर को नहीं दिखा पायी। मेरे बच्चे को लिये हुए मेरी पड़ोसी ऑफिस में बैठी रहीं। मैं कक्षाएँ लेती रहीं। पढ़ाते समय मेरा ध्यान बार–बार बच्चे की ओर जाता, पर मैं विवश थी। शाम तक उसकी हालत इतनी बिगड़ गयी कि उसने दम तोड़ दिया। मेरे दुःख और विक्षोभ की कोई सीमा नहीं थी। मैंने नौकरी छोड़ दी।

मैं फरीदाबाद चली आयी। वहॉ एक छोटा–सा गिफ्ट सेन्टर खोल लिया। समय बीता। एक छोटा फ्लैट खरीदने का विचार आया। फ्लैट देखने के लिए जिस जगह गयी, उससे मिले फ्लैट के गेट को कपड़े से साफ करते हुए एक जर्जर वृद्ध महिला को देखकर ठिठक गयी। आकृति कुछ जानी–पहचानी लगी। ध्यान से देखा, पहचान लिया..... मिसेज करूणा गुप्ता। मैंने उन्हें नमस्ते की, परन्तु वे मुझे पहचान नहीं पायी। मैंने फ्लैट ले लिया। बाद में पता चला कि उनके इंजीनियर बेटे–बहू का व्यवहार उनके प्रति बहुत अधिक बुरा था। वे उनसे एक सेविका की तरह काम लेते थे और उनके साथ रहना, इस उम्र में, मिसेज करूणा गुप्ता की विवशता थी।

डॉ. मिथिलेश दीक्षित
लखनऊ (उ.प्र.)

कार्यालयी हिन्दी के प्रति झिझक क्यों ?

पिछले साठ–पैंसठ वर्षों में भी हिन्दी को राजभाषा के रूप में अपनाने के बावजूद कार्यालयों में हिन्दी में काम करने से लोग झिझकते हैं जबकि केन्द्रीय सरकार उन्हें हिन्दी सिखाने, अपनाने और प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करने के लिए करोड़ों रूपये खर्च कर रही है पर नतीजे अधिक उत्साहवर्धक नहीं है। इसका कारण शायद यह है कि प्रायः कार्यालयी हिन्दी में संस्कृत के शब्दों पर जोर देने वाले आचार्य हिन्दी को जन–जन की भाषा न बनाकर शास्त्रीय भाषा बनाने की फिराक में रहते हैं।

जनता की भाषा और शास्त्रियों की भाषा में जब–जब दूरी बढ़ी है तब तब जनता तक अपनी बात पहुंचाने की ललक वाले लोगों में किसी न किसी लोक प्रचलित भाषा/बोली के शब्दों को अपनाकर अपनी बात कही है। इसी कारण प्राकृत, पाली भाषाओं का विकास हुआ। इसी विकासवृत्ति के कारण हिन्दी अपभ्रंशों से हिन्दी के मौजूदा रूप में पहुंची। हमें अतीत से यह समझने में परहेज नहीं करना चाहिए कि प्राचीन काल में जब वैदिक संस्कृत आम जीवन से परे हट जाने के बावजूद विद्वानों तथा कर्मकाण्ड की भाषा बनी रही तो महात्मा बुद्ध और वर्द्धमान महावीर जैन ने अपनी बात कहने के लिए जन–जन की भाषा को ही अपनाया। बौद्ध, जैन, नाथ सिद्धों ने भी अपने–अपने प्रचार क्षेत्रों की जनभाषा को अपनाकर उसी भाषा में अपने उपदेश दिए। बौद्ध सिद्धों की विशेषकर सरहद, लूईप आदि की काव्य–भाषा को कई विद्वानों ने संध्या भाषा कहा है। वास्तव में उनकी काव्य–भाषा उनकी साधना पद्धति के लुका–छिपी के अनुसार भी थी और लोगों के साथ उनके साथ भी प्रकट करती थी। कबीर आदि अनेक संत कवियों ने न केवल उनकी शब्दावली को ही अपनाया बल्कि उनकी कर्मकाण्ड विरोधी भाषाव्यंजना को भी अपनाया है बल्कि उन्होंने तो उन अनेक पदों को ही तत्कालीन जनभाषा को अनुदित कर लिया है।

कबीर आदि संत कवि नामदेव से प्रभावित रहे हैं। वे जयदेव के साहित्य से परिचित होते हुए भी उनकी शास्त्रीय भाषा भावव्यंजना से परे रहे और उन्होंने विद्यापति की शास्त्रीय अवधी को भी नहीं अपनाया।

कबीर से पूर्वगोरखनाथ ने अपने समय में प्रचलित जैन, बौद्ध, शैव में बढ़े हुए परस्पर वैर–विरोध को दूर करने और उनकी साधना–पद्धतियों में समन्वय स्थापित करने का यत्न किया और अपने वैचारिक समन्वय को जन–जन तक पहुंचाने के लिए तत्कालीन जनभाषा का उपयोग किया। उन्होंने अपनी जीवन अनुभूति से जुड़ी बात शास्त्रियों की अपेक्षा जनसामान्य से कही और शास्त्रीय भाषा की अपेक्षा जनभाषा तथा लोक मुहावरे में कही, उन्होंने बौद्ध सिद्धों के इंग्ला–पिंगला आदि शब्दों की अपेक्षा सहज और लोकप्रचलित शब्दों में अपनी बात कही और उन्हीं की देखा–देखी संतों ने भी न किसी शास्त्रीय बहस–विमर्श को महत्व दिया और न ही जाति, धर्म और व्यक्तिगत अहंकार को महत्व दिया बल्कि अपनी मानव–मात्र सम्बन्धी नैसर्गिक अनुभूतियों को ही जन–भाषा में रूप प्रदान किया और जन–जन की भाषा/वाणी से अपनी काव्य भाषा को विकसित किया। नामदेव, कबीर, रैदास, आदि संत कवियों की कुछेक निम्न पंक्तियों में रेखांकित शब्दों की ओर विशष ध्यान दीजिए क्योंकि ये शब्द संस्कृत और अन्य शास्त्रीय शब्दावली से संबंधित नही हैं जबकि कवियों की वाणी को जन–जन तक पहुंचाने में अतिरिक्त सहायक सिद्ध होते हैं –

सहजो सुमरिन कीजिए हिरदै मांहि छिपाई,
होठ होठ सॅं न हिले सकै नहीं कोई पाई।
हिन्दू अन्धा तुरको काना दुवौ ते ज्ञानी सयाना।
हिन्दू पुजै देहरा मुसलमान मसीत।
नाथ वहीं सेविये जहां देहरा न मसीत।
दुई सेर मॉ बो चूना।
पाव घी सॅग लूना।
आध सेर मॉगी दाल। मो को दोनो बखत जिवा लो ।

ये चिह्नित शब्द एक नहीं अनेक भाषाओं, बोलियों के शब्द हैं और इस तरह से प्रयुक्त हुए हैं कि इन संतों का कथन आसान हो गया है। जिसमें शास्त्रीय दुरूहता की बजाए सुगमता आ गई है, ये सभी शब्द किसी खालिस भाषा के न होकर जन–जन में प्रचलित शब्दावली से लिए गए हैं। कबीर ने किसी शास्त्रीय भाषा को न अपनाकर यावरी के दौरान साधु संतों से हुए सम्पर्क की भाशा के शब्दों को लिया और एक पंचमेल भाषा या खिचड़ी भाषा का विकास किया है। उनकी काव्य–भाषा जन–जन में प्रचलित भाषा के साथ शास्त्रीय भाषा के सम्पर्क से भी विकसित हुई है–

जल में कुंभ, कुंभ में जल है भीतर बाहर पानी,
फूटा कुंभ जल जलहि समाना यह तत्व कथौं गयानी ।

यहां रेखांकित शब्द कुंभ और जल तत्सम शब्द हैं तो पानी देशज है, गयानी, तद्भव है और समाना निर्मित शब्द है।

कबीर ने शब्दों को मर्जी से चुना है और यहां ठीक समझा वहीं बिठाया भी है। वह काव्य–भाषा का उसी प्रकार निर्माण करते हैं जैसे जीवन जीने की सुविधा को जुटाते हैं। वह तो पोथी पत्रे के बजाए हृदय की बात को ही महत्व देते हैं–

पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ पंड़ित भया न कोई,
ढ़ाई आखर प्रेम के पढ़े सो पण्डित होई।

यहां कवि ने पोथी की भाषा की बजाए जग की भाशा का ही प्रयोग किया है, नहीं तो वह अढ़ाई और अक्षर की बजाए 'ढ़ाई' और 'आखर' न कहता। संतों ने विद्वान कहलाने की इच्छा ही नहीं की है। संतों की भाषा में अभिधा की अपेक्षा लक्षणा, व्यंजना, प्रतीकात्मकता को शास्त्री ही ढूंढ़ते हैं, आम आदमी नहीं!

इनकी भाषा में प्रतीकात्मकता की खोज वही करते हैं जिनके लिए उन्होंने कुछ कहा ही नहीं बल्कि जिनकी पोल उन्होंने जन–जन के समक्ष खोली है।

संतों की कविता में अलख, अगोचर, वर्णनातीत के प्रति ज्ञान मार्गी भक्ति का सहज उद्वेक है। ये कवि अगोचर को शास्त्रीय ज्ञान की आंख से नहीं देखते बल्कि आत्मानुभूति में देखते हैं और उससे प्रेम निवेदन करते हैं, ये कागद लेखी की अपेक्षा आंखों देखी पर विश्वास करते हैं, प्रत्यक्ष अनुभूति को प्रत्यक्ष प्रचलित भाषा

में रूपायित करते हैं। आडम्बर में न उलझ की सहज शैली में निरीह आत्म समर्पण कर देते हैं। संत रैदास जी के ये रेखांकित शब्द देखें–

वेद कुरान कोई न अंतर करन एक ही संदेसा,
जाति धर्म वर्ण विसेस का कोई न भेद विसेसा ।

गुरूनानक जी की वाणी में सरलता है, वह देश–विदेश में भ्रमण करते रहे हैं और उनकी वाणी में भी अनेक भाषा–बोलियों के शब्द जुड़े हुए हैं, उन्होंने लोक व्यवहार की भाषा को अपनी वाणी का जरिया बनाया है। अधिकतर संत कवि अहंकार विगलन की प्रेरणा देते हैं क्योंकि अहंकार ही व्यक्ति को समाज से परे हटाता है। गुरूनानक जी व्यक्ति को समाज में घुलमिल जाने और उसी का हो जाने की प्रेरणा देते हैं। उनकी संगत और पंगत की धारणा में छोटा बड़ा, ऊँच–नीच, लोक–शास्त्र परस्पर कुल मिलकर एक हो जाता है और भाषा भी जन–जन की हो जाती है। संत दादू दयाल की वाणी में कबीर की अनुगुंज सुनाई पड़ती है।

सोई सुहागिनी सोच सिंगार तन, मन लाइ भजै भरतार।
संत मलूक के रेखांकित भाब्द देखें –
माला जपौ न कर जपौ, जिभ्या कहौ न राम,
सुमिरन मेरा हरि करै, मैं पाया विसराम ।

संत कवि सुन्दर दास छन्द शास्त्र को अपनाने वाले एकमात्र संत कवि हैं परन्तु वे अधिक महत्व नहीं प्राप्त कर सके। संत सिपाही, गुरू गोविन्द सिंह की वाणी में वीर भाव है और शुभ कर्मों के प्रति दृढ़ संकल्प है।

देहि शिवा वर मोहि इहै भुभ कर्मन ते कब हूं न टरों,
न टरों न डरौं जब जाय लड़ों निश्चय कर अपनी जीत करों।

हिन्दी को कार्यालयी भाषा के रूप में अपनाने से झिझकने वालों को गुरू जी के उपदेश के अनुसार हिन्दी को कार्यालयी भाषा के रूप में अपनाने का दृढ़ संकल्प करना चाहिए और पूर्वजों की तरह अपनी जन भाषा को अपना कर कार्यालयी हिन्दी को अधिक से अधिक सुगम और अर्थ पूर्ण बनाना चाहिए ।

प्रो. राजकुमार शर्मा
~~जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू~~

विश्व के अधिकांशः युद्ध धर्म के नाम पर लड़े गये जबकि उनमें धर्म केवल एक है – मानव धर्म–गंगा–यमुना इस देश की रामायण, कुरान है। हिमालय इस देश का वेद मंत्र है। ''सर्वे अपि च सुखानिः सन्तु।'' क्या ऐसा धर्म कभी आवेगा क्या यह समाज का साधक बन सकेगा ? बनेगा अवश्य बनेगा किन्तु तब जब इन मस्जिदों की अजान, मन्दिरों के घंटे, गिरजा की घंटियाँ बन्द कर दी जायेगी। धर्म के नाम पर बने इन प्रसारण केन्द्रों को गिरा दिया जायेगा, जब इंसान राहत की सांस लेगा, जाड़े की रातें आसमान के नीचे नहीं बीतेंगी। कहीं भय न होगा। वही हमारा धर्म होगा, वही हमारा मार्गदर्शन, आइये उस दिन का इन्तजार करें।

संजय सिंह
आगरा (उ.प्र.)

क्या धर्म समाज का साधक ?

आदरणीय अध्यक्ष महोदय एवं उपस्थित सदन! ''धर्म समाज का साधक है''। इस विष्य की पुष्टि करने वाले या तो समाज के शत्रु है अथवा स्वयं अपने। मैं इस संबंध में अपने विचार आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ। अब यह आप पर निर्भर करता है कि आप किस मत को स्वीकार करते हैं पक्ष को अथवा विपक्ष को।

धर्म, धर्म, धर्म आखिर क्या अर्थ है धर्म का? क्या संस्कार? क्या आडम्बर? क्या स्वार्थ क्या दूसरों के प्रति घृणा ?आखिर मैं अपने विपक्षियों से पूछना चाहता हूँ कि धर्म का अर्थ क्या है ?आचार्यों ने धर्म की परिभाषा करते हुए लिखा है ''धरते स एवं धर्मः'' अर्थात जिसे धारण कर लिया जाय वही धर्म है। ''समाज की सामान्य स्वीकृति के नियम ही धर्म है। यही मान्यता रही है किन्तु कुछ स्वार्थी लोगों ने चाहे वे हिन्दू रहे है अथवा मुसलमान, धर्म को कट्टरता का जामा पहनाकर इसे स्वार्थ सिद्धि का साधन बना लिया है ताकि इन लोगों का सामाजिक स्तर अन्य लोगों से भिन्न हो। ये समाज के मार्गदर्शन बनकर राज्य करे यही तो ?

तुगलक की नंगी तलवार ने हिन्दुओं का सामूहिक कत्ल किया, नादिरशाह का दिल्ली का नरसंहार आज भी इतिहास के पन्नों से रक्त की बूंदे टपका रहा है, चंगेज खां मंगोलिया से भारत तक घोड़ों से धूल उड़ाता चला आया। पवन महमूद गजनवी के 17 हमले धर्म के नाम पर हुए। बाबर हुमायुँ की कहानी क्या इससे भिन्न है ? स्त्रियों पर अत्याचार करने वाले, बच्चों को भाले की नोंक से छेदने वाले, वृद्ध और अपाहिजों को कोड़े लगाने वाले इन धर्म रक्षकों की दुहाई आप देंगे क्या?मानवता जिनके कृत्यों पर घूमी है। उस कृत्य को मुल्लाओं ने जेहाद कहा, ईमान का उसूल कहा, कुरान के रक्षक कहा। संत कबीर ने समाज के उद्धार के लिए मानव धर्म की स्थापना की तो मोहम्मद शाह तुगलक ने उस वीर को कोड़े लगवाये। सींखचों में बन्द किया किन्तु आज क्या हम कबीर को सत्य नहीं मानते ?

धर्म समाज का साधक न कभी रहा है और न रहेगा। हर इंसान की बेटी मुगलकाल में हिन्दू बहुओं की डोलियॉ क्यों लूटी गयी ?आप बता सकेंगे क्या श्रोता महोदय बात एक पक्ष की नहीं मानव की पशुता की है अजेय रावण लंका से मथुरा तक तलवार की धार अजमाता आया, मूर्तियॉ तोड़ी, आश्रम नष्ट किये ऋषियों की हत्याएं की उस रावण ने जो पुलस्तय का नाती और रावण संहिता का रचयिता था। तब क्या हाथी के दाँत खाने और दिखाने के अलग–अलग होते हैं ?राक्षस धर्म का यह कृत्य और यह कृत्य ।

हिन्दू धर्म जिसने समाज की सुन्दरियों को सोमनाथ के प्रांगण में नृत्य कराया, राजा, पुजारियों की भोग की कामना पूर्ण की, अघोरी–चक्र के बहाने सुन्दरी भैरवी को सुरा और भोग का साधन बनाया। यह धर्म जिसने अबोध बच्चों की बलि तालाब और महल बनवाते समय किन–किन समाज का साधक बनेगा ?

यह धर्म जिसने पूजापाठ, आडम्बर, छुआछूत, जातिवाद को जन्म दिया समाज का साधक कैसे बन सकता है ?यह धर्म जिसने दिवराला में रूपकुवरि की हत्या की और सती का फतवा दिया। समाज का संगठन करेगा? धिक्कार है उस समाज पर, उस धर्म पर जो जिन्दा शरीर को लाश बना दे, जो स्त्री को पैर की जूती समझ कर, महिलाओं को भोग्या बना दे जो गुलाम प्रथा को जन्म देकर पीढ़ी दर पीढ़ी गुलाम बनाये रखने में अपना स्वाभिमान समझे, जो विधवा महिलाओं को घर से निकाल कर विश्वनाथ मन्दिर के पुजारी और दुष्टों के हाथों की कठपुतली बना दे ।

गीत

आजाद परिंदे वापस आ जा,
शाम भी होने वाली है ।
आकाश जिया है पंखो ने,
एक रैन बसेरा खाली है .....
मौसम ने घाव किये होंगे,
जहरीली बूंदा बांदी भी,
आंखों में गर्द भरी होगी,
जिंदियाई होगी आँधी भी
सागर भी सिरहाने अपने,
एक प्यास छुपाकर जगता है,
जो भरी नहीं तेरी खातिर,
कच्ची मिट्टी की प्याली है ।
कुछ दाने, छलिया, बनकर तेरी,
राहों में लुढ़के होंगे,
सैय्यादों के कुछ पत्र लिये,
सूखे पत्ते खड़के होंगे,
कुछ यहां भी जलता धूँ–धूँकर,
कुछ रंग छुड़ाए ना छूटे,
आंखों में होली का मौसम,
और सांसों में दिवाली है ।
खुशबू अक्सर लाती होगी,
तेरे पास–बुलाबा कलियों का,
लिखती होगी तेरे पंखों पर,
कुछ नाम जरूर तितलियों का,
कहीं प्यास जगे कहीं प्यास बुझे,
कभी कैद हुई कभी रिहा हुई,
पक्षी जैसी खुशहाली है ।

डॉ. रचना तिवारी (गीतकार),
सोनभद्र (उ.प्र.)

सेना तथा वीर सैनिकों के लिए हमारे जज़्वात

हम सेना की महिलाएँ हैं हम इसको सदा सजाएँगी,
ये जान से प्यारी है हमको हम इसको स्वर्ग बनाएँगी।
देश धर्म का पाठ पढ़ाती, सब धर्मों को एक बताती,
सदा ज्ञान का दीप जलाती, देश पर मर मिटना है सिखाती
जो वीर हुए बलिदान उन्हीं के गीत सदा दोहराएँगी।
रणभेरी की गर्जन सुनकर जब सैनिक पुलक रहे होंगे,
हाथों में तिलक का थाल लिए ये ऑसू ढुलक रहे होंगे
हम देश की रक्षा की ख़ातिर अपना घर वार लुटाएँगी।
जो देश भक्त त्यागी सपूत पुरूशारथ के नित काम करे,
उस योगी महाआत्मा को झुक–झुक कर जगत प्रणाम करे
हम ऐसे वीरों की साथी अब स्वाभिमान से गाएंगी।
परमारथ में तन–मन वारे वो युगों–युगों सुख पाता है,
दृश्टांत जगत में बन जाता जन–जन के मन बस जाता है,
वक्त पड़े पर हम सब भी साथ ही कदम बढ़ाएँगी।
जब तक नभ में झिलमिल तारे यह रहे चमकता चंदा है,
दिनकर सी ज्योति प्रखर लेकर यह काव्य ''सुमन'' का जिंदा है,
मातृभूमि की बलिवेदी पर हम अपना शीश झुकाएँगी
हम सेना की महिलाएँ है हम इसको सदा सजाएँगी ।

सुमन राना
ब्रिगेडियर पी.एस.राना

युवा लेखक बलरम प्लेटफार्म

कहानी हो या कविता युवा रचनाधर्मिता के मामले में प्रत्येक दस वर्ष बाद एक नई पीढ़ी उभर कर समाने आती है और उसकी कुछ न कुछ विशेषता जरुर होती है। लेकिन इस बीते एक दशक में कविता को या कहानी, युवाओं के लेखन को लेकर खूब सवाल उठे। बेहिसाब आलोचना और शोर शराबा रहा । इस हलचल भरे दौर में कुछ अच्छा भी रहा लेकिन ज्यादातर लेखक के पीछे लेखकों कवियों को ग्लैमर की चाहत रही और एक प्लेटफार्म की जरूर रही।

एक बात और तेजी से सामने आयी कि अपनी छोटी सी रियासत पर काबिज़ रहने के लिये कविताओं या गद्य लेखन में चिंतन एवं विषयों की चोरी आराम से चूहा दौड़ में उछलकूद मचाने वाले करते रहे, उन्हें यह पता ही नहीं कि साहित्य का संसार व्यापक होता है, मौलिक लेखक या पाठक समकालीन लेखन की खबर रखते हैं और ऐसी चोरियों से वो वाकिफ़ हैं। सही मायने में साहित्य में गतिरोध आ गया है, पुरानी पत्रिकाएं जो स्थापित हैं, आखिर किसे छापें?इनकी भी बेबसी है और नई पत्रिकाएं लगभग पूरी तरह से बाज़ार वाद की गिरफ्त में हैं।

वर्तमान नई पीढ़ी स्वतः संघर्ष करके स्थापित नहीं हो रही बल्कि इन्हें योजना बद्ध ढंग से लाया जा रहा है और बखूबी छल, बल, कल से प्रमोट किया जा रहा है। अचानक नई पीढ़ी के साहित्य का मुख्य धारा में आकर खढ़ा होना यही दर्शाता है। यह रचनाधर्मिता की स्वाभाविकता नहीं है—जो एकाएक हो ।

आज के युवा कवि या रचनाकारों को अपनी परिपक्वता का अंदाज है, इसीलिए वे अपनी रचनाओं पर भरोसा न करके विज्ञापन के सारे अस्त्रों का प्रयोग करने में सफल दिखाई देते हैं। साथ ही हमारी भेड़ियां धसान पत्रिकाओं ने भी युवा रचनाकारों के नाम पर कुछ भी छापना शुरू कर दिया है। युवा लेखक की सार्थकता आज प्रश्नों के घेरे में है।

आज जो कवि या साहित्यकार किसी साहित्यिक सत्ता केन्द्र के जितना निकट है और वह उस निकटता को जितना अधिक से अधिक मैनेज कर सकने की स्थिति में है तो वह बड़ा कवि या लेखक है। साहित्यिक महात्वाकांक्षा रखने वाले युवक में अच्छी तरह जानते हैं कि पद और पोजीशन दोनों ठीक रखने पर रचनाकर स्वयं बन जाता है और ये प्रमाणित भी हो रहा है।

आज अपने लेखन से रचनाकार नहीं जाना जा रहा है इसलिए न तो वह अपने लेखन के प्रति प्रतिबद्ध है और न समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता उन कारकों के प्रति होती है जो उनकी कमज़ोर लेखनी करते हैं। जितने चमकदार चेहरे बड़े शहरों में है और जिनका खूब प्रचार भी है उनकी रचनाएं एवं चिंतन उतने ही कमज़ोर हैं इसके मूल्यांकन की हमारे साहित्यिक पहरूओं में रूचि नहीं है वरन् प्रोत्साहन देने में रूचि है क्योंकि ये खुद भूखा खजाना है।

आज मूल्यहीन एवं आराजक समय में साहित्य से समाज को उम्मीद है, अमानवीय तत्वों के विरुद्ध खड़े होना साहित्य का फर्ज़ है। क्या युवा रचनाकार इस पर खरे उतर रहे हैं ? युवा कवि या रचनाकार महानगरीय भावबोध से भरा है कविता या कहानी के नाम पर पूरा देश चन्द शहरों में तब्दील हो चुका है। अतः संवेदन हीन साहित्य का बोलबाला है जबकि संवदेना विकसित करना साहित्य का काम है।

समाज में अव्यवस्था, गिरावट, संघर्ष के दौर में साहित्य सृजित होता है लेकिन आज सामाजिक पतन के दौर में साहित्यिक पतन भी जारी है। दोनों एक साथ गिर रहे हैं। अगर सही युवा कवि, या रचनाकार की पहचान करनी है, तो सत्ता केन्द्र (दिल्ली एवं अन्य बड़े शहरों में अलग हटकर युवा रचनाकारों पर नजर डालनी होगी, जो चुपचाप किसी और से दूर, चकाचौध से इलेक्ट्रानिक मीडिया को भी अपना मापन तय करना पड़ेगा हीरा खोजना और तराशना (प्राकाशित करना) भी पड़ेगा। वरना वो दिन दूर नहीं जब वास्तविक साहित्य डायनासोर की तरह अलम्य हो जायेगा।

डॉ. रचना तिवारी (गीतकार)
सोनभद्र (उ.प्र.)

हिन्दी के सुप्रसिद्ध ललित निबंधकार

कुबेरनाथ राय का नाम हिन्दी साहित्य में ललित निबंधकार के रुप में समादृत हैं। इनका जन्म उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जनपद में जमानियां क्षेत्र के मतसा गांव में 26 मार्च 1933 ई0 को हुआ। इनके पिता का नाम श्री वैकुण्ठनाथ राय तथा माता का नाम श्रीमति लक्ष्मीदेवी था । इनके पिता 'कवि' और 'कामधेनू' के सम्पादक रह चुके थे। कुबेरनाथ राय का पारिवारिक वातावरण धर्म, संस्कृति और साहित्य से सम्पन्न था जिसका प्रभाव अप्रत्यक्ष रुप से इनकी मानसिक और बौद्धिक प्रकृति पर पडा। कुबेरनाथ राय ने स्वयं कहा है–''मेरी मानसिकता बुद्धि प्रधान एवं भाव प्रधान दोनों है।'' कुबेरनाथ राय के जीवन और अध्यापन के वर्ष संघर्ष युक्त रहे। राय प्रारम्भ से ही पढ़ने में मेधावी थे। वे प्राइमरी स्कूल, मिडिल स्कूल और हाई स्कूल की परीक्षा में स्कालरशिप होल्डर रहे। कलकत्ता विश्वविद्यालय से आपने अंग्रेज़ी विषय में एम0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। कलकत्ता विश्वविद्यालय से ही कुबेरनाथ राय ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'साहित्य रत्न' परीक्षा भी उत्तीर्ण की थी। 1959 में नलबारी कॉलेज नलबारी (असम) में अंग्रेज़ी व्याख्याता नियुक्त हुए। यहां पर राय ने अपने जीवन के पच्चीस वर्ष अंग्रेज़ी व्याख्याता और विभागाध्यक्ष के रुप में बिताए। वहां का राजनीतिक माहौल बदल जाने के कारण असम छोड़कर नौ वर्ष तक स्वामी सहजानंद महाविधालय गाजीपुर में प्राचार्य पद पर कार्यरत रहे। रचनात्मक प्रतिभा कुबेरनाथ राय को जन्मजात संस्कार और विरासत के रुप में मिली थी। अभी राय आठवीं कक्षा में ही पढ़ते थे कि 'विशाल भारत' और 'माधुरी' में उनके निबंध प्रकाशित हुए, इसके बाद क्वीन्स कॉलेज की पत्रिका का संपादन हो या काशी हिन्दू विश्वद्यिालय की पत्रिका 'प्रज्ञा' हो सभी में इनके निबंध छपते थे। प्रारम्भ में इन्होंने अंग्रेज़ी में लिखना शुरु किया था किन्तु श्री बालकृष्ण राव ने इन्हें हिन्दी में लिखने का सुझाव दिया । बालकृष्ण राव के प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन के फलस्वरुप हिन्दी भाषा के प्रति समर्पित हुए ।

हिन्दी के किसी साहित्यिक मोर्चे से इनका कभी संबध नहीं रहा। लेखन के लिए एकांत आवश्यक है। मोर्चे और संस्थाएं एकांत को खंडित करती हैं। यही उनका अभिमत था । अपने लेखन के बारे में तो सदैव कहा करते थे 'मेरा सारा लेखन एक आर्तनाद है। हिन्दुस्तान जब इस आर्तनाद की व्याख्या पूछता था तो ये उतर देते कि ''आर्तनाद उन प्रमूल्यों के क्षीण होने के संदर्भ में है जिनसे इस हिन्दुस्तान का मनुष्यत्व परिभाषित होता है,समाज व्यवस्था और कर्मकाण्ड़ ने इसे तेजहीन और स्थविर बना दिया, परन्तु इसे अस्वीकृत कभी नहीं किया। वह इन्हे प्राणहीन पत्थर का राजनीति बनाकर भी पूजित मानता रहा। आज की राजनीति इन्हें अस्वीकृत करती है। राजनीति तो जीवंत है मुर्दा घोषित करके म्यूजीयम पीस बनाकर खाना चाहती है।'' इसी विडम्बना से पीड़ित होकर इन्होंने अपने ललित निबंध लिखे। आर्तनाद से इनका यही तात्पर्य है।

कुबेरनाथ राम ललित–निबंधकारों के उन श्रेष्ठ लेखकों में हैं जिन्होंने ललित–निबंधों को एक नई दिशा प्रदान की । कुबेरनाथ राय ,शुक्ल और द्विवेद्वी जी की परम्परा के सशक्त निबंधकार हैं यह एकमात्र ऐसे ललित निबंधकार हैं जिन्होंने वर्तमान में इस क्षेत्र में सर्वाधिक योगदान किया है। राय के दर्जन से उपर निबंध –संग्रह प्रकाशित हैं जो शास्त्र ,लोक ,प्रकृति पुरातत्व, इतिहास एवं अन्य ज्ञान संकायो की विशष्टताओं को समेटते हुए अपनी सत्ता करते हैं । विचारों के संसार से कुबेरनाथ राय की इतनी गहरी प्रतिबद्धता है कि उनके समूचे कृतित्व का आधार सहज ही पहचाना जा सकता है। कुबेरनाथ राय की दार्शनिक चेतना, मानवीय बौध तथा संवेदना से गहरे स्तर पर जुड़ी हुई है। ये ऐसे लेखक हैं जिनके लेखन में व्यापकता है। हिन्दी साहित्य को इनका योगदान अमूल्य है। इनके निबंधों में गम्भीर पांड़ित्व, चिन्तन, अन्वेषण और विश्लेषण का अदभुत

समन्वय है। इनके निबंधो का गहन अध्ययन करने के पश्चात एक बात साफ तौर पर स्पष्ट होती है कि राय के ज्ञान के तीन स्त्रोत रहे हैं–

प्राचीन भारतीय साहित्य, 2 ग्रामीण परिवेश, 3 पाश्चात्य साहित्य। ललित निबंध लेखको में उच्च स्थान के अधिकारी कुबेरनाथ राय के प्रमुख निबंध संग्रह हैं–प्रियानीलकण्ठी, रस आखेटक, गंधमादन, निषाद बांसुरी, विषाद योग, पर्णमुकुट, महाकवि की तर्जनी, किरात नदी में चन्द्रमधु, पत्र मणिपूतूल के नाम, मन पवन की नौका, दृष्टि अभिसार, त्रेता के वृहतसाम, कामधेनु , मराल, उतर कुरु, चिन्मय भारत इत्यादि । कुबेरनाथ राय के अधिकांश निबंधों के शीर्षक संस्कृत से प्रभावित हैं। ललित निबंध के बारे में कुबेरनाथ राय स्वयं कहते है –''ललित निबंध शुद्ध मौज,शौकिया, मात्र आनंद से जुड़ी विधा नहीं है। इसमें एक अव्यक्त जीवन दृष्टि रहती है, वह शुद्ध गद्य काव्य न होकर एक दृष्टि सम्पन्न विधा है। इसी से यह एक ही साथ शास्त्र और काव्य दोनों हैं। ललित निबंध एक स्वयंपूर्ण एवं संपूर्ण वाड्.मय है।''

कुबेरनाथ राय का मन और मस्तिष्क सांस्कृति बोध और आध्यात्मिकता से परिपुष्ट था। टूटते परिवार, दुर्बल पड़े संस्कार , क्षीण होते आत्मीय रिशते, विस्मृत होती जातीय विरासत और शून्य होते इतिहास बोध को राय ने अपने आसपास के समाज और गांव, घर में बहुत ही नजदीक से देखा तथा नैतिकता , मर्यादा , मूल्य एवं आदर्श से और आधुनिकता की नकल के मूल्य एवं आदर्श से और आधुनिकता की नकल के कारण जनमानस जिस स्थिति से गुजर रहा ,ऐसे हीन बनते जनमानस का साक्षात्कार कर वे भीतर से क्षुब्ध हो उठे। इसी पश्चिमी प्रभाव का , इसी संताप का विवेचन इन्होंने अपने निबंधों में किया । यही कारण है कि विलुप्त होती संस्कृति और क्षरित होते विश्वास को लेकर एक गहरी तड़प उनके निबंधों में हैं।

कुबेरनाथ राय शांत, गंभीर और शिष्ट स्वभाव के व्यक्ति थे । वे अपना अधिकतर समय अध्ययन , अध्यापन व लेखन में व्यक्ति करते थे। अपने द्वारा किए गए रचना कार्य की आलोचना ,प्रत्यालोचना के प्रति वह बड़े तटस्थ और उदासीन थे। एक स्थान पर उन्होने लिखा है–''गांधी जी के सूत्र 'शान्तम् सहजम् सुन्दरतम्' में विश्वास करता हूँ । जो शांत है अर्थात उग्रबोध का वाहक नहीं ,जो सहज है अर्थात जो कृत्रिम सुख की तृषा से पीड़ित नहीं है, वही असली सुन्दर है। इसी असली सुन्दरता को राय ने अपने ललित निबंधों में व्यक्त किया है। इनकी मान्यता है कि मनुष्य को समस्त प्रकृति और ईश्वर से जोडकर देखे बिना मनुष्यत्व की पूरी पहचान ,उसके शुभ–अशुभ , सदृ–असद्, श्री –अश्री की पहचान बन ही नहीं सकती । राय के निबंध साहित्य में प्राचीन भारतीय संस्कृति को आधुनिक पर्यावरण में देखने की और परखने की अद्भुत दृष्टि सर्वत्र मिलती है। कुबेरनाथ राय ने जितने भी निबंधो की रचना की है वे सभी निबंध भारतीय प्राचीन संस्कृति को उजागर करते हुए उसमें आधुनिकता के नव प्राण फूंकते हैं। इनके निबंध इनकी सजीव अभिव्यक्ति का सफल साधन है। इनके निबंधों में नूतन उद्भावना शक्ति,नवीन भाव प्रणवता और नई विचार परम्परा के दर्शन होते हैं। इनके निबंधों को पढ़ना एक नया अनुभव पाना है।

अंत में कहां जा सकता है कि कुबेरनाथ राय आधुनिक निबंधकारों में प्रथम श्रेणी के निबंधकार है। उनका निबंध साहित्य, संस्कृति, इतिहास दर्शन और समकालीन मूल्य बोध से अनुप्राणित है। लालित्य में भी चिन्तन का पूर्ण उनके निबंधों को साकार बना देता है। इनके निबंधो में कल्पना की मधुमती भूमिका के साथ–साथ मानवीय संकल्पों, मूल्यों के मध्य उपलब्ध रुप–रस–गंध–स्पर्श शब्द की सुन्दर परिणातियों की दिगंत भूमि विद्यमान है।

डॉ0 निधि शर्मा
कांगड़ा (हि.प्र.)

प्रकृति का वरदान : गेहूं का ज्वारा

जब गेहूँ के बीज को अच्छी उपजाऊ जमीन में बोया जाता है तो कुछ ही दिनों में वह अंकुरित होकर बढ़ने लगता है और उसमें पत्तियां निकलने लगती है। जब यह अंकुरण पांच–छः पत्तों का हो जाता है तो अंकुरित बीज का यह भाग **गेहूं का ज्वारा** कहलाता है। औषधीय विज्ञान में गेहूं का ज्वारा काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है। गेहूं के ज्वारे का रस कैंसर जैसे कई रोगों से लड़ने की क्षमता रखता है।

प्रकृति ने हमें स्वस्थ, ऊर्जावान, निरोगी और आयुष्मान रहने के लिए हमें अनेक प्रकार के पौष्टिक फल, फूल, मेवे, तरकारियां, जड़ी–बूटियां, मसाले, शहद और अन्य खाद्यान्न दिये हैं। ऐसा ही एक संजीवनी का बूटा है गेहूं का ज्वारा। इसका वानस्पतिक नाम ''ट्रिटिकम वेस्टिकम'' है। डॉ. एन विग्मोर ज्वारे के 'रस' को ''हरित रक्त'' कहती है। इसे गेहूँ का ज्वारा या घास कहना ठीक नहीं होगा। यह वास्तव में अंकुरित गेहूँ है।

गेहूँ का ज्वारा एक सजीव, सुपाच्य, पौष्टिक और संपूर्ण आहार है। इसमें भरपूर क्लोरोफिल, किण्वक (एंजाइम्स), अमाइनो एसिड्स, शर्करा, वसा, विटामिन और खनिज होते हैं। क्लोरोफिल सूर्यप्रकाश का पहला उत्पाद है। अतः इसमें सबसे ज्यादा सूर्य की ऊर्जा होती है और भरपूर ऑक्सीजन भी।

पोशक तत्व

गेहूँ के ज्वारे क्लोरोफिल का सर्वश्रेश्ठ स्रोत हैं। इसमें सभी विटामिन्स प्रचुर मात्रा में होते हैं जैसे विटामिन ए, बी1,2, 3,5,6,8,12 और 17 (लेट्रियल); सी, ई तथा के । इसमें केल्शियम, मेग्नीशियम, आयोडीन, सेलेनियम, लौह, जिंक और अन्य कई खनिज होते हैं ।

लेट्रियल या विटामिन बी–17 बलवाल कैंसर रोधी है और मेक्सिको के ओएसिस ऑफ होप चिकित्सालय में पिछले पचास वर्ष से लेट्रियल के इंज़ेक्शन, गोलियों और आहार चिकित्सा से कैंसर के रोगियों का उपचार होता आ रहा है।

इतिहास

प्राचीन काल से ही हिन्दुस्तान के चिकित्सक गेहूँ के ज्वारों को विभिन्न रोगों जैसे अस्थि–संध शोथ, कैंसर, त्वचा रोग, मोटापा, डायविटीज आदि के उपचार में प्रयोग कर रहे हैं। हमारे कई त्यौहारों पर गेहूँ के ज्वारों को उठाने, पूजा करने के रिवाज सदियों से चले आ रहे हैं।

जैसे गणगौर हिन्दुस्तान के कई राज्यों जैसे राजस्थान, गुजरात और मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र में कुँवारी कन्याओं व सुहागिनों द्वारा मनाया जाने वाला त्यौहार है, जो बहुत धूमधाम से मनाया जाता है।

पहले दिन चैत्र कृष्ण ग्यारस को माताजी की 'मूठ' रखी जाती है। बॉस की छोटी–छोटी टोकरियों में गेहूँ के ज्वारे बोए जाते हैं। ज्वारे वाली परंपरागत जगह को माताजी की 'बाड़ी' कहते हैं। पूरे सप्ताह से बाड़ी की पूजा–अर्चना कर ज्वारों में पानी दिया जाता है और आरती भी की जाती है। ज्वारे लहराने के साथ ग्राम लक्ष्मी गाने लगती है– 'म्यारा हरिया ज्वारा हो कि गेहूँआ लहलहे..... और फिर चैत्र शुक्ल चतुर्थी को गणगौर माता विदा होती है। सजी–धजी शोभायात्रा के साथ तालाब–बावड़ी पर श्रद्धा के साथ ज्वारे विसर्जित किए जाते हैं।

पश्चिमी देशों में गेहूँ के ज्वारों से उपचार की पद्धति डॉ. एन. विग्मोर ने प्रारम्भ की थी। बचपन में उनकी दादी प्रथम विश्व युद्ध में घायल हुए जवानों का उपचार जड़ी–बूटियों, पैड़–पौधों और विभिन्न प्रकार की घासों

से किया करती थी।

तभी से उन्होंने जड़ी–बूटियों और विभिन्न घास के रस द्वारा बीमारियों के उपचार और अनुसंधान करना अपना शौक बना लिया। 50 वर्ष की उम्र में डॉ. एन. विग्मोर को आंत में कैंसर हो गया था। जिसके लिए उन्होंने गेहूँ के ज्वारों का रस और अपक्व आहार लिया और प्रसन्नता की बात थी कि एक वर्ष में वे कैंसर मुक्त हो गई। उन्होंने बोस्टन में एन विगमोर इन्स्टिट्यूट खोला जो आज भी काम कर रहा है। तब से लेकर अपनी मृत्यु तक वह गेहूँ के ज्वारे और अपक्व आहार द्वारा रोगियों का उपचार करती रही। उन्होंने इस विषय पर 35 पुस्तकें भी लिखी हैं।

अमाइनो एसिड और उनके कार्य

इसमें 8 आवश्यक और बचे हुए 16 में से 13 अमाइनो एसिड्स होते हैं। इनके कार्य संलग्न सारिणी में दर्शाये हैं।

- अमाइनो एसिड कार्य
- लाईसिन–आयुवर्धक
- ल्यूसिन–ऊर्जा और नाड़ी तंत्र को संवेदनशील बनाये रखना
- ट्रिप्टोफेन–त्वचा और केश का विकास
- फिनाइलएलेनीन–थायरॉइड हार्मोन के निर्माण में सहायक
- थ्रियोनीन–पाचन
- वेलीन–मस्तिष्क और मांसपेशियों में परस्पर सहयोग और सामंजस्य बनाये रखना
- मीथियोनीन–यकृत और वृक्क का शोधन
- एलेनीन–रक्त के निर्माण में सहायक
- आरजिनीन–वीर्यवर्धक
- ग्लूटेमिक एसिड–मस्तिश्क को जागरुक रखना
- एस्पार्टिक एसिड–ऊर्जा का उत्पादन
- ग्लाइसीन एसिड–ऊर्जा का उत्पादन
- प्रोलीन–ग्लूटेमिक एसिड अवशोषण
- सेरीन–मस्तिश्क को ऊर्जावान बनाये रखना
- आइसोल्यूसीन–भ्रूण का विकास
- हिस्टीडीन–श्रवण और नाड़ी तंत्र की विभिन्न क्रियाओं में सहायक

शक्तिशाली प्रति–ऑक्सीकारक

क्या होते हैं मुक्त कण या फ्री रेडिकल्स ?

शरीर में होने वाले विभिन्न चयापचय क्रियाओं में कुछ व्यर्थ और हानिकारक अणु भी बन जाते हैं। इन अणुओं में इलेक्ट्रोन्स की संख्या प्रोटीन की अपेक्षा कम होती है जिससे ये अति सक्रिय तथा अस्थिर होते हैं। इन्हें हम ''मुक्त कण'' कहते हैं और ये मौका मिलते ही हमारे स्वास्थ अणुओं से इलेक्ट्रोन चुरा लेते हैं, इस क्रिया को ऑक्सीडेशन कहते हैं। इलेक्ट्रोन खो कर हमारे स्वस्थ अणु भी मुक्त कणों की भांति व्यवहार करने लगते हैं और अपने अंतःकरण में बैठे प्रोटोन्स की इलेक्ट्रोन–पिपासा शांत करने हेतु अपना मुख्य काम छोड़

कर इलेक्ट्रोन्स का जुगाड़ करने निकल पड़ते हैं। इस तरह निरंतर इलेक्ट्रोन चुराने का एक श्रंखला–बद्ध सिलसिला शुरू हो जाता है, जिससे हमारी आयुवृद्धि की गति तेज हो जाती है, त्वचा में झुर्रियां बनने लगती हैं और हम विभिन्न बीमारियों जैसे उच्च रक्तचाप, मधुमेह, अस्थि–संध शोथ, पार्किंसन्स, कैंसर आदि का शिकार हो जाते हैं। मुक्त कण हमारे बाहय वातावरण और भोजन द्वारा भी शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।

प्रति –ऑक्सिकारक या एंटीऑक्सीडेंट मुक्त कणों से रक्षा करने के लिए हमारे शरीर में अनेक अणु जैसे विटामिन–ई, विटामिन–सी, बीटा–केराटीन, किण्वक आदि होते हैं, जिनमें कई अतिरिक्त इलेक्ट्रोन्स होते हैं और जो बिना अस्थिर हुए मुक्त कणों को इलेक्ट्रोन्स दान देकर उन्हें निश्क्रिय कर देते हैं। इन्हें हम ''प्रति–ऑक्सीकारक'' या एंटीऑक्सीकारक प्राप्त होते हैं तथा हमारे शरीर में भी कई प्रति–ऑक्सीकारक निरंतर बनते रहते हैं। एंटीऑक्सीडेंट आयुवर्धक और आरोग्यवर्धक होते हैं। ये डीएनए की संरचना में विकृति नहीं देते हैं, रक्त वाहिकाओं को स्वस्थ रखते हैं और त्वचा को युवा बनाये रखते हैं। गेहूँ के ज्वारे में कई शक्तिशाली प्रति–ऑक्सीकारक होते हैं, परंतु यहां हम चार विशिष्ट प्रति–ऑक्सिकारकों का वर्णन करेंगे ।

सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज

पी4डी1

म्यूको–पॉलीसेकराइड्स

क्लोरोफिल

सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज

सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज (एस ओ डी) एक किण्वक है जो कोशिकाओं का जीर्णोद्धार करता है और कोशिकाओं की सुपरऑक्साइड से होने वाली क्षति को कम करता है। सुपरऑक्साइड बहुत ही कम मुक्त कण हैं। यह त्वचा की दोनों परतों में पाया जाता है और स्वस्थ फाइब्रोब्लास्ट (जो त्वचा बनाने वाली कोशिकाए हैं) के निर्माण में सहायक हैं। एस ओ डी शरीर में जिंक, तांबा और मेंगनीज की उपयोगिता बढ़ाते हैं।

एस ओ डी उत्कृष्ट प्रति–ऑक्सीकारक और शोथ निवारक है, और मुक्त कणों के प्रभाव से बनने वाली झुर्रियों और त्वचा की जीर्णता को कम करता है। अनुसंधानकर्ता कहते हैं कि जैसे–जैसे हम प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होते हैं शरीर में एस ओ डी की मात्रा कम होती जाती है। सुपर ऑक्साइड डिसम्यूटेज उनमें विद्यमान धातुओं के आधार पर तीन वर्गों में बांटे गये हैं।

1. तांबा जिंक एस ओ डी जो कोशिका के साइटोप्लाज्म की सुरक्षा करते हैं ।
2. मेंगनीज एस ओ डी जो माइटोकोन्ड्रिया की सुरक्षा करते हैं।
3. निकल एस ओ डी जो कोशिकाओं के बाहर रहते हैं।

एस ओ डी आर्थ्राइटिस, पुरुष ग्रंथि रोग, कैंसर, कोर्नियल अल्सर, जलने से हुए घावों, आइ बी एस और धूम्रपान, विकिरण और कैंसररोधी दवाओं के दुश्प्रभावों के उपचार में सहायक हैं। इसकी क्रीम चेहरे की झुर्रियों, जलने से हुए घावों, त्वचा के घावों के गहरे दाग धब्बों आदि में बहुत उपयोगी हैं। यह हानिकारक यू वी किरणों से त्वचा की रक्षा करता हैं।

गेहूँ के ज्वारे, ब्रोकॉली, पत्तागोभी, जौ की घास और हरे पत्तेवाली तरकारियां इसके प्रमुख स्रोत हैं। इसके इंजेक्शन, जीभ के नीचे रखने वाली तथा एंटेरिक कोटेड गोलियां और क्रीम उपलब्ध हैं। आमाशय में बनने वाले अम्ल इसे निश्क्रिय कर देते हैं, इसलिए इसे जीभ के नीचे रखने वाली या एंटेरिक कोटेड गोलियों के रूप में ही दिया जाता है।

म्यूको–पॉलीसेकराइड्स

म्यूको–पॉलीसेकराइड्स सामान्य और जटिल शर्कराओं का मिश्रण होता है जो शरीर के रख–रखाव के लिए महत्वपूर्ण है। शरीर की कोशिकाओं निरंतर क्षतिग्रस्त और नष्ट होती रहती हैं। कोशिकाओं में जीर्णोद्धार तथा नई कोशिओं के निर्माण कार्य भी साथ–साथ चलता रहता है, जो जितना सुचारु और स्निग्धता से होता रहेगा हम उतना ही युवा व स्वस्थ बने रहेंगे। म्यूको–पॉलीसेकराइड्स खासतौर से हृदय और रक्त वाहिकाओं की क्षतिग्रसथ कोशिकाओं के रख–रखाव के काम को प्राथमिकता से करते हैं।

पी4डी1

पी4डी1 एक ग्लूको–प्रोटीन है। यह प्रति–ऑक्सीकारक की भांति कार्य करता है। इसके तीन मुख्य कार्य हैं।

1. यह डी एन ए और आर एन ए, जो शरीर निर्माण का मुख्य आधार हैं, के जीर्णोद्धार तथा नवीनीकरण को प्रोत्साहित करते है। ये कोशिकाओं की आयुवृद्धि और असामान्य विभाजन में अवरोध पैदा करते हैं और इस तरह हमें अपकर्षण (डीजनरेटिव) बीमारियों से बचाते हैं।
2. यह शरीर में शोथ को कम करता है। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार यह कोर्टिजोन से भी ज्यादा शक्तिशाली शोथ निवारक हैं। कई कन्फ्लेमेट्री रोगों जैसे आर्थ्राइटिस आदि के उपचार में गेहूँ के ज्वारे का रस अत्यंत प्रभावशाली है।
3. यह कैंसर कोशिकाओं की भित्तियों को कमजोर बनाते हैं, ताकि रक्त के श्वेत कण कैंसर कोशिकाओं में सहजता से प्रवेश कर उन्हें नश्ट कर सकें।

क्लोरोफिल

गेहूँ के ज्वारे का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है क्लोरोफिल। यह क्लोरोप्लास्ट नामक विशष प्रकार के कोषों में होता है। क्लोरोप्लास्ट सूर्यकिरणों की सहायता से पोशक तत्वों का निर्माण करते हैं। यही कारण है कि वैज्ञानिक डॉ. बर्शर क्लोरोफिल को ''संकेन्द्रित सूर्यशक्ति कहते है, वैसे तो हरे रंग की सभी वनस्पतियों में क्योंकि क्लोरोफिल के अलावा इनमें 100 अन्य पौष्टिक तत्व भी होते हैं।

सभी जानते हैं कि मानव रक्त में हीमोग्लोबिन होता है। इस हीमोग्लोबिन में एक लाल रंग का द्रव्य होता है जिसे हीम कहते हैं। हीम और क्लोरोफिल की रासायनिक संरचना में बहुत समानता होती है। दोनों में र्कान–हाइड्रोजन, ऑक्सीजन अैर नाइट्रोजन के परमाणुओं की संख्या तथा उनका विन्यास लगभग एक जैसा होता है। हीम और क्लोरोफिल की संरचना में केवल एक ही अंतर है, क्लोरोफिल के केन्द्र स्थान में मेग्नीशियम होता है, जबकि हीमोग्लोबिन के केन्द्र स्थल में लौहा होता है।

हमारा रक्त हल्का क्षारीय है और उसका हाइड्रोजन अणु गुणांक pH7.4 है। ज्वारे का रस भी हल्का क्षारीय है और उसका pHभी 7.4 है। इसलिए ज्वारे का रस शीघ्रता से रक्त में अवशोषित हो जाता है और शरीर के उपयोग में आने लगता है।

गेहूँ के ज्वारे से मानव को संपूर्ण पोशण मिल जाता है। सावधानी पूर्वक चुनी हुई 23 किलो तरकारियों जितना पोषण 1 किलो गेहूँ के ज्वारे के रस से प्राप्त हो जाता है। सिर्फ ज्वारे का रस पीकर मानव पूरा जीवन बिता सकता है। 100 ग्राम ताजा रस में 90–100 मि.ग्राम क्लोरोफिल प्राप्त हो जाता है।

क्लोरोफिल से हमें मेग्नीशियम प्राप्त होता है। हमारी प्रत्येक कोशिका में मेग्नीशियम सूक्ष्म मात्रा में होता है। परन्तु यह शरीर के लिए है बहुत महत्वपूर्ण । संपूर्ण शरीर में लगभग 50 ग्राम मेग्नीशियम होता है। मेग्नीशियम हमारी अस्थियों के निर्माण के लिए आवश्यक खनिज है। यह नाड़ियों और मांसपेशियों को तनाव

रहित अवस्था में रखता है। शरीर में कैल्शियम और विटामिन सी का संचालन, नाड़ियों और मांसपेशियों की उपयुक्त कार्यशीलता के लिये मैग्नेशियम शरीर के भीतर लगभग तीन सौ ऍन्जाइम्स की सक्रियता के लिए आवश्यक है। मैग्नेशियम के निम्न स्तरों और उच्च रक्तचाप तथा मधुमेह में स्पष्ट अंतर्संबंध स्थापित हो चुका है। व्यायाम एवं शारीरिक मेहनत करने वाले लोगों को मैग्नेशियम सम्पूरकों की आवश्यकता है। मैग्नेशियम की कमी से महिलाओं में कई समस्याएं दिखाई देती हैं, जैसे पॉवों की मांसपेशियॉ कमजोर होना (जिसे रेस्टलेस लेग सिंड्रोम होता है), पॉवों में बिवाइयां फटना, पेट की गड़बड़ी, एकाग्रता में कमी, रजोनिवृत्ति संबंधी समस्याओं का बढ़ना, मासिक–धर्म पूर्व के तनाव में वृद्धि आदि।

क्लोरोफिल से लाभ

क्लोरोफिल हमें तीन प्रकार से लाभ देता हैः–

1. शोधन–घावों के लिए क्लोरोफिल अत्यंत प्रबल कीटाणुनाशक है। यह फंगसरोधी भी है और शरीर से टॉक्सिन्स का विसर्जन करता है। यह कई रोग पैदा करने वाले जीवाणु को नष्ट करता है और उनके विकास को बाधित करता है। यकृत का शोधन करता है।
2. एंटी–इन्फ्लेमेट्री–यह शरीर में इन्फ्लेमेशन को कम करता है। अतः आर्थ्राइटिस, आमाशय शोध, आंत्र शोथ, गले की खराश आदि में अत्यंत लाभदायक हैं।
3. पोषण – यह रक्त बनाता है, आंतों के लाभप्रद कीटाणुओं को भी पोषण देते हैं।

रस के औषधीय उपयोग

1. कैंसर गेहूँ के ज्वारे कैंसर पर कैसे असर दिखाते है ?

ऑक्सीजन को अनुसंधानकर्ता कैंसर कोशिकाओं को नेस्तनाबूत करने वाली 7.6239 मि.मी. केलीबर की वो गोली मानते हैं, जो गेहूँ के ज्वारे रूपी ए.के.47 बन्दूक से निकल कर कैंसर कोशिकाओं को चुन–चुन कर मारती है। सर्व प्रथम तो इसमें भरपूर क्लोरोफिल होता है, जो शरीर को ऑक्सीजन से सराबोर कर देता है। क्लोरोफिल शरीर में हीमोग्लोबिन का निर्माण करता है, मतलब कैंसर कोशिकाओं को ज्यादा ऑक्सीजन मिलती है और ऑक्सीजन की उपस्थिति में कैंसर का दम घुटने लगता है।

गेहूँ के ज्वारों में विटामिन बी–17 या लेट्रियल और सेलेनियम दोनों होते हैं। ये दोनों ही शक्तिशाली कैंसररोधी है। क्लोरोफिल और सेलेनियम शरीर की रक्षा प्रणाली को शक्तिशाली बनाते हैं। गेहूँ का ज्वारा भी रक्त के समान हल्का क्षारीय द्रव्य है। कैंसर अम्लीय माध्यम में ही फलता फूलता है।

गेहूँ के ज्वारा में विटा–12 को मिलाकर 13 विटामिन, कई खनिज जैसे सेलेनियम और 20 अमाइनो एसिड्स होते हैं। इसमें एंटीऑक्सीडेंट किण्वक सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज और अन्य 30 किण्वक भी होते हैं। एस.ओ.डी. सबसे खतरनाक फ्री–रेडिकल रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पिसीज को हाइड्रोजन परऑक्साइड (जिसमें कैंसर कोशिका का सफाया करने के लिए एक अतिरिक्त ऑक्सीजन का अणु होता है) और ऑक्सीजन के अणु में बदल देता है।

सन् 1938 में महान अनुसंधानकर्ता डॉ. पॉल गेरहार्ड सीजर, एम.डी. ने बताया था कि कैंसर का वास्तविक कारण श्वसन क्रिया में सहायक एंजाइम साइटोक्रोम ऑक्सीडेज का नश्ट होना है। सरल शब्दों में जब कोशिका में ऑक्सीजन उपलब्ध न हो या सामान्य श्वसन क्रिया बाधित हो जाये तभी कैंसर जन्म लेता है।

ज्वारों में एक हार्मोन एक्सीसिक एसिड (ए बी ए) होता है जो हमें अन्यत्र कहीं मिलता है। डॉ. लिविंग्स्टन व्हील के अनुसार एब्सीसिक एसिड कोरियोनिक गोनेडोट्रोपिन हार्मोन को निष्क्रिय करता है और वे ए बी ए

को कैंसर उपचाार का महत्वपूर्ण पूरक तत्व मानती थी। डॉ. लिविंग्स्टन ने पता लगाया था कि कैंसर कोशिका कोरियोनिक गोनेडोट्रोपिन से मिलता जुलता हार्मोन बनाती हैं। उन्होंने यह भी पता लगाया था कि गेहूँ के ज्वारे को काटने के 4 घंटे बाद उसमें ए बी ए की मात्रा 40 गुना ज्यादा होती है। अतः उनके मतानुसार ज्वारे के रस को थोड़ा सा तुरंत और बचा हुआ 4 घंटे बाद पीना चाहिये ।

2. गेहूँ के ज्वारे में अन्य हरी तरकारियों की तरह भरपूर ऑक्सीजन होती है। मस्तिष्क और संपूर्ण ऊर्जावान तथा स्वस्थ रखने के लिए भरपूर ऑक्सीजन आवश्यक है।
3. डॉ. बरनार्ड जेन्सन के अनुसार गेहूँ के ज्वारे का रस कुछ ही मिनटों में पच जाता है और इसके पाचन में बहुत कम ऊर्जा खर्च होती है।
4. यह कीटाणुरोधी हैं, उन्हें नष्ट करता है और उनके विकास को बाधित करता है।
5. यह शरीर से हानिकारक पदार्थों (टॉक्सिन्स), भारी धातुओं और शरीर में जमा दवाओं के अवशेष क विसर्जन करता है।
6. यदि इसका सेवन 7–8 महीने तक किया जाये तो यह मुहॉसों और उनसे बने दाग, धब्बे और झाइयां सब साफ हो जाते हैं।
7. यह त्वचा के लिए प्राकृतिक साबुन का कार्य करता हैं और शरीर को दुर्गंध रहित रखता है।
8. यह दांतों को सड़न से बचाते है।
9. यदि 5 मिनट तक गेहूँ के ज्वारे का रस मुंह में रखें तो दांत का दर्द ठीक करता है।
10. इसके गरारे करने से गले की खारिश ठीक हो जाती है।
11. गेहूँ के ज्वारे का रस नियमित पीने से एग्जीता और सोरायसिस भी ठीक हो जाते हैं।
12. ज्वारे का रस पीने से बाल समय से पहले सफेद नहीं होते हैं।
13. ज्वारे का रस पीने से शरीर स्वस्थ, ऊर्जावन, सहनशील, आध्यात्मिक और प्रसन्नचित बना रहता है।
14. यह पाचन शक्ति को बढ़ाता है।
15. यह समस्त रक्त संबंधी रोगों के लिए रामबाण औषधि है।
16. ज्वारे के रस का एनीमा लेने से आंतों और पेट के अंगों का शोधन होता है।
17. यह कब्ज ठीक करता है।
18. यह उच्च रक्तचाप कम करता है और कोशिकाओं (Fine blood vessels or capillaries) का विस्तारण करता है।
19. यह स्थूलता या मोटापा कम करता है क्यों कि यह भूख कम करता है, बुनियादी फ्चापचय दर और शरीर में रक्त के संचार को बढ़ाता है।

उगाने की विधि

घर पर गेहूँ के ज्वारे बनाना के लिए इन चीजों की आवश्यकता होगी।

आवश्यक सामान 1–अच्छी किस्म के जैविक गेहूँ कें बीज । 2–अच्छी उपजाऊ मिट्टी और उम्दा जैविक या गोबर की खाद। 3–मिट्टी के 10–12'' व्यास के 3–4'' गहरे सात गोलाकार गमले जिसमें भी नीचे छेद हों। आप अच्छे प्लास्टिक की 20''x 10'' x2'' नाप की गार्डनिंग ट्रे, जिसमें नीचे कुछ छेद हो, भी ले सकते हैं। गेहूँ भिगोने के लिए कोई पात्र या जग। 4–मिक्सी या ज्यूसी। 5–पानी देने के लिए स्प्रे–बोटल या

पौधों को पानी पिलाने वाला झारा व कैंची । विधि 1–हमेशा जैविक बीज ही काम में लें, ताकि आपको हमेशा मधुर व उत्कृष्ट रस प्राप्त हो जो विटामिन और खनिज से भरपूर हो। रात को सोते समय लगभग 100 ग्राम गेहूँ एक जग में भिगो कर रख दें। 2–सभी गमलों के छेद को एक पतले पत्थर के टुकड़े से ढक दें। अब मिट्टी में रासायनिक खाद या कीटनाशक के अवशष न हों और हमेशा जैविक खाद का ही उपयोग करें। पहले गमले पर रविवार, दूसरे गमले पर सोमवार, इस प्रकार सातों गमलों में, जिस प्रकार आपने रविववार लिखा था, गेहूँ एक परत के रूप में बिछा दें। गेहूँओं के ऊपर थोड़ी मिट्टी डाल दें और पानी से सींच दें। गमले को किसी छायादार स्थान जैसे बरामदे या खिड़की के पास रख दें, जहां पर्याप्त हवा और आकाश आता हो पर धूप की सीधी किरणे गमलों पर नहीं पड़नी हो। अगले दिन सोमवार वाले गमले में गेहूँ बो दीजिये और इस तरह रोज एक गमले में गेहूँ बाते रहें। 4–गमलों में रोजाना कम से कम दो बार पानी दें ताकि मिट्टी नम और हल्की गीली बनी रहे। शुरू के दो–तीन दिन गमलों को गीले अखबार से भी ढक सकते हैं। जब गेहूँ के ज्वारे एक इंच से बड़े हो जाये तो एक बार ही पानी देना पर्याप्त रहता है। पानी देने के लिए स्प्रे बोटल का प्रयोग करे। गर्मी के मौसम में ज्यादा पानी की आवश्यकता रहती है। पर हमेशा ध्यान रखे कि मिट्टी नम और गीली बनी रहे और पानी की मात्रा ज्यादा भी न हो। 5–सात दिन बाद 5–6 पत्तियों वाला 6–8 इंच लम्बा ज्वारा निकल आयेगा। इस ज्वारे को जड़ सहित उखाड़ ले और पानी से अच्छी तरह धो लीजिए। इस तरह आप रोज एक गमले से ज्वारे तोड़ते जाइये और रोज एक गमले में ज्वारे बोते भी जाइये ताकि आपको निरन्तर ज्वारे मिलते रहे। 6–अब धुले हुए ज्वारों की जड़ काट कर अलग कर दें तथा मिक्सी के छोटे जवार में थोड़ा पानी डालकर पीस लें और चलनी से गिलास में छानकर प्रयोग करे। ज्वारों के बचे हुए गुदे को आप त्वचा पर निखार लाने के लिए मल सकते हैं। आप हाथ से घुमाने वाले ज्यूसर से भी निकाल सकते हैं।

सेवन का तरीका

ज्वारे का रस सामान्यतः 60–120 एमएल प्रति दिन या प्रति दूसरे दिन खाली पेट सेवन करना चाहिये। यदि आप किसी बिमारी से पीड़ित है। तो 30–60 एमएल रस दिन में तीन चार बार तक ले सकते हैं। इसे आप सप्ताह में 5 दिन सेवन करें। कुछ लोगों को शुरू में रस पीने से उबकाई सी आती है, तो कम मात्रा से शुरू करें और धीरे–धीरे मात्रा बढ़ायें। ज्वारे के रस में फलों और सबिज्यों के रस जैसे सेब फल, अन्नानांस आदि के रस को मिलाया जा सकता है। हां इसे कभी भी खट्टे रसों जैसे नीबू, संतरा आदि के रस में नहीं मिलाएं क्योंकि खटाई ज्वारे के रस में विद्यमान एंजाइम्स को निश्क्रिय कर देती है। इसमें नमक, चीनी या कोई अन्य मसाला भी नहीं मिलाना चाहिये। ज्वारे के रस की 120 एम एल मात्रा बड़ी उपयुक्त मात्रा है और एक सप्ताह में इसके परिणाम दिखने लगते हैं। डॉ. एन. विग्मोर ज्वारे के रस के साथ अपक्व आहार लेने की सलाह भी देती थी।

गेहूँ के ज्वारे चबाने से गले की खारिश और मुंह की दुर्गंध दूर होती है। इसके रस के गरारे करने से दांत और मसूड़ों के इन्फेक्शन में लाभ मिलता है। स्त्रियों को ज्वारे के रस डूश लेने से मूत्राशय और योनि के इन्फेक्शन, दुर्गंध और खुजली में भी आराम मिलता है। त्वचा पर ज्वारे का रस लगाने से त्वचा का ढीलापन कम होता है और त्वचा में चमक आती है।

राकेश कुमार शर्मा,
हिन्दी अधिकारी
एन.आई.ओ.,गोवा

निर्देश

भारत के शासन में जब तक होगी नहीं कड़ाई।
तब तक पाक नहीं रोकेगा अपनी छदम लड़ाई।।
झुलस रही है कब से देखों सुरभित केसर क्यारी।
दहक रही है कब से देखो चिनार में चिनगारी।।

जर्जर कर दी अर्थव्यवस्था है नकली नोटों से।
कराह रही आज मानवता दानवीय चोटों से।।
करते जब तक माफ रहेंगे हट की आप ढिठाई।
तब तक पाक नहीं रोकेगा अपनी छद्म और लड़ाई।।

भरा पड़ा इतिहास रो रहा निन्दनीय भूलों का।
देगा कौन हिसाब हमें सुरभित शहीद फूलों का।
पाक जनित गम्भीर समस्याओं में रहते जकड़े।
फिर भी नेता रोज कह रहे दुश्मन से हम तगड़े।।
सावधान! जब तक न करेंगे अरि की आप कसाई।
तब तक पाक नहीं रोकेगा अपनी छद्म लड़ाई।।
जिनके बल पर शत्रु लड़ रहा उनसे नाता तोड़ो।
फिर अपने ही बल विक्रम से दुश्मन का मुख फोड़ो।।

गिद्ध यहॉ जो घुस आए हैं उनके पंख मरोड़ों।
खाक सार हो जाएँ न जब तक तब तक इन्हें न छोड़ो।
नहीं धूर्तता जाएगी जब तक होगी न छराई।
तब तक पाक नहीं छोड़ेगा अपनी छद्म लड़ाई।।

आसतीन के सापों को अब सीमा पार धकेलो।
मुड़कर यदि फुफकार भरे तो इनके देश उचेलो।।

जो नर्तकी तवायफ बोला भारत की नारी को।
समझो वो ही जला रहा है केसर की क्यारी को।।
दूर न होगी जब तक ऐसे पातक की कुटिलाई।
तब तक पाक नहीं छोड़ेगा अपनी छद्म लड़ाई।।

उमर तुम्हारी नयी उम है रौद्र रूप दिखलाओ।
हत्यारों को गद्दारों को नाकों चने चबाओ।।
उमर बहुत है शाह, गिलानी तनिक उम का ख्याल करो।
ये जम्मू कश्मीर तुम्हारा, तुम इसको आबाद करो।।
केसर की सुगन्ध से सुरभित होने दो पुरवाई।
तब तक पाक नहीं छोड़ेगा अपनी छद्म लड़ाई।।

श्रमित सान्त्वना देना चाहो यदि घाटी के दिल को।
तो तुरन्त दो भेज वहाँ पर श्री के.पी.एस.गिल को।।
जिसकी है विख्यात हिन्द में शैली सम्मोहन की।
जनता राह निहार रही है प्यारे जगमोहन की।।
फिर गोली की जगह सुनिश्चित गूँजेगी शहनाई।
तब तक पाक नहीं छोड़ेगा अपनी छद्म लड़ाई।।
भारत के शासन में जब तक होगी नहीं कड़ाई।
तब तक पाक नहीं छोड़ेगा अपनी छद्म और लड़ाई।।

श्री कृष्ण निर्मल
शिक्षा अधिकारी, नई दिल्ली

अक्षर

अक्षर से भाषा का जन्म होता है और भाषा से साहित्य का सृजन होता है। अतः अक्षर भाषा एवं साहित्य की अनमोल इकाई है। शून्य से नौ अंकों का सृजन हुआ है और नौ अंकों से गणित का निर्माण हुआ है और हमारे लिए कितने गौरव की बात है कि ये नौ अंक भारतीय मनीशियों के दैवीय चिन्तन का अलौकिक अनुसंधान है। गणित के इन नौ अंकों से आगे कोई भी विदेशी विद्वान अंक नहीं बना सका।

आप देखेंगे कि गणित के इन नौ अंकों का एक विज्ञान है। हम अपने भारतीय सैनिकों को नौजवान कहते हैं, इनको दस जवान, बीस जवान या इससे अधिक जवान क्यों नहीं कहते ? इसका उत्तर यह है कि नौ का पहाड़ा जब हम नौ तक लिखते हैं तो हर बार आने वाले अंकों का योग नौ ही आता है। जो एक विलक्षणता का द्योतक है। जैसे –

9 × 1	09,	0 + 9	09
9 × 2	18,	1 + 8	09
9 × 3	27,	2 + 7	09
9 × 4	36,	3 + 6	09
9 × 5	45,	4 + 5	09
9 × 6	54,	5 + 4	09
9 × 7	63,	6 + 03	09
9 × 8	72,	7 + 02	09
9 × 9	81,	8 + 01	09

शून्य के संसर्ग से इकाई का मूल्य दशगुना हो जाता है और दशमलव तो भारतीय विदुशी लीलावती के मस्तिष्क की उपज है ही।

अक्षर और शून्य दोनों ही अक्षर है, जिसका अर्थ है – यस्य क्षरणं, क्षयं वा न भवति– तदक्षरम् अर्थात् जिसका क्षरण या विनाश नहीं होता है। वह अक्षर कहलाता है। भारतीय दर्शन में अक्षर को ब्रह्म कहा गया है। हमारा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अक्षर में समाहित है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में अक्षर का प्रतिपादन इस प्रकार किया है। यथा –

''अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते ।'' श्लो 03 अध्याय 8 अर्थात् अविनाशी और दिव्यजीव ब्रह्म कहलाता है। उसका नित्य स्वभाव अध्यात्म या आत्म कहलाता है।

जो वस्तु सत्य है वह सर्वदा सत्य ही रहेगी और जब सत्य होगी तो निश्चित मंगलकारी होगी और जब मंगलकारी होगी तो वह निश्चित ही सुन्दर होगी। अतः यदि हमारा वर्तमान सत्य की आधारशिला पर है तो भविष्य अवश्य ही अमंगलहारी होगा और फिर अन्त में भूतकाल तो स्वतः ही मांगलिक इतिहास होगा ही, यह ध्रुव सत्य है।

स्थिति के लिए आधार अपेक्षित है, क्योंकि निराधार का कोई अस्तित्व नहीं होता। अतः हमारा जीवन तथा साहित्य, सत्यं, शिवं, सुन्दरम् का आदर्श होना चाहिए। इसके अभाव में ये दोनों ही निष्प्राण हैं। साहित्य का अर्थ है – सहितेन साहित्यम्। अर्थात् साहित्य वह है जिसमें मानवता के हित की शुभकामना की गयी हो, यदि ऐसा नहीं तो वह कोरा – शब्द जाल मात्र है तथा समाज का विनाशक होगा।

सत्यं शिवं सुन्दरम् में शिवं तथा सुन्दरम् दोनों ही सत्य पर आधारित हैं। ये दोनों ही सत्य के अभाव में अस्तित्त्वहीन है। धरती जोकि अपने ऊपर सबको धरती है के विषय में अनेकानेक कथाएँ प्रचलित हैं। यथा–कुछ लौकिक मान्यताओं के अनुसार पृथ्वी शेषनाग के फन पर विराजमान है तो कुछ के अनुसार गौश्रृंग पर अवस्थित है और कुछ के अनुसार कच्छव की पीठ पर स्थित है। अब उत्सुकता यह जागृत होती है कि क्रमशः शेषनाग, गाय तथा कच्छव किसके ऊपर टिके हुए हैं ? इसके उत्तर में सामान्य निरुत्तर हो जाते हैं। इसका सटीक उत्तर हमें वेद के निम्नलिखित मंत्र से प्राप्त होता है :–

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
सदाधार पृथ्वीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविशा विधेम ।। यजुर्वेद : 13 / 8

सर्वप्रथम महानतेज का भण्डार जो स्वयं प्रकाश स्वरूप है, उससे ही संसार को प्रकाशित करने वाले सूर्यचन्द्रमा उत्पन्न हुए। वह संसार से उत्पन्न होने से पूर्व विद्यमान था। वह परमात्मा पृथ्वी और अन्तरिक्ष का आधार है। हम लोग ऐसे परमात्मा की उपासना करें। इस मंत्र से यह सिद्ध हो गया कि पृथ्वी सत्य पर ही टिकी हुई है और वह परमात्मा नित्य, अखण्ड अनन्त, अनादि, निर्विकार तथा सम्पूर्ण सृष्टि का रचयिता है।

मनुष्य चाहे किसी भी देश, धर्म व जाति का हो वह सामान्य अवस्था से उठकर दर्शन की ऊँचाई पर चिन्तन करता है तो फिर उसके मुख से सदा सत्य बात ही निकलेगी। मैं यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि ऋग्वेद के उक्तमंत्र का समर्थन उर्दू साहित्य के एक आदरणीय विद्वान ने इस प्रकार किया है –

बनाए अपनी हिक़मत से ज़मी और आसमां तूने।
दिखाये अपनी क़ुदरत के हमें क्या–क्या निशां तूने।।
समोया अपने हाथों से मिजाज़े जिस्म जां तूने।
नहीं, मौक़ूफ़ खल्ला की तेरी इस एक दुनियां पर।
किये है। ऐसे–ऐसे सैकड़ों पैदा जहाँ तूने।
न होती ग़र ख़ुदी हममे ंतो जो तू था वही हम थे।
ये पर्दा किसलिए थारव डाला है दरम्यां तूने। अज्ञात

मैं उपर्युक्त पंक्तियों का सम्मान करता हुआ यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि वह परमात्मा सर्वशक्तिशाली है तथा पूर्ण है। उसकी सर्म्पूणता का परिचय हमें निम्नमंत्र से प्राप्त होता है –

ओऽम् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाविशिश्यते।।

अर्थात् वह परमात्मा पूर्ण है, यह जगत स्वसत्ता में पूर्ण है, पूर्ण परमेश्वर से ही यह पूर्ण जगत उदय हुआ है। पूर्ण परमेश्वर का पूर्णरूप ले पूर्णरूप को अपने में धारण कर फिर भी भगवान पूर्ण ही रह जाता है। जैसे–शून्य में से शून्य घटाने पर शून्य ही शष रहता है तथा शून्य का शून्य में गुणा करने पर शून्य ही रहता है। अतः हर स्थिति में शून्य (परमात्मा) पूर्ण ही रहता है। इसलिए हमें उस पूर्ण ब्रह्म की ही उपासना करनी चाहिए।

अब हम वर्णमाला के विषय में चिन्तन करें तो यह स्पष्ट होता है कि अक्षर या वर्ण के योग से शब्द की रचना होती है। चूँकि वर्ण, अक्षर है, अतः उसके संयोग से निर्मित शब्द भी अक्षर या अमर होगा ही। इसी कारण शब्द को ब्रह्म कहा गया है–शब्द एवं ब्रह्म। जब हम शब्द के विषय में चिन्तन करते हैं तो अनायास ही यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि शब्द सार्थक ध्वनिमात्र रह जाता है। अब यहाँ एक और जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि शब्द एवं अर्थ में शब्द प्रथम है या अर्थ । कुछ विद्वान शब्द को प्रथम स्वीकार करेंगे क्योंकि शब्द ही प्रथम वाणी से बोला जाता है और बाद में कानों से सुना जाता है और कुछ विद्वान यह मानेंगे कि अर्थ पहले से ही शब्द में निहित है। पर मेरे विचार से शब्द और अर्थ दोनों ही समवेत है; क्योंकि जब शब्द होगा तो उसमें अर्थ अवश्य ही होगा। इस प्रकार शब्द के बिना अर्थ की कल्पना ही नहीं की जा सकती और अर्थ के बिना शब्द की। अतः शब्द अर्थ दोनों सम्पृक्त हैं। इसका समर्थन सरस्वती पुत्र महाकवि कालिदास ने अपने 'रधुवंश महाकाव्यम्' के मंगलाचरण में इस प्रकार करते हैं –

वागर्थावि सम्प्रक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतः वितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ।।

मैं कालिदास शब्द और अर्थ की भांति मिले हुए संसार के मातापिता स्वरूप भगवान शिव तथा माता पार्वती की शब्द और अर्थ के समुचित ज्ञान की प्राप्ति के लिए वन्दना करता हूँ। इनको एक दूसरे से उसी प्रकार अलग नहीं किया जा सकता जैसे शब्द से अर्थ को और अर्थ से शब्द को।

उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि सत्य पर आधारित मानव का जीवन ही कल्याणकारी होगा। इसके अतिरिक्त प्रकृति में ऐसी कोई औषधि तथा वेदों में कोई मंत्र नहीं जो मानव जीवन का मंगल कर सके। अतः हमारा व्यवहार दूसरों के प्रति सुखदायक होना चाहिए। विशेषतया वाणी मधुमय रस परिपाक होनी चाहिए। मधुरवाणी मुख का अलंकार होती है और वाणी का शब्द कभी नष्ट नहीं होता। इस सन्दर्भ में राजा भर्तृहरि कहते हैं –

''क्षीयन्ते खलु भूशणानि सर्वं वाग्भूषणं भूषणम्।''

आज वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में यदि हम चिन्तन करते है। तो हम देखते हैं कि न तो हमारा सामाजिक जीवन सन्तोषजनक है और न राष्ट्रीय परिवेश यदि हम राष्ट्र से भ्रष्टाचार, अत्याचार और अलगाववाद को दूर करना चाहते हैं तथा राष्ट्रीय स्तर पर सत्यं शिवं सुन्दरम् का आदर्श चाहते है तो हमें सम्मिलित प्रयास करने होंगे। इसके लिए हम सर्वदा प्रयासरत व आशान्वित रहें।

श्री कृष्ण निर्मल
शिक्षा अधिकारी, नई दिल्ली

आम आदमी की पीड़ा का रचनाकार : दुष्यन्त कुमार त्यागी

स्वातंत्र्योत्तर काल के साठोत्तरी कवियों में दुष्यंत कुमार त्यागी सर्वाधिक लोकप्रिय एवं बहुचर्चित नाम है। सर्जनात्मक प्रतिभा के धनी इस रचनाकार ने उपन्यास, नाटक, काव्य–नाटक, रेडियो नाटक, नई कविता और गज़ल जैसी समस्त विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई। 'सूर्य का स्वागत' (1957), 'आवाजों के घेरे' (1963), 'जलते हुये वन का बसंत', 'अपनी पहचान' काव्य संग्रहों के अतिरिक्त 'एक कण्ठ विषपायी' (1963) काव्य नाटक, 'छोटे–छोटे सवाल' (1964) उपन्यास, 'ऑगन में वृक्ष' (1968) उपन्यास एवं 'साये में धूप' (1975) ग़ज़ल संग्रह आदि आपकी प्रकाशित कृतियाँ हैं तथा 'मसीहा मर गया' (रेडियो नाटक), 'दुहरी जिन्दगी' (उपन्यास), 'मन के कोण' (नाटक) आदि अप्रकाशित कृतियाँ हैं जिसके कारण दुष्यंत कुमार हिन्दी जगत में लोकप्रियता के शिखर पर पहुँच गये। साहित्य पत्रिका 'अक्षरा' में दुष्यंत कुमार के कृतित्व पर केन्द्रित अपने आलेख में राधेलाल बिजधावने लिखते हैं–

''बीसवीं सदी के छठे दशक के दुष्यंत कुमार 'परदेशी' ने अपनी काव्य रचनाओं का आरम्भ गीतों से किया। रूमानी संवेदनाओं के गीतों के साथ दुष्यंत कुमार ने नई कविताओं का भी सृजन किया जो कालजयी बन गई। दुष्यंत कुमार ने बार–बार अभिव्यक्ति का माध्यम बदला। पहले गीत लिखे, फिर नई कविताएँ, उपन्यास और काव्य नाटक, इसके बाद वे अचानक ग़ज़लों की तरफ मुड़ गये। यह उनके लिए शब्द क्रांति का समय था। ग़ज़लों में उनकी साहित्यिक श्रेष्ठता का कोई प्रतिवाद नहीं था। दुष्यंत कुमार ने ग़ज़लों में सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक चिंतन तथा विसंगतियों को पूरी ईमानदारी और विश्वास के साथ प्रस्तुत किया।''[1]

दुष्यंत को ग़ज़ल लिखने की प्रेरणा शमशेर से मिली थी किन्तु उन्होंने ग़ज़ल का स्वरूप और ढाँचा बदलकर उसको इस तरह मोड़ा कि ग़ज़ल आम आदमी की पीड़ा की अभिव्यक्ति का साधन बन गई। सवाल यह उठता है कि नई कविता लिखते हुये दुष्यंत ने ग़ज़ल के क्षेत्र में क्यों प्रवेश किया ? इसको स्पष्ट करते हुये स्वयं कहते हैं कि –''बार–बार मुझसे यह सवाल पूछा गया है और यह कोई बुनियादी सवाल नहीं है कि मैं ग़ज़लें क्यों लिख रहा हूँ ? यह सवाल कुछ ऐसा ही है जैसे बहुत दिनों तक कोट–पतलून वाले आदमी को एक दिन धोती–कुर्ता में देखकर आप उससे पूछें कि तुम धोती कुर्ता क्यों पहनने लगे ? मैं महसूस करता हूँ कि किसी भी कवि के लिए कविता में एक शैली से दूसरी शैली की ओर जाना कोई अनहोनी बात नहीं बल्कि एक सहज और स्वाभाविक प्रक्रिया है किन्तु मेरे लिए बात सिर्फ इतनी नहीं है। सिर्फ पोशाक या शैली बदलने के लिए मैंने ग़ज़लें नहीं कहीं। उसके कई कारण है। जिनमें सबसे मुख्य हैं कि मैंने अपनी तकलीफ को ..... उस शबीद तकलीफ को, जिससे सीना फटने लगता है, ज्यादा से ज्यादा सच्चाई और समग्रता के साथ, ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँचाने के लिए ग़ज़ल कही है।''[2]

दुष्यंत कुमार ने अपने 'साये में धूप' ग़ज़ल संग्रह में 52 ग़ज़लें लिखी हैं। जिसका प्रकाशन 1975 में हुआ। इस समय देश में आपातकाल की घोषणा हो चुकी थी, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता छीन ली गई थी तथा समाज चेतनाहीन हो गया था, व्यवस्था के विरोध में कुछ भी बोलना और लिखना कठिन था। इन विषम परिस्थितियों में दुष्यंत कुमार की वाणी मौन नहीं रह सकी, उन्होंने खुलकर उसकी आलोचना की –

ये जुबाँ हमसे सी नहीं जाती।
जिन्दगी है कि जी नहीं जाती।।[3]

सरकारी विभाग में नौकरी करते हुए इंदिरा शासन और आपातकाल के विरोध में बोलना आसान बात नहीं थी किन्तु निर्भीकता उनके व्यक्तित्व का गुण है। अन्याय, अधर्म के सामने उन्होंने कभी सिर नहीं झुकाया। चुप रहना उनके स्वभाव में नहीं था। उन्होंने कहा –

कल नुमाइश में मिला वो चीथड़े पहने हुए,
मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिन्दुस्तान है।
मुझमें रहते हैं करोड़ों लोग चुप कैसे रहूँ,
हर ग़ज़ल अब सल्तनत के नाम एक बयान है।[4]
पक गई है। आदतें, बातों से सर होंगी नहीं,
कोई हंगामा करो, ऐसे गुजर होगी नहीं।[5]
वो आदमी मिला था मुझे उसकी बात से,
ऐसा लगा था वो भी बहुत बेजुवान है।[6]

दुश्यंत कुमार हिन्दी ग़ज़ल के ऐसे हस्ताक्षर हैं जिन्होंने ग़ज़ल को परम्परागत रूप से बाहर निकाला और यथार्थवादी स्वर देकर जनचेतना से जोड़ा। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक स्थिति, सुस्त राजव्यवस्था, पिछड़ापन, भूख, गरीबी, बेकारी, महंगाई, भ्रष्टाचार, सर्वहारावर्ग का शाषण, न्याय व्यवस्था, आम आदमी की विवशता, संघर्ष, घुटन, कुंठा, बदलती मानवीयता आदि को अपनी ग़ज़लों का विषय बनाकर यथार्थ बोध के दर्शन करवाये हैं। दुष्यंत कुमार को इस बात का दुःख था कि आजादी के बाद भी आम आदमी अनेक यातनाओं को झेल रहा है। डॉ. हरिचरण शर्मा चिन्तन मानते हैं कि –''दुष्यंत की तकलीफ अपनी निजी तकलीफ नहीं अपितु आम आदमी की तकलीफ है। देश में महंगाई, गरीबी, भुखमरी, बेकारी, भष्टाचार, लापरवाही से उद्‌भूत आम आदमी की फटेहाल जिन्दगी की तकलीफ है।''[7]

'साये में धूप' ग़ज़ल की पहली ही ग़ज़ल में वे इस तकलीफ का चित्र हमारे सामने इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं –

कहाँ तो तय था चिरागां हरेक घर के लिए,
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।
न हो कमीज तो पाँव से पेट ढक लेंगे,
ये लोग कितने मुनासिब है, इस सफर के लिए।[8]
हम ही खा लेते सुबह को भूख लगती है बहुत,
तुमने बासी रोटियाँ नाहक उठा कर फेंक दीं।[9]

दुष्यंत कुमार आम आदमी के पक्षधर थे। उसकी पीड़ा, उसका दुःख और अभाव उनके मस्तिष्क को झकझोरता है। आजादी के बाद भी उसकी स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया है। मनमाने ढंग से इनका उपयोग किया जा रहा है। वे कहते हैं –

जिस तरह चाहे बजाओ इस सभा में,
हम नहीं हैं आदमी, हम झुनझुने हैं।[10]

जनता के हितार्थ न जानें आज कितनी सरकारी योजनाएँ बनती हैं लेकिन इन योजनाओं से आम आदमी लाभान्वित नहीं हो पाता। भ्रष्ट राजनीति में बंदरवांट हो जाता है। कवि दुष्यंत इस बात को अच्छी तरह जानते हैं ।

यहाँ तक आते–आते सूख गई हैं कई नदियां।
मुझे मालूम है पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।।[11]

दुश्यंत कुमार ने अपनी ग़ज़लों में आम आदमी की समस्याओं को उठाया ही नहीं बल्कि क्रान्ति, विद्रोह, जनजागृति, आस्था एवं आशा के माध्यम से उसका समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। उनका विश्वास है कि मनुष्य को परिस्थितियों से जूझना चाहिए। परिस्थितियों से हार जाना बुजदिली है। वे आह्वान करते हैं –

जरा–सा तौर–तरीकों में हेर–फेर करो,
तुम्हारे हाथ में कालर हो, आस्तीन नहीं।[12]

उन्हें अगाध विशवास है कि आम आदमी भाक्ति का पुंज है। मन में हौसला, लगन और दृढ़ता हो तो क्रान्ति के माध्यम से व्यवस्था में बदलाव लाया जा सकता है। उनका कहना है –

कैसे आकाश में सूराख नहीं हो उसका,
एक पत्थर तो तबियत से उछालो यारो।[13]
अब तो इस तालाब का पानी बदल दो,
ये कंवल के फूल कुम्हलाने लगे हैं।[14]

समाजिक यथार्थ का भलीभॉति निरूपण करने वाले दुष्यंत कुमार एक जागरूक प्रहरी थे। कवि कर्म की जागरूकता और दायित्व निर्वहन उनको बहुत सशक्त–समर्थ बनाता है। उनको मात्र 42 वर्ष की अल्प जिन्दगी मिली किन्तु इस अल्पायु में उनका सृजन हिन्दी साहित्य की श्रेष्ठ उपलब्धि है।

संदर्भ संकेत :

(1) अक्षराः (संपादन गोविन्द मिश्र) सितम्बर–दिसम्बर, 2003 (राधेलाल विजधावने का आलेख), पृ0 89; (2) आत्मकथाः मेरी ग़ज़लें–दुष्यंत कुमार सारिका, मई, 1976, पृ0 39; (3) साये में धूप : दुष्यंत कुमार, पृ0 45; (4) वही, पृ0 57; (5) वही, पृ0 51; (6) वही, पृ0 59; (7) दुष्यंत कुमार और उनका साहित्य : डॉ. हरिचरण शर्मा चिंतक, पृ0 98; (8) साये में धूप : दुष्यंत कुमार, पृ0 13; (9) वही, पृ0 54; (10) वही, पृ0 43; (11) वही, पृ0 15; (12) वही, पृ0 64; (13) वही, पृ0 49; (14) वही, पृ0 14 ।

डॉ. राकेश सक्सेना
एसोसिऐट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
पी.जी. कालेज, एटा (उ.प्र.)

मुक्तक

आस के जो महल खण्डहर हो गये
आज वीरान से सब शहर हो गये
रंज की बात को क्या कहें बन्धुवर
अमृतों के कलश भी ज़हर हो गये।।

देश की राजनीति विशैली हुई
हर सफलता प्रलोभन की थैली हुई
पाप का मैल भी इस कदर बढ़ गया
धोते धोते ये गंगा भी मैली हुई ।।

गीत

आशाओं के महल ढह गये मिले धूल में उज्ज्वल सपने
गैरों को दें दोष क्यूँ जब हम, घात लगाये बैठे अपने।।
रूप, रंग, रस भरी कली जो नव यौवन में अभी खिली थी
चारों ओर लगा था जमघट पड़ी हुई निर्जीव मिली थी
माथे का सिदूंर रो पड़ा कर की मेंहदी लगी सिसकने।।
उजड़ रहा है उपवन सारा तना, डार पातों में घुन है
अपनी अपनी डफली कर में अपनी अपनी लागी धुन है
करूण कथा की व्यथा कहूँ तो अम्बर धरा लगेंगे कॅपने।।
कितनी सत्य असत्य कथन ये इतिहासों के उलटे पन्ने
पृष्ठ पृष्ठ पर यही लिखा था अपनों से रहिए चौकन्ने
सुमन लिए पाषाण हृदय अब अपनों को चलपड़ी परखने।।

सुमन राना
राष्ट्रीय कर्वायत्री
जोधपुर (राज०)

मेरी राजभाषा हिन्दी

अँजीर जैसा रस है इसमें, कस्तूरी जैसी खुशबू,
गंगा की धारा जैसा इसका सरल बहाव,
सागर की शांति जैसा इसका ठह्राव,
रिमझिम बारिश जैसी इसमें कोमलता,

कोयल की कूक जैसी बोली
कानों में घोलती रस है, शब्दों में है मधुरता,
रिश्तों को पहचानती है चाचा–मामा को अंकल नहीं,
चाचा को चाचा मामा को मामा कह कर पुकारती है यह,
आओ इसे सब अपनाएं यह संदेश सब तक पहुंचाएं,
कर्म सरल है विचार कठिन,

इस मंत्र को अपनाएं,
उत्साह से बढ़ कर दूसरा कोई बल नहीं,
हिन्दी राजभाषा उत्सव है प्रतिदिन का,
आओ मिल कर इसे रोज मनाएं,
हिन्दी को अपनाएं ।

निशा शर्मा
वरि. उप मुख्य चिकित्सा अधिकारी
सलाल पावर स्टेशन, ज्योतिपुरम

'राष्ट्र भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है'

बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर महात्मा गांधी जी को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था; उस समय डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन विश्व विद्यालय के उपकुलपति थे। विशिष्ट विद्वान जो आमंत्रित थे वे सभी अपना वक्तव्य अग्रेजी में देते जा रहे थे; अन्त में गांधी जी ने बहुत सहज भाव से कहा कि "अग्रेजों को हम कोसते हैं कि उन्होंने भारत को अपने अधीन बनाया हुआ है, अंग्रेजों ने हम पर परतंत्रता थोपी है, परन्तु अंग्रेजी की परतंत्रता के लिए मैं उन्हें दोषी नहीं मानता"।

स्वयं अंग्रेजी सीखने और अपने बच्चों को अंग्रेजी सिखाने के लिए हम कितना श्रम करते हैं, यदि कोई कहता है कि हम अंग्रेजों की तरह अंग्रेजी बोल लेते हैं तो हमारा हृदय प्रसन्नता से भर जाता है। इससे बढ़कर दयनीय परतंत्रता और क्या हो सकती है ? इसके कारण हमारे बच्चों पर कितना अत्याचार होता है। अभी जो यहाँ कार्यवाही हुई उसे यहाँ उपस्थित समाज नहीं समझ सका, फिर भी यह समाज कितना उदार व धैर्यवान है कि चुपचाप शान्त बैठा सुन रहा है, और सोच रहा है कि ये हमारे देश के नेता हैं कुछ न कुछ अच्छा ही कह रहे होंगे। किन्तु इससे उन्हें क्या लाभ हुआ वे जैसे आये थे वैसे ही खाली हाथ लौट रहे हैं। गांधी जी की यह बात उपस्थित विद्धत वर्ग को हिन्दी के प्रति बहुत ही विचारणीय सन्देश था।

संस्कृति की आवश्यकता की प्रतिपूर्ति करने वाली हिन्दी भाषा का विस्तार विश्व व मानव कल्याण के लिए एक अमोघ अस्त्र बन रहा है। सभी को चुनौती दे रहा है। व्यवसाय की सर्वमान्य एवं सर्वाधिक भाषा के रूप में हिन्दी का अभिमंत्रित सा प्रभाव विश्व के सिर चढ़कर बोल रहा है। हिन्दी विश्व की सिरमौर भाषा बनने के लिए अग्रसर है। आज हिन्दी साहित्य का सर्जन भारत में ही नहीं प्रत्युत समूचे विश्व में सृजित हो रहा है। हिन्दी में अन्यान्य भाषाओं और बोलियों का महासागर बनने की असंदिग्ध क्षमता है। इसे समय भी सिद्ध करता आ रहा है।

हिन्दी को संसार की सबसे समृद्ध और वैज्ञानिक भाषा माना जाता है, हमारे शब्द कोश में लाखों शब्द हैं अपने से बड़े से बात करनी है तो अलग शब्द हैं और महिलाओं के लिए अलग यहाँ तक कि हर आयुवर्ग का भी इतना स्पष्ट वर्गीकरण किया गया है, जितना जगत की किसी भी दूसरी भाषा में देखने को नहीं मिलता किन्तु फिर भी हम हिन्दी में बात करना अपने सम्मान के विरूद्ध समझते हैं। लगता है कि अंग्रेजी का लेप किये बिना असम्मान की भावना से ग्रसित हो जाते हैं। यही कारण है कि हिन्दी आज अपने ही देश में विदेशी भाषा जैसी लगने लगती है, देश के बड़े शहरों में तो अंग्रेजी इतनी हावी है कि हिन्दी की स्थिति बौनी लगने लगती है। किसी भी राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है जब उसकी भाषा को एक गौरवपूर्ण एवं सम्मान जनक स्थान प्राप्त हो। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने अपनी भाषा की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है–

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति कौ मूल
बिन निजभाषा ज्ञान के, मिटत न हिय कौ शूल।
अंग्रेजी पढ़ि के जदपि सब गुन होत प्रवीन।
पै निज भाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन।।

विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देसन से ले करहू, भाषा माहिं प्रचार।।

प्राथमिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही होनी चाहिए। संवैधानिक रूप से हिन्दी भारत की प्रथम राजभाषा है। भारत ही नहीं अपितु विश्व के अनेकों देशों में अधिकतम व्यक्तियों के वार्तालाप में प्रयुक्त है। हिन्दी के स्नेहांचल में अनेक आंचलिक भाषा और बोलियाँ पल्लवन के साथ विकासोन्मुख हुई हैं। समूचे जगत में छह भाषाओं के वंश वृक्षों का उल्लेख मिलता है जिनमें हिन्दी भाषा की संबद्धता विश्व की सबसे समृद्ध भाषा परिवार इंडो आर्यन या भारोपिय परिवार से है।

वास्तविकता यह है कि कोई भी भाषा चलन में तभी तक बनी रहती है जब तक उसका सम्बन्ध आवश्यक सेवाओं और व्यापार से बना रहता है यदि किसी भाषा का संपर्क इनसे विच्छेद हो जाता है तो वह भाषा शनैः शनैः लोप होती चली जाती है, इससे यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि आर्थिक स्वरूप ही जगत में किसी भी वस्तु को जीवन्त रखने का प्रमुख पहलू है, वैदिक, पौराणिक युग में संस्कृत का बोल बाला था, इसीलिए इसे देव वाणी कहा गया। काल विपाक से आचंलिक भाषाओं का प्रभुत्व हो गया, संस्कृत वर्ग विशेष की भाषा बन गई। बौद्ध काल आया जिसमें पालि भाषा का बर्चस्व दिखाई दिया। मुगल काल में उर्दू का अस्तित्व इतना प्रभावी हुआ कि सेवादार बनने के लालच ने अच्छे अच्छों को उर्दू भाषा सीखने को विवश किया, अंग्रेजी शासन काल ने उर्दू को चलन से बाहर जैसा ही कर दिया, और अंग्रेजी भाषा का प्रभाव निरन्तर बढ़ता गया। अंग्रेजों ने यह संदेश विस्तरित किया कि उर्दू मुसलमानों की भाषा है और संस्कृत पंडितों की भाषा है।

वर्तमान में पालि भाषा की स्थिति तो कहीं किसी विश्व विद्यालय के कक्ष में सीमित हो चुकी है, संस्कृत सनातनी कर्मकाण्ड और पुराण वाचकों तक सिमट कर रह गई है। आंध्रप्रदेश और उत्तरप्रदेश में मत प्राप्त करने के लालची राजनेताओं ने उर्दू को चाहे द्वितीय राजभाषा का स्थान प्रदान किया है और ऊर्दू विश्व विद्यालय भी निर्मित हुआ किन्तु मूल धारा से वह बहुत अलग–थलग है; मत प्राप्त करने वालों के प्रयासों तो श्री हीन हुआ करते हैं कहना अन्यथा न होगा कि ये सभी भाषा इतिहास के पृष्ठों में सम्मान प्राप्त करने जा रही हैं।

स्वतंत्रता से पूर्व लगभग 360 भाषाएँ एवं बोलियाँ थीं आज भारत में 196 भाषाएं लुप्त होने की स्थिति में हैं। भाषाएं किसी भी संस्कृति का आईना होती है और एक भाषा की समाप्ति का अर्थ है कि एक पूरी सभ्यता और संस्कृति का नष्ट होना।

भक्ति के आचार्यों का वृन्दावन मथुरा आगमन एक अभूतपूर्व घटना कही जा सकती है। सभी आचार्य दक्षिण भारत के थे। इन महापुरुषों ने व्रजभाषा में ही विशेष कार्य किया विशेषकर निम्बार्काचार्य जी और वल्लभाचार्य जी ने व्रजभाषा में अनूठा कार्य सम्पादित किया उनके बाद के आचार्यों ने इस परम्परा को और भी समृद्ध किया। बंगाल व उड़ीसा प्रान्त में चैतन्य महाप्रभु का विशेष प्रभाव था, उनके अनुयायियों द्वारा व्रज वोली किंवा व्रजवुलि का विशेष प्रचार प्रसार हुआ।

स्वतंत्रता से पूर्व हमारे देश में किसी प्रकार का विवाद भाषा से सम्बन्धित नहीं था, स्वतंत्रता का संग्राम एक

ही भाषा को लेकर लड़ा गया था। स्वतंत्रता के पश्चात् भाषाई चेतना का उदय हुआ। व्रजभाषा और अवधी आदि भाषाओं का स्वाभिमान अपने आप में अडिग रहा और उन्होने अपनी शब्दावली में बाह्य भाषाओं के शब्दों को पूर्ण रूप से बहिष्कृत किया। अपने आप में ये दोनों ही भाषाएँ राम और कृष्ण को समर्पित होकर रह गई। अतएव नवीन भाव भी यहाँ प्रवेश न कर सके यही कारण रहा कि अंग्रेजी रंग में आवगाहन किए हुए तात्कालीन शिक्षविदों ने इन भाषाओं को मात्र धार्मिक भाषा कह कर ठहराव सा दे दिया और तब हिंदी से अभिप्राय खड़ी बोली बन गया क्योंकि इसमें अंग्रेजी, पंजाबी, कन्नड़, तमिल शब्दों को भी अपने शब्द सागर में समाहित कर लिया, साथ ही विभिन्न भाषा विविध संस्कृतियों के मैत्री पूर्ण संपर्क से हिन्दी ने नवीन विकास के प्रखर तेवरों द्वारा अनूठे शिल्प को जन्म दिया; इससे हिंदी जगत में एक क्रान्ति सी उठ खड़ी हुई और उन नये वातायनों से समयानुकूल भावों, बातों और विषयों को ग्रहण करने की क्षमता ने अनुवादों, समाचारों, आलेखों, कविताओं, कहानियों में तीव्रगति से प्रदर्शन किया। यही कारण है कि वर्तमान चलचित्र जगत और समाचार पत्रों में हिंदी ने जो उपलब्धि दर्शायी है उससे प्रवासी भारतीय भी पूर्ण रूप से हिंदी से जुड़े हुए हैं, चलचित्रों में गाये जाने वाले गीतों की पक्तियाँ जाने–अनजाने में विदेशी भी गुनगुनाते दिखाई देते है, उनकी वह मधुरता ही है जो उन्हें उन गीतों को गुन गुनाने के लिए लाचार सा कर देती है। अतएव हिंदी चलचित्रों का योगदान हिंदी के लिए वरदान कहा जा सकता है, आधुनिक हिंदी का विकास निरंतर श्री वृद्धि की ओर है और इस प्रकार भले ही राजनैतिक दाव पेंचों में फंसी हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा न बन पाये किन्तु विश्व में शिखर पर बोली जाने वाली भाषा अवश्य बनने जा रही है।

भविष्य में अर्थात् वर्तमान शताब्दी के पूर्वार्द्ध शेष होते–होते हिन्दी संसार की भाषाओं की बड़ी बहन बन जायेगी। संसार के लोग अब हिन्दी के प्रति गम्भीर होने लगे हैं। अमेरिका और चीन जैसे देश भी हिन्दी सीखने के लिए अपनी उत्सुकता दिखा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है कि हिन्दी के बिना यहाँ का व्यावसायिक स्वरूप नहीं जाना जा सकता। हिन्दी के अभाव में व्यापार का संचालन अत्यन्त दुरूह है। यदि यह कहा जाये कि हिन्दी विश्वविद्यालय की चार दीवारी को लाँध कर विश्व के सामान्य जगत में अपनी स्वर्णिम पंखुरियों को प्रसारित कर रही है तो कोई अतिशय न होगा। किसी भी भाषा का जन–मानस विस्तार तभी सम्भव है जब वह उद्योग–धन्धों की भाषा बन जाये। इसमें कोई भी संशय नहीं है कि हिन्दी अब व्यावसायिक भाषा बन चुकी है। मात्र आवश्यकता यह है कि हम हिन्दी को अपने स्वाभिमान से जोड़ लें तो एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य होगा जिसकी हमने कभी कल्पना भी नहीं की होगी।

हमें यह समझने और समझाने की आवश्यकता है कि अंग्रेजी सीखकर परतंत्र भाव प्रगाढ़ होगा न कि स्वामित्व का भाव। किसी भी स्थिति में यह भारतीय भाषा नहीं है। किन्तु हमारे यहाँ सरकारी या असरकारी–संस्थानों में अंग्रेजी के बिना सेवाएँ मिलना अत्यन्त कठिन कार्य है फिर भी क्रय–विक्रय के मध्य जन मानस हिन्दी का ही प्रयोग कर रहा है। अंग्रेजी भाषा के समाचार पत्र अब हिन्दी शब्दों को रोमन में लिखकर अपना अंग्रेजी शीर्षक देने लगे हैं। कतिपय विद्वानों के स्वर सुनने को मिलते हैं कि भाषा विद्वान नहीं बनाते हैं, भाषा का निर्माण व्यापार और संपर्क से होता है।

आधुनिक तीव्रगति की दौड़ में अंग्रेजी की काली छाया के अन्धकार में अनेकों होनहार बालकों ने हीन भावना का शिकार होकर अपनी जीवन लीला की ही इतिश्री कर ली, उनका दोष था कि उनको अंग्रेजी नहीं आती थी। इस संघर्ष में न जाने कितने लोग जीवन के सुनहरे पलों को नष्ट कर रहे हैं, ग्रंथागारों में अंग्रेजी

माध्यम की पुस्तक उपलब्ध है हिंदी की कोई पुस्तक नहीं है अथवा है तो पुराना संस्करण है।

देश में 13.62 लाख प्राथमिक व उच्चतर प्राथमिक विद्यालय हैं। इनमें से लगभग 53 प्रतिशत (7,19,387) स्कूलों में हिन्दी माध्यम से शिक्षा दी जा रही है। जबकि मात्र 11.7 प्रतिशत (1,58,866) स्कूल अंग्रेजी माध्यम के है। सेवा–नियुक्तियों में हिंदी माध्यम वाले छात्र पिछड़ जाते हैं, यह एक गम्भीर प्रश्न है, इस पर विचार होना आवश्यक है, भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम होती है न कि ज्ञान व विद्वता का अतएव हिंदी जानने वाला भी श्रेष्ठ डाक्टर बन सकता है, श्रेष्ठ इन्जीनियर, श्रेष्ठ अन्य विद्याओं का विशेषज्ञ हो सकता है अवएव यह सोच नितान्त भ्रमित करने वाली होगी कि अंग्रेजी से ही भारत महान होगा। यथार्थ में देखा जाय तो जो देश विकसति हुए है, अपनी भाषा की समृद्धि के कारण हुए हैं। देश के विचारकों को चाहिए कि वे संसार की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों का अनुवाद हिंदी में कराकर पुस्तकालयों में उपलब्ध करायें, जिससे वह ज्ञान सरल सहज रूप से हिंदी जानने वालों को भी उपलब्ध हो, देश के किसी भी प्रकार के व्यक्तिगत प्रतिष्ठान या सरकारी नियुक्तियों में अग्रेंजी की अनिवार्यता न हो, मातृभाषा का सम्मान यथोचित होना चाहिए। महात्मा गांधी ने स्वयं कहा था कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।

किसी भी संप्रभुता सम्पन्न राष्ट्र की पाँच अनिवार्य बातें हुआ करती हैं:–

(1) भू सीमा का निश्चित निर्धारण (2) भाषा (3) ध्वज (4) संविधान (5)राष्ट्रगान

14 सितम्बर 1949 में हिंदी को राजभाषा बनाने का निर्णय सर्व सम्मति से हुआ। 26 जनवरी 1950 को संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अन्तर्गत यह स्वीकार हो गया कि इस देश की राजभाषा हिन्दी होगी जिसकी लिपि देवनागरी होगी। इसकी पृष्ठभूमि में जो महत्वपूर्ण व्यक्तित्व थे, उनके नाम भी व्यक्त करना आवश्यक समझता हूँ, सबसे बड़ी बात तो यह है कि वे सभी देश के महापुरुष थे और हिन्दी क्षेत्र से नहीं थे– (1) श्री बंकिम चन्द्र, (2) एस के डे, (3) सुनीति कुमार चटर्जी, (4) लोकमान्य गंगाधर तिलक, (5) राजा राम मोहन राय, (6) महात्मा गांधी, (7) दयानन्द सरस्वती, (8) राजगोपालाचार्य आदि मनिषियों ने यह प्रस्ताव पारित किया था कि हिंदी ही हमारे राष्ट्र की सर्वमान्य भाषा हो सकती है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि 1936 में भारत में अंतरिम सरकारों की स्थापना हुई थी, उस समय मद्रास प्रांत के मुख्यमंत्री राजगोपालाचार्य जी बने थे उन्होने मद्रास राज्य में कक्षा 1–5 तक के लिए हिंदी अनिवार्य कर दी थी, किन्तु 1950 में जब राष्ट्रपति बनने का समय आया तो राज गोपालाचार्य जी की प्रबल इच्छा थी कि वे राष्ट्रपति बनें किन्तु ऐसा नहीं हुआ और यही वह बिन्दु था कि मद्रास राज्य हिंदी के विरोध में खड़ा हो गया वहाँ जन आन्दोलन हुआ बहुत भीषण क्षति हुई। फलस्वरूप ऐसा निर्णय लिया गया जिससे हिन्दी एकल राज भाषा नहीं बन सकी।

राजनैतिक दाव पेचों में फंसी हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा न बन पाये किन्तु विश्व में शिखर पर बोली जाने वाली भाषा अवश्य बनने जा रही है। हम सभी को संकल्पबद्ध होकर हिन्दी में कार्य सम्पादन करना चाहिए यही इसके लिए सबसे बड़ा सार्थक प्रयास होगा।

उमेशचन्द्र शर्मा
302, गुरूकुल रोड़,
वृन्दावन (मथुरा) उत्तर प्रदेश

हिन्दी पखवाड़ा

हिन्दी का पखवाड़ा है, हिन्दीमय जग सारा है,
हिन्दी से देश को जगमगाना है,
हिन्दीमय यह देश बनाना है,
नदियों–झरनों से सीख लेकर,
भाषा का भेदभाव मिटाना है,
इसी सरलता व सुन्दरता से हिन्दी को भी,
एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र बहा कर ले जाना है,
हिन्दीमय यह देश बनाना है,
अपनी–अपनी क्षेत्रीय भाषाओं से प्यार करते हुए,
हिन्दी से स्नेह बढ़ाना है,
हिन्दीमय यह देश बनाना है, –2
हवाओं और पक्षियों की तरह,
हर सीमा को पार करते हुए,
राजभाषाई वातावरण बनाना है
हिन्दीमय यह देश बनाना है, –2
हिन्दी राजभाषा है, हर मातृभाषा की,
मुँहबोली मातृभाषा है,
हर पल स्नेह से इसे आगे बढ़ाना है,
देश में राजभाषाई माहौल बनाना है,
हिन्दीमय यह देश बनाना है, –2
अपने हर कामकाज में पत्राचार तथा प्रचार–प्रसार में,
हिन्दी से एक दूसरे के साथ सम्पर्क बनाना है,
सलाल से कश्मीर, कश्मीर से कन्याकुमारी,
हिन्दी से स्नेह बढ़ाना है, राजभाषाई प्रेम बनाना है,
हिन्दीमय यह देश बनाना है –2
इस पखवाड़े में समिति न रह कर,
पूरे वर्ष कार्यालय वातारण
राजभाषाई बनाना है,
हिन्दीमय यह देश बनाना है। –2

जुगल किशोर शर्मा
उप प्रबंधक (मानव संसाधन)
सलाल पावर स्टेशन, ज्योतिपुरम

राजभाषा हिन्दी का गुणगान

आजादी का जोश था मन में
तब हिन्दी भाषा आगे थी,
आजाद भारत का झंडा लहराया,
तब हिन्दी भाषा आगे थी

थी अधिसंख्य की यह अभिलाषा
हो जाए हिन्दी देश की राष्ट्रभाषा
भारत के संविधान ने मान इसका बढ़ाया

राष्ट्रभाषा और राजभाषा पद पर सुशोभित इसे कराया,
अंग्रेजी से मुक्ति पायी लेकिन
अंग्रेजी का बोलबाला आज भी है कार्यालयों में,
हिन्दी की गति नापी जा रही आज भी कार्यालयों में,
छह दशक से अधिक वर्ष बीते आजादी के,
प्रयोग कर रहे हम हिन्दी तब से,

लेकिन मिला नहीं; वह मान
जो है अंग्रेजी का,
हिन्दी भाषी होकर मना रहे हम,
हिन्दी दिवस या हिन्दी सप्ताह
हिन्दी को तभी प्राप्त होगी वांछित सत्ता,

बदलेगी जब हमारी स्वयं की मानसिकता,
अधिकारी और कर्मचारी सहज, सरल हिन्दी में काम करें
अनुपम आदर्श उपस्थित कर,
हिन्दी का प्रयोग, अविराम करें,
मिले–जुले प्रयासों से हिन्दी अपना पद पाएगी,
जब ज्योति जलेगी हिन्दी की,
यह सारे जग में छा जाएगी।

विजययम्मा पी.
सलाल पावर स्टेशन, ज्योतिपुरम

स्वात्मबुद्ध पुलिस से समाज को अपेक्षाएँ

नई सहस्राब्दि के नए युग में प्रवेश करते ही, हमारे संकल्पों में, पुलिस की छवि के संदर्भ में कुछ अभिनव जिज्ञासाएँ बलवती होने लगी हैं। क्या पुलिस को हम उस रूप में स्वीकार करते रहे जैसाकि उसे देखते तथा बरबस झेलते चले आ रहे हैं ? फिर तो यह पुलिस हमारी अनिवार्य बाध्यता ही बनी रहेगी। क्योंकि पुलिस कारगुजारियों के विविध संदर्भ बड़े विस्तार वाले तथा उलझी हुई जटिलताओं से युक्त रहे हैं ।

शांति प्रिय समाज के संभ्रान्त नागरिक तथा सामाजिक बोधक एवं चिंतक गण थानों आदि के चक्कर से मुक्त ही रहना चाहते हैं। समाज की शांति एवं व्यवस्था में इनका भी योगदान अपेक्षित एवं आवश्यक है। अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि व्यक्ति, समाज में जीवन व्यतीत करे। ऐसा जीवन ही शांति वादी चिरंतन आनंद की अनुभूति देता हुआ सही अर्थो में सार्थकता की परिभाषा बनने में समर्थ होगा। ''पुलिस भी समाज का अभिन्न अंग है'' 'समाज के साथ ही उसकी प्रतिष्ठा भी परिभाषित होती रही है। पुलिस की जाज्वल्यमान प्रशस्ति एवं कीर्ति सामाजिक आचरणों का ही पर्याय है' किसी कवि ने कहा है कि –

जब तक ऊंची न हो लौ,
जिन्दगी को रोशनी नहीं मिलती।

आत्म बुद्ध पुलिस जन अच्छी तरह जानता है कि सफल जीवन यापन का सूत्र है कीर्ति तो विवेक के लिए पूर्णतः आवश्यक है तथा संवेदना का अनुभव करने के लिए तथा उपेक्षित पीड़ित व्यक्ति की सहायता करने हेतु भी आत्मबुद्ध व्यक्ति को विवेक होने की आवश्यकता है। यह समाज के नवीन युग की अनिवार्य अपेक्षा है। पुलिस सेवा में लगे हुए संगठन के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए अच्छे सेवा योग के लिए यह सर्वथा अपेक्षित है कि वे आत्मस्तित्व बोध की तुलना में उनकी आत्मबोधी बनें। इससे समाज को, जिसकी सेवा में, पुलिस जन लगे हुए हैं, लाभ यह होगा कि सामाजिक उनकी आत्मश्लाघा परक, अहंकारी सेवा से मुक्त हो जायेंगे तथा उनकी रचनात्मक एवं समर्पित सामाजिक, सेवा से लाभान्वित होकर शांति एवं सुरक्षा का वरदान प्राप्त करने में समर्थ हो पायेंगे।

मैंने पूर्व काल में 25 प्रश्नों की एक तालिका बनाकर लगभग 100 पुलिस अधिकारियों से पूछा था कि क्या वे पुलिस सेवा में आने के बाद यह अनुभव नहीं करते कि उनमें गुण ग्राहकता की कमीं आई है तथा अब वे सर्वज्ञता के अहंकारी भ्रम के शिकार होते जा रहे हैं तथा उनमें आत्मश्ताधा एवं अपने अस्तित्व बोध के प्रति रूचि बढ़ी है। प्रायः सभी ने इस विषय में सकारात्मक उत्तर देते हुए कहा कि यह सत्य है तथा इसे वे मानव भाव का आत्म तोशी मात्र मानते हैं। परन्तु इसके साथ यह भी सत्य है कि दक्ष पुलिस कर्मी स्वतः अपनी अन्तर्चेतना में आत्म बुद्ध भी हैं तथा उसके लिए आत्म बोध उसके आत्मिक विकास के पक्ष में एक आवश्यक तत्व भी है और तभी वह सबसे निराला पुलिस कर्मी है। वह झगड़े दंगों अथवा जलूसों की अपशब्दात्मक, बकवास वह आत्म बुद्ध संयमी तथा दक्ष है। विदित है कि शरीर तथा आत्मा के सहयोगी विकास के लक्ष्य को पकड़ने का एक ही सूत्र है कि दोनों के उत्तरोत्तर विकास में संतुलन स्थापित किया जाये। प्रकृति द्वारा दिए गए अधिकारियों का प्रयोग करके मानव अपनी शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आत्मिक, कलात्मक तथा संवेदनशील

शक्तियों का विकास करते हुए अपने विवेक को विशुद्ध कार्यान्वयन की दिशा प्रदान करने की कोशिश करता रहे। बहुत समय पूर्व मुझे एक दृश्य देखने तथा सुनने को मिला। सीतापुर के पुलिस अधीक्षक ने एक ऐसी ही सामाजिक समस्या का कुशल समाधान प्रस्तुत करते हुए टाल दिया। मेरे मामा जी श्री बसन्त कुमार चतुर्वेदी वहीं उपाधीक्षक पुलिस के रुप में तैनात थे। स्थानीय अभिसूचना ने सूचित किया था कि छात्रों का एक उग्र जुलूस नारे लगाते हुए बढ़ रहा है तथा यह जलूस बीच में पड़ रहे एक पेट्रोल पम्प को आग के हवाले कर देगा। कप्तान साहब अपने विशुद्ध विवेक के अधीन पहले से ही पैदल उस जुलूस में शामिल हो गए। जुलूस में हंसते–गाते चले जा रहे थे कप्तान साहब''। किसी ने उनकी टोपी, किसी ने उनकी वर्दी छेड़ी, मूंगफली तथा केलों के ठेले लूटे गए, कप्तान साहब कहते आ रहे थे'' भाई हमें भी अपना विद्यार्थी जीवन याद आ रहा है––। उधर पर.ए.सी. की दृष्टि सावधान थी। जलूस गाते बजाते नारे लगाते उस संवेदन शील प्वाइंट से सकुशल गुजर गया। अपराध नियंत्रण से यही प्रतिफल है। मृतक डकैतों की लाशों के साथ–साथ वीरता, शौर्य तथा साहस दिखाने के उद्देश्य से फोटो खिंचाने का शौक तो सबको है परन्तु आत्मबुद्ध पुलिस वाले इसे अच्छा नहीं मानते।

अस्तित्व बोध का होना भी आवश्यक है, परन्तु शर्त यह है कि आप यह भी समझते रहें कि आपके अस्तित्व का समाज में क्या उपयोजन है। अर्थात समाज के प्रति आपके क्या दायित्व हैं और आपकी सामाजिक सेवा का क्या लक्ष्य है ? पुलिस सेवक, सर्वथा 'तपस्क' सुरक्षा संस्कृति के अग्रदूत हैं तथा इनकी शिक्षा, दीक्षा इन्हें तपस्क बनाएं रखने की शासकीय प्रक्रिया है। विशषज्ञ होना तो अच्छी बात है परन्तु विशषज्ञ होने का अहंकार अथवा दम्भ पाना आचरण की धृष्टता है। शायद ऐसे लोगों से बात करना बेकार ही है। पुलिस हमारी सामाजिक सुरक्षा की जीवन शक्ति है। इसकी पावनता एवं संवेदन शीलता को भर्ती, प्रशिक्षण कार्यानुभव, नियुक्तियों / प्रतिनियुक्तियों के सन्दर्भ में नष्ट न होने दें। पुलिस के लिए सामाजिक शांति, व्यवस्था एवं सेवा का पर्याय है इसके बीच शासन शास्य भाव को न पनपने दिया जाए ।

मेरे एक अभिन्न मित्र भारतीय पुलिस सेवा संवर्ग के सेवा निवृत्त अधिकारी हैं। श्री चमन लाल प्रदयोत! अच्छे कवि हैं। उनकी कविता पढते हुए आभास हुआ कि वे अपने कार्यकाल में एक सुचिन्तनशील आत्म बुद्ध अधिकारी रहे हैं। वे समाज के पीड़ित जनों के प्रति नितान्त संवेदनशील रहे होंगे – वे कहते हैं :–

न मालूम करोड़ों लोग
गरीबी रेखा के नीचे
कैसे जी रहे हैं ?
क्यों जी रहे हैं ?
यह भी नहीं मालूम
शायद उनका अस्तित्व
गरीबी रेखा के ऊपर बालों के लिए
कुछ प्रयोजनीय है ।

आत्म बोध ही कर्तव्य निष्ठ अधिकारी को स्वात्म तथा परात्मचिंतन की क्षमता कर सकने सर्वथा समर्थ हो सकता है। मैंने प्रस्तुत आलेख द्वारा पुलिस के आत्मिक पक्ष का सेवा परायण अध्यात्म आपके समक्ष रखने की दुर्लभ कोशिश अवश्य की है परन्तु मैं पुलिसीय सन्यास का पक्ष धर कदापि नहीं हूँ। मेरी मान्यता है कि पुलिस

कर्म, पुरुषार्थ का प्रतीक है तथा पुलिस कर्मी बज्रादपि कठोराणि–मृदूनि कुसमादपि' का सुयोग्य उदाहरण बने अपने अर्जे गुफ्तगू पर अनुकूल नियंत्रण रखा पा सकने में समक्ष पुलिस कर्मचारी लोकप्रिय सामाजिकता पा सकता है।

पुलिस विभाग ने स्तरों का टकराहट का मूल कारण पदों को लेकर पारस्परिक वैमनस्य है। आई.पी.एस. संवर्ग में सीधे भर्ती हुए लोग तथा प्रोन्नति पाए लोगों में आपसी ताल मेल का अभाव क्यों है? स्पष्ट है कि इनमें आत्म बोध एवं स्वस्थ चिंतन की कमी है। वर्तमान असुरक्षा के सामाजिक अराजक परिप्रेक्ष्य में पुलिस कर्मियों के बीच आपसी तालमेल हो तो बहुत ही सारे अपनी तथा समाज की गतिविधियों को मेड़ना है। अतः मानवीय स्वानुशासन की महती आवश्यकताओं को सब प्रकार से अनुभव किया जाना चाहिए तभी पुलिस से, उत्कृष्ट सामाजिक सेवा की जन अपेक्षाएं पूरी की जा सकती हैं।

मुझे तो एम.आर.ल्वाइड साहब की वह उत्कृष्ट बात याद आती है, जो वस्तुतः भारतीय पुलिस के लिए स्मरणीय एवं श्रद्धेय है – 'No force in empire stands higher than the Indian Police'

पुलिस संगठन कीचड़ में खिला हुआ कमल है या काँटों से घिरा हुआ गुलाब है ? ये प्रश्न शांति प्रिय एवं आत्मा बोधी, सहृदय सामाजिक के हो सकते हैं। जो विभाग के व्यक्तियों को अपने परिवार सदस्य मानता है और ऐसे सामाजिक के साथ यदि पुलिस अपचार करें तो क्या पुलिस विश्वसनीयता बनी रह सकेगी ? यह एक विचारणीय प्रश्न है! कृपया इस विषय पर सोंचिए अवश्य ।

अशोक कुमार दीक्षित
वरिष्ठ प्रबंधक,
श्री गांधी सेवा सदन, जम्मू

एहसास

जब भी कोई खास अपना हम से दूर होता है
उस से मिल न पाने का गम जरूर होता है
उसके खास होने का तब ही होता है एहसास
दिल के पास रह कर भी जब वह दूर होता है
उसकी फिकर में हर पल दिल का बस यह है आलम
हर हसीन मंज़र भी अब बेनूर होता है
एक एक हमदर्दी दर्द बनती है तक ही
अपना जब कोई हमदर्द हम से दूर होता है
करती है बयाँ नज़रें खुद ही मेरी रूसवाई
उसको न समझ पाना ही कुसूर होता है

याद में किसी की फिर ऑखें भर ही आती हैं
दिल में दर्द का सागर जब जरूर होता है
जब निगाहें चाहती हैं अपनों का करें दीदार
दिल को खुद व खुद उस पल पे गुरूर होता है
वक्त फिर न जाने क्यों खुद बदलता है हालात
लेकिन अपना बेबस दिल बे कसूर होता है

कु0 ऋचा
भारती कॉलेज, दिल्ली
विश्वविद्यालय दिल्ली

आज हिन्दी दिवस का दिन स्वभाषा

आज हिन्दी दिवस का दिन स्वभाषा–स्वाभिमानियों के लिये गौरव का दिन है। इस दिन को वह अधिकार प्रदान किया गया। जिसकी वह अधिकारिणी थी । आज हिन्दी दिवस के अवसर पर सर्वप्रथम आप सभी हिन्दी राष्ट्रभाषी विद्वानों को अनेकानेक हार्दिक शुभकामनायें और हमारी अपनी राजभाषा हिन्दी का सादर अभिनन्दन । हिन्दी दिवस के अवसर पर एक भावपूर्ण कविता प्रस्तुत है.....

आज हम सब, हिन्दी दिवस तो मना रहे हैं.....
लेकिन ज़रा सोचें किस बात पर इतरा रहें हैं ?
हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा तो है, हिन्दी सरल–सहज भी हैं
वैज्ञानिक और तर्क संगत भी है।
फिर भी .... अपने ही देश में
अपने ही लोगों के द्वारा उपेक्षित और त्यक्त है.....
आप ज़रा सोचकर देखिए कि हम में से कितने लोग, हिन्दी को अपनी मानते हैं ?
अधिकतर तो..... विदेशी भाषा का ही लोहा मानते हैं ।
अपनी भाषा को उन्नति का मूल मानते है ?
कितने लोग राष्ट्रभाषा, हिन्दी को पहचानते हैं ?
भाषा तो कोई भी बुरी नहीं, किन्तु हम अपनी, हिन्दी भाषा से
इतना परहेज़ क्यों मानते हैं ?
अपने ही देश में अपनी भाषा, हिन्दी की इतनी
उपेक्षा क्यों हो रही है ?
हमारी अस्मिता कहां सो रही है ?
व्यावसायिकता और लालच ही हद हो रही है ।

इस देश में कोई तो फ्रेंच सीखता है और कोई जापानी,
किन्तु, हिन्दी भाषा बिल्कुल अनजानी समझी जाती,
विदेशी भाषाएं सम्मान पा रही हैं और
अपनी भाषा हिन्दी ठुकराई जा रही है ।
मेरे भारत के सपूतों ज़रा तो जागो ।
अपनी भाषा हिन्दी की ओर से यों आंखे ना बंद करो ।
विदेशी भाषाएं आपके ज़रूर काम आएगी।
किन्तु अपनी भाषा हिन्दी तो ममता लुटाएगी।
इसमें अक्षय कोश है, प्यार से उठाओ,
इसकी ज्ञान राशि से जीवन महकाओ।
आज यदि कुछ राष्ट्रभावना है तो राष्ट्रभाषा, हिन्दी को अपनाओ ।

पवन कुमार, सलाल पावर स्टेशन, ज्योतिपुरम

क्षाण के दीप जलाए-रखूँगा

हिन्दी देगी नई कल्पना,
कल्पना लाए नए विचार ।
नए विचारों से मिले क्षाण,
क्षाण बनाए हमें महान ।।
हिन्दी, हिन्दोस्तान की भाषा,
करोड़ो लोगों की एक आशा ।
जो लोगों को दिलाए एक दूसरे की पहचान ।
भारत को बनाए विश्व महान ।
हिन्दी को करते हैं प्रणाम ।
हिन्दी को करते हैं प्रणाम ।
हिन्दी के अतिरिक्त है किस,
की ऐसी शैली ।
हम सब का स्वाभिमान वहाँ,
हिन्दी का हो सम्मान जहाँ
हिन्दी का हो सम्मान जहाँ।
मेरा देश महान हो ।
धनवान हो, गुणवान हो ।
ये प्रेरणा का भाव अमूल्य है ।
कहीं भी धरती पर, उसके ऊपर,
नीचे दीप जलाएँ रखूँगा ।
गौरव का आभास कराती हम,
को हिन्दी ।
हम सब का स्वाभिमान वहाँ ।
हिन्दी का हो सम्मान जहॉ ।
हिन्दी देगी नई कल्पना ।
कल्पना लाए नए विचार ।
नए विचारों से मिले क्षाण ।
क्षाण बनाए हमें महान ।
जय हिन्दी!

विमला सलाथिया
सलाल पावर स्टेशन, ज्योतिपुरम

हिन्दी की अभिलाषा

मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा है,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ
भारत की ही नहीं,
सारे जहाँ की भाषा कहलाऊँ ।।
सुन्दर, सरल, सुशील, मीठी लगूँ
हर कलम से में लिखी जाऊँ ।
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा है,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।।
एकता, सौहार्द, संस्कृति की पहचान बन जाऊँ,
हर धर्म में अपने को ही ऊपर पाऊँ ।
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा हैं,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।।
ईर्श्या, कपट, दुश्मनी को खत्म कर पाऊँ ,
सभी के दिलों में मिठास घोल पाऊँ ।
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा हैं,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।।
होली, दिवाली, ईद सब मिलकर मनायें,
हर त्योहार पर मैं ही पूजी जाऊँ
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा हैं,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।।
आकाश, धरती, पाताल, सब एक हो जाएँ,
मैं हर जहाँ की दुलारी बन जाऊँ ।
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा हैं,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।।
चुनरी, पायल, मेंहदी, कागज़ भारत माता पहने,
उनके माथ की बिंदिया मैं ही कहलाऊँ ।
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा हैं,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।।
मैं हिन्दी मेरी अभिलाषा हैं,
मैं हर लव पर बोली जाऊँ ।
भारत की ही नहीं,
सारे जहाँ की भाषा कहलाऊँ ।।

शैलेश शर्मा,
अभियंता (विद्युत),
सलाल पावर स्टेशन, जम्मू व कश्मीर

मेरी माँ

महाप्रयाण (संस्मरण)

आज बहुत लम्बी रात थी। कभी न खत्म होने वाला सन्नाटा मन में पसरा हुआ था। बहुत लोगों से भरा हुआ घर भी मेरे खालीपन को नहीं भर पा रहा था। आँखों से निरन्तर बहते आँसू और होठों पर नारायण मन्त्र बारबार यथाक्रम में चल रहा था। जमीन पर निःशब्द लेटी मेरी माँ अपनी अन्तिम यात्रा पूरी कर रही थी। जैसे ही उनकी श्वांस का व्यतिक्रम होता मेरे नारायणमन्त्र के साथ–साथ आँसू मिल जाते और गले का कम्पन उसी उतार चढ़ाव से धीमा और तेज होता जाता।

आज से सात दिन पूर्व मैं देवी पूजा में व्यस्त थी कि अचानक छोटी बहन का फोन आया। मुझे समझाते हुये बोली देखो परेशान मत होना मम्मी की हालत ज्यादा खराब है शीघ्र पहुँच जाओ मैं भी पहुँच रही हूँ। एक माँ की पूजा छोड़कर जन्मदात्री के दर्शन को चल दी। आँखें बारबार भर आती। घर से अपनी माँ के घर का तीस मिनट का रास्ता मुझे युगों जैसा प्रतीत हुआ। अपनी चारों बहनों में, मैं अपनी माँ की कुछ ज्यादा ही प्यारी थी। वह हमेशा यही कहती तू तो मेरा बेटा है। सम्भवतः इकलौते पुत्र को खाने के बाद वह मुझमें अपनी सुरक्षा का आश्वासन ढूंढने लगी थी। मैं भी हफ्ते में दो–तीन बार उनके पास जाकर कुछ देर बैठकर लौट आती थी। उनकी पसंद की चीजें उन्हें देकर, खिलाकर मुझे असीम सन्तोष मिलता। इसी बीच एक बार जब तीन माह के लिये मुझे अपने छोटे बेटे के पास अमेरिका जाना था तो वो मुझसे बार–बार पूछती कब तक लौटेगी ? पता नहीं उन्हें ऐसा क्यों लगता था कि वो मेरी प्रतीक्षा इतने दिन कर सकेगी या नहीं। मैं उन्हें कुछ खाने की चीजें छोटे–छोटे पैकेट में दे आई थी और यह भी कह आई थी कि शीघ्र आउंगी। परन्तु जब तीन माह बाद लौटी तो वह वैसी ही मिली। चिरप्रतीक्षित, आंखों में वही चमक मेरे आ जाने का अत्यन्त सन्तोष उनके चेहरे पर साफ दिखाई दे रहा था।

लेकिन मैं कुछ दिनों से देख रही थी कि घर के अन्य सदस्य मेरे बार–बार आने से और उनकी छोटी–छोटी इच्छाओं को पूरा करने की आदत से खीजने लगे थे। उन्हें इसमें अपना अपमान लगने लगा था। फलतः मेरे पहुंचने पर अवज्ञा होने लगी। कभी–कभी तो सभी लोग मेरे पहुँचते ही अपने–अपने कमरों में चले जाते मुझसे बात करना तो बहुत दूर की बात है वो मेरे वापिस आने तक मेरे सामने ही नहीं पड़ते। उन्हें लगता शायद बार–बार अपमान करके वो मेरा आना रोक देंगे। परन्तु मुझमें एक जुनून था। न तो मुझे अपना अपमान दिखाई देता और न उनकी उपेक्षा। मेरे आँखों में मेरी मॉ के छोटे–छोटे सुख बसे थे। उनकी उत्सुकता, उत्कंठा और इच्छित वस्तु को प्राप्त करने के बाद की सन्तुष्टि ही मुझे नज़र आती। मेरा जाना फिर भी जारी रहा। एक दिन मेरी भाभी ने मुझसे प्रत्यक्षतः कह भी दिया कि बच्चों को आपका आना पसंद नहीं। इसलिये चाची को (मेरी माँ को सब चाची कहते थे) जो चाहिए हम देंगे। तुम्हें आने की और कुछ भी लाने की जरूरत नहीं है।

इसके बाद मैं हफ्ते–दस दिन तक ही खुद को रोक सकी, फिर पहुँच गई। माँ कुछ थकी हुई सी लगी। मुझे देखकर बोली इतने दिन बाद क्यों आई ? मैंने कहा चाची यहां घर में लोगों को मेरा आना पसंद नहीं है

इसलिए न तो आउंगी और न ही तुम्हारे लिये कुछ लाउंगी। वो मेरा हाथ पकड़ कर बोली जब तक मैं जिन्दा हूँ तू आ। मैं देखती हूँ कौन रोकता है ? मैंने कहा नहीं इससे मुझे और तुम्हें दोनों को कष्ट होगा। इस बीच मेरा बड़ा भतीजा आ गया और जोर से चिल्लाने लगा। उसने मुझे स्वार्थी अभिमानी और न जाने क्या–क्या कहा। मेरा तिरस्कार करते हुये बोला ये चार पैसे की चीजें जो लेकर आती हो क्या उससे चाची का गुजारा होता है। तुम तो चाची को चोरी की आदत सिखा रही हो। वो उन सब खाने की वस्तुओं को छिपाकर खाती हैं, झूठ बोलती हैं इनका बुढ़ापा क्यों खराब कर रही हो। मैं रो रही थी स्वयं को अपमानित होते देख रही थी। मेरा दिमाग शून्य में था। बस मुझे एक ही बात सुनाई दे रही थी कि जब तक मैं जिन्दा हूँ तू आ। बेटा! तू इसकी मत सुन मेरी तरफ देख, तू आना बन्द मत करना। मैंने उनकी बात अनसुनी करते हुये कहा ठीक है यदि मेरे आने से इतनी परेशानी है तो नहीं आउंगी कभी भी न आउंगी। वह शायद आज मुझे प्रत्येक तर्क से बेइज्जत करना चाहता था, इसलिए बोला हॉ इसमें भी तुम्हारा स्वार्थ है। यह वक्त इनकी सेवा का है तो हमारे माथे पटक दिया जब ठीक थीं तो खूब ले जाती थी अपने घर। मैंने कहा अच्छा मैं ले जाती हूँ और इनको मृत्युपर्यन्त रखूँगी, अन्तिम दर्शन के लिये भी नहीं बुलाउंगी। जिसके बेटा नहीं होता तो क्या उसकी मुक्ति नहीं होती। मैं ही इनका बेटा हूँ। वो मेरा उपहास करता रहा बोला अरे! अन्तिम संस्कार के समय मीडिया को भी बुला लेना। खूब प्रचार मिलेगा।

उसने मुझे ढोंगी, ड्रामेबाज न जाने क्या–क्या कहा। मेरी माँ मेरा हाथ पकड़े बराबर बड़बड़ाती जा रही थी अरे ये तो पागल है, तू मेरी तरफ देख। बेटा ! तू आना बन्द मत करना, नहीं तो मैं वैसे ही मर जाउंगी। इकलौते पुत्र की मृत्यु और पति के असामयिक देहावसान की पीड़ा उनकी विवशता में झलक रही थी। मैं घर लौट आई। घर आकर भी दो–तीन दिन तक रोती रही। अचानक ही मेरी तबियत बहुत खराब हो गई और मुझे नर्सिंग होम में भर्ती करना पड़ा। इसके बाद एक महीने तक के अवसाद (डिप्रेशन) बाद जब कुछ ठीक हुई तो सब बातों को एक तरफ करके मैं अपने पतिदेव के साथ माँ से मिलने पहुँच गई। परन्तु आज खाने के लिये कुछ नहीं ले गई। मुझे देखकर उन्होंने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये, बोली ! तू बहुत गन्दी लड़की है अपनी माँ को भूल गई। मेरी आँखें छलक आयीं। पता नहीं यह अपने लड़की होने की विवशता थी या मॉ के चेहरे पर छाये पीलेपन से उन्हें खोने का भय था। मेरे पतिदेव ने कहा। चाची ये तो बहुत बीमार थी एक महीने से। चाची धीरे–धीरे मानो स्वयं से ही कहने लगी अरे बाबरी है। सबको एक दिन जाना है फिर उनका बुदबुदाना भजन में बदल गया वो गुनगुनाने लगीं – श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे! हे नाथ नारायण वासुदेव प्यारे जरा तो सोचो विचारों क्या साथ लाये क्या ले चलोगे। जाये यही साथ सदा तुम्हारे गोविन्द दामोदर माधवेति ।

मैं थोड़ी देर बैठी रही। फिर मैंने कहा ठीक है चलती हूँ। वो हमेशा की तरह बोली अब कब आयेगी ?मैंने कहा पता नहीं देखूंगी। बोली देख जल्दी–जल्दी आ जाया कर अब वक्त का नहीं पता कितने दिन जीऊं। हँसी सुनाई दी शायद भतीजा अपनी पत्नी से यही कहकर हँस रहा था कि पिछले दस साल से मैं तो यही सुन रहा हूँ। ये मेरी माँ के सबसे प्रिय नाती और बहू हैं इनके लिये वह जीवन पर्यन्त तनु, मन, धन, से समर्पित रही। उनकी प्रत्येक समस्या में आगे आकर उनकी हौसला बढ़ाती थी। किसी भी परेशानी के आने पर हमेशा यही कहती तुम लोग क्यों घबराते हो मैं हूँ ना। आज उनके शिथिलगत होने पर वही लोग उन्हें उपेक्षित कर रहे हैं।

इस बीच में एक संयोग और बना। मेरी बड़ी बहन ने माँ के घर के पास ही अपना नया घर खरीद लिया। अतः शाम को जब वो दूध लेने जातीं तो माँ से मिल आती उन्हें बच्चों वाली टॉफी बहुत पसंद थी अतः वो उन्हें

वह टॉफी देकर उनके चेहरे की खुशी को रोज महसूस करती। अब माँ के लिये सुख का साधन दुगना हो गया और घर वालों का कष्ट, आक्रोश बढ़ गया। वो शायद माँ को निरूपाय असहाय और स्वयं पर आश्रित देखना चाहते थे। परन्तु बेटी पैदा करना मेरी माँ के लिये सौभाग्य का प्रतीक बन गया। कभी–कभी हम चारों बहने माँ के पास एक साथ जा पहुँचती तब ऐसा लगता मानों मेरी माँ की दीपावली हो रही है। उनके चेहरे पर खुशी की चमक साफ दिखाई देती। बार–बार उठती, लेटती, बैठती फिर कहती बहुत सी बातें करनी थी तुम लोगों से पर तुम्हारे आते ही भूल जाती हूँ। मुझे प्रायः लगता कि वो इस असीमित खुशी के बीच जानबूझ कर उन बुरी स्मृतियों को याद नहीं करती थी।

मैंने अपनी माँ के साथ हुये कुछ हादसों को स्वयं अपनी आँखों से देखा। उनके लिये पीने का पानी बाथरूम की टंकी वाले नल से भर कर रख दिया जाता था। यह बात मुझे बहुत पीड़ा देती थी। सारा घर बोतल का पानी फ्रिज से निकालकर पीता। जब कभी मैं कहती तो सुनने को मिलता अरे सारे दिन कुल्ला करके पानी फैलाती है। बोतल का पानी मुफ्त नहीं आता। मेरी माँ को न तो रसोई का सामान छूने की अनुमति थी और न फ्रिज खोलने की। कभी–कभी तो वह पूरे दिन बिस्कुट और ब्रैड पर बिता देती थी क्योंकि घरवालों का कहना था कि ज्यादा खाने से यह बीमार पड़ जाती है इन्हें अपने पेट का अंदाज नहीं रहा है अतः चुपचाप छिपकर खा लेती है, अतः भोजन को अधिक मात्रा में देना ठीक नहीं ।इन सब स्थितियों को देखकर मैं कभी जब ज्यादा परेशान हो जाती तो कहती चाची तुम मेरे घर चलो। तो कहतीं अरे नहीं तेरे घर मर गई तो इनकी बहुत बदनामी होगी। अब तो इस देहरी से न जाउंगी। बहुत सारी छोटी बड़ी बातें, तकलीफदेह स्थितियों को मैंने अपनी माँ को सहज रूप में भोगते हुये देखा। परन्तु मैं विवश निरूपाय, हुई कुछ न कर सकी। चाची का विश्वास भरा हाथ सदा यही कहता मैं ठीक हूँ बस तू आती रहना मुझे तुझसे हिम्मत है। हाँ एक घटता और ऐसी हुई जिसके कारण मेरी मॉ को हार्दिक पीड़ा हुई। उन्होंने मुझसे एक दिन कहा कि मैं तुमसे तो बेटा कह सकती हुँ ना। मैंने कहा क्यों क्या हुआ? वो बोली मुझसे सब कहते हैं कि तुमने तो बेटा पैदा किया था वो मर गया अतः इतनी दुर्भाग्यशाली जुबान से किसी को बेटा मत कहा करो। मैंने कहा अब तुम अपनी चारों बेटियों को बेटा ही कहा करो। एक दिन मैं अचानक पहुँची तो देखा कि उनके शरीर पर बड़े–बड़े नीले निशान थे चेहरा सूज रहा था। वो डिप्रैशन में थी। मैंने पूछा ये क्या हुआ? बोली पता नहीं? भतीजे की बहू ने आकर सफाई दी अरे मानती नहीं है सीढ़ियाँ चढ़ रही थी सो गिर गई। हम तो परेशान हैं जो रखता है उसी को पता चलता है आने वालों को क्या है कुछ करना पड़े तब न । फालतू का उपदेश तो कोई भी दे सकता है। वो बड़बड़ाती हुई चली गई। मुझे बाद में पता चला कि चाची को ये लोग तेज असर की नींद की गोली देने लगे हैं जिससे वो रात में जागकर इनकी नींद न खराब करें। उसी नशे में वो प्रायः गिरने लगी। उनका बिस्तर भी अब कमरे से हटा कर लॉबी में डाल दिया गया। वहाँ पर न तो कूलर की व्यवस्था थी और न खुली हवा की। उस घुटन भरे स्थान पर जहाँ मैं दो घण्टे नहीं बैठ पाती थी पता नहीं चाची कैसे रहती थी ? परन्तु वो किसी भी तकलीफ की शिकायत मुझसे नहीं करती थी। बस जितने समय मैं उनके साथ होती वह उस सारे सुख को बाद के लिये मानो एकत्रित करती रहती। मैं भी कभी उनकी पीठपर पाउडर लगा देती कभी चोटों पर मरहम । उनकी आंखों की चमक इस सबसे और बढ़ जाती।

इन अनेक घटनाओं के बीच ही उस अन्तिम विवाद ने जन्म लिया। मैं उसके बाद जब चाची के पास से लौटी थी तो सोच रही थी कि अब पन्द्रह दिन बाद मिलने जाया करूंगी परन्तु सात दिन बाद ही छोटी बहन के

फोन ने मुझे स्तब्ध कर दिया। रोती हुई जब मैं पहुँची तो चाची एक छोटी सी कोठरी में बेसुध थीं। किसी को पहचान नहीं पा रही थी। मेरी भाभी ने कहा देखना कौन आया है ? वह बेसुध अवस्था में भी बोली मंजू है। मैं भरभरा कर रो पड़ी। मैंने कहा इस घुटन भरी कोठरी में क्यों लिटाया है इन्हें हवादार कमरे में घर के समस्त सदस्य एक स्वर में बोले अरे इनकी इन्द्रियां शिथिल हो रही हैं इसलिये बाथरूम के बारे में बता नहीं पा रही। इस कमरे में नाली है यहां करेंगी तो कम गन्दगी फैलेगी। मैं सोच रही थी कि 'हतभाग्य' इन्सान का अस्तित्व जड़ कमरे से भी कम है। मैं धीरे–धीरे उनका हाथ सहलाती रही। मेरी अन्य तीनों बहनें भी आ गईं। मेरी माँ के चेहरे पर सन्तुष्टि का भाव आ गया। एक सुरक्षा का विश्वास । रात्रि बारह बजे हम सब बहनें घर लौट आये इस संकल्प के साथ कि कल सुबह सात बजे फिर आ जायेंगे।

मुझे पूरी रात नींद नहीं आई। बार–बार उनके हाथ का स्पर्श मुझे जगा देता था। सुबह सात बजे जब मैं पहुंची तो मेरी भाभी उन्हें नहलाने का प्रयास कर रही थी। चाची को कुर्सी पर बैठा दिया था जैसे वह कोई अछूत हैं। मुझे देखते ही बोली अच्छा हुआ तुम आ गयी। मैं तो नहा चुकी हूँ इसलिये तुम इन्हें नहलाकर पाउडर लगा दो। मैंने कहा मैं भी नहाकर ही आई हूँ लेकिन फिर भी नहला दूंगी। मैं मां बन गई और मेरी माँ अबोध बच्ची। उन्हें नहलाकर, कपड़े बदलकर चारपाई पर लिटा दिया। हम चारों बहने उनकी चारपाई के पास बैठ गये। आज शायद बेटी को पैदा करना ही माँ के लिये गर्व सम्मान और सुरक्षा का कवच बन गया। लग रहा था जैसे बेटियाँ ही उनकी ऊर्जा हैं। बार–बार कहने पर भी उन्होंने भोजन नहीं किया मैंने दोपहर को पूछा आइसक्रीम लाई खाओगी बोली हाँ। मैं पास की दुकान से आइसक्रीम लाई उन्होंने पूरी खाली। फिर वही गंगाजल तुलसीदल और पानी। कुछ व्यंग्य मिश्रित बातें कानों में पड़ी अरे रोटी कौन खाये जब आइस्क्रीम खाने को मिले। मैं चुप रही क्योंकि मैं अपनी माँ के प्रयाण काल को अशान्त करना नहीं चाहती थी। डॉक्टर को बुलाने के सुझाव को बिल्कुल सिरे से खारिज कर दिया गया क्योंकि उनका विचार था कि यह सब नौटंकी है। ऐसा कई बार हो चुका है। चाची अभी मरने वाली नही है अभी तो दो चार को मार कर ही मरेंगी।

खैर चाची ने दूसरे दिन भी वही एक कप आइसक्रीम मेरे हाथ से ही खाई। तीसरे दिन जब मैं आइसक्रीम लेकर पहुंची तो बोली बस अब तेरा काम खत्म। अब मत लाना यह आखिरी है। चौथ दिन वो बेहोशी में थी। हम चारों बहनें रोज सुबह पहुंच जाते और रात को लौटते। इस बीच वहाँ किसी को अपने लिये पानी तक देने का कष्ट न देते। बस चुपचाप चाची को देखते रहते। मेरे हाथ में गंगाजल और आंखों में पानी बराबर रहता। रिश्तेदार अन्तिम दर्शन को आने लगे। छठे दिन शाम को जब हम बहनें चलने को तैयार हुई तो चाची की आंखों से दो बूंद आंसू गिरे। हमने कहा क्यों रो रही हो आज नहीं जायें, उन्होंने इशारे से नहीं कहकर सिर हिला दिया। चाची का बिस्तर एक दिन पहले ही जमीन पर लगा दिया था। हम अपनी माँ के चारों और बैठ गये। चार दिन पहले जब मेरी मां होश में थी तब ही पंखा झलती मेरा बड़ी बहन को देखकर बोली थी। खूब सुखी रहना। मेरी बहन ने पूछा चाची तुम क्या सोच रही हो किसी को बुलाना है? किसी की याद आ रही है तो उन्होंने स्वीकृति की मुद्रा में सिर हिलाया। मेरी बहन बोली किसकी याद आ रही है। हमें तब ही अहसास हो गया था कि अब चाची नहीं जीएंगी। दस वर्ष पूर्व दिवंगत हुए हमारे पिता के पास जाने की संवदेना उनमें जाग्रत हो रही थी। आज वो घड़ी आ गई। मैंने भाभी से कहा अन्तिम वक्त है गौदान करा दो। भाभी बोली अरे बच्चे चिल्लाते हैं वो इन सब पुरातनपंथी बातों को नहीं मानते। मैं चुप हो गई। मेरे पर्स में जितने रुपये थे मैंने निकाले और चाची के हाथ में पकड़ा दिये। मुट्ठी अकड़ रही थी मैंने कस कर बन्द करना चाहा परन्तु बन्द

नहीं हुई। मैंने संकल्प लिया अपनी मॉ की ओर से गोदान का उन रुपयों को शीघ्र ही अपनी बड़ी बहन के साथ, गाय के चारे के लिये समीप में स्थित एक गोस्वामी के घर दे आई। लौटकर माँ के सिरहाने बैठकर नारायण मन्त्र पढ़ने लगी। हाथ में जल लेकर एकादशी के व्रत का समर्पण भी माँ के लिये कर दिया। उनकी श्वांस की गति तेज हो रही थी। बार–बार झटक आते थे। मै। उनके पैरों को दबाने लगी। पैर जड़ हो चुके थे। मैंने उनके वक्ष को छुआ, शीतल बर्फ जैसा। धागे के बराबर धड़कन का अहसास। मैं और तेज मन्त्र पढ़ने लगी। मन्त्रों के साथ रूदन का स्वर भी मिल रहा था। धूपबत्ती की महक व्याप्त थी। भाभी राम का नाम बोल रही थीं। रात्रि के एक बजे थे। पूर्णिमा का दिन था। अचानक उन्होंने अपने दाँतों को दबाकर एक दीर्घ स्वर किया हम स्तब्ध रह गये। ऐसा लग रहा था कि सम्पूर्ण शरीर से प्राणों को खींचकर वह मस्तिष्क में एकत्रित कर रही हैं। पुनः एक स्वर और उसके बाद एक तेज ई ई ई..... की आवज। घुटा हुआ स्वर फिर नीरवता। एक लम्बी शान्ति/धड़कन थम कई, चाची ने प्राण त्याग दिये। एक योगी की भाँति उनके माथे पर श्वेत तिलक बन गया। आँखें बंद थीं। चेहरा बिल्कुल शान्त कोमल, श्वेतवर्ण। अब किसी के आने की उन्हें कोई **प्रतीक्षा** नहीं थी। मैं पूरी रात उनकी देह से लिपटी रोती रही। सुबह विदाई की तैयारी थी। अपने प्रिय भाई को तो उन्होंने देह त्याग करते ही स्वयं सन्देश दे दिया था। क्योंकि मेरे मामाजी का उसी समय फोन आया बोले कमल गई क्या? मेरी माँ जो कमला थी पर अपने बड़े भाई के लिये प्यारी छोटी सी कम । मामाजी नहीं आये। अपने बेटे बहू को भेजा क्योंकि वे शायद अपनी स्मृति में अपनी अनुजा दुलारी बहन को जीवित ही रखना चाहते थे ।

अन्तिम यात्रा की तैयारी थी। मुझे बार–बार यही सुनाई दे रहा था कि जब तक मैं जिन्दा हूँ तू जरूर आना। मुझे लगने लगा कि आज मेरी भी यह अन्तिम यात्रा है। अपनी माँ के साथ–साथ मेरा भी इस देहरी को अन्तिम नमन/गुलाब के फूलों से सजी–धजी पीले वस्त्र और पीले चन्दन में यह एक ऋषि का स्वर्गारोहण था। मैं अपने आप में नहीं थी। मेरा समस्त ज्ञान, दर्शन, आत्मा परमात्मा का चिन्तन, भगवदगीता का तत्त्वयोग सब छूट रहा था। मैं केवल छोटी बच्ची बनकर बिलख रही थी। बार–बार यही कहती चाची तुमने कहा था जल्दी–जल्दी आया करो। अब क्या करूँ? कहां जाऊँ ? इतनी जल्दी क्यों विदा ले ली। चाची की देह को महाप्रयाण के लिये भेजकर मैं घर के अन्दर नहीं गई। दरवाजे से ही अपने घर लौट आई। एक भयानक सन्नाटा मेरे मन में व्याप्त था। ऑसू सूख गये केवल निशान बने हुये थे। बाद के सांसारिक संस्कारों से भी मैं खुद को जोड़ नहीं पाई। मेरी माँ के साथ बीती वह अन्तिम रात ही मेरा मायका बन गई है। अब जब भी कभी अपनी माँ से मिलने का मन करता है, सावन में बाबुल की देहरी याद आती है, तब ही ऑखें बन्द करके उस अन्तिम राम में प्रवेश कर लेती हूँ और भीगी आँखों से लोटकर अपने घर की चौखट पर खड़ी अपनी माँ से विदा लेती हूँ। जब भी पूजा करने के लिए अपने गोपालजी को गोद में लेती हूँ तो लगता है मेरी माँ पीछे खड़ा होकर गुनगुना रही है–

श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे हे नाथ नारायण वासुदेव ।

डॉ. मञ्जूलता शर्मा,
अध्यक्ष संस्कृत विभाग,
सैण्ट जॉन्स कॉलेज, आगरा

जिन्दगी ना मिलेगी दोबारा

जिन्दगी ये किस मोड़ पे ले आयी है,

ना माँ, बाप, बहन, ना यहा कोई भाई है,

हर लड़की का Boy Friend ब्वाय फ्रेंड है ,

हर लडके ने Girl Friend पायी है,

चंद दिनो के है ये रिश्ते, फिर वही रुसवायी है,

घर जाना Home Sickness कहलाता है,

पर Girl Friend से मिलने का टाईम रोज मिल जाता है,

दो दिन से नही पूछा माँ की तबीयत का हाल,

Girl Friend से पल–पल की खबर पायी है,

जिन्दगी ये किस मोड पे ले आयी है .....

कभी खुली हवा में घूमते थे,

अब AC की आदत लगायी है,

धूप हमसे सहन नहीं होती,

हर कोई देता यही दुहाई है,

मेहनत के काम हम करते नहीं,

इसीलिये Gym जाने की नौबत आयी है,

McDonalds, Pizaa Hut जाने लगे,

दाल–रोटी तो मुश्किल से खायी है,

जिन्दगी ये किस मोड पे ले आयी है.....

Work Relation हमने बढ़ाए,

पर दोस्तों की संख्या घटाती है,

Professional ने की है तरक्की,

Social ने मुंह की खायी है,

जिन्दगी ये किस मोड पे ले आयी है .....

एक अलिखित कविता

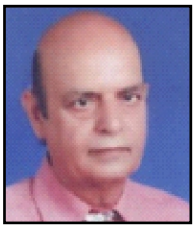

मैंने कितनी कविताएं
कितने गीत लिखे ।
जो भी देखा, जो–जो भोगा,
जैसा भी महसूस किया
भावनाओं के जो भी रूप–प्रतिरूप बनाए
उनको रंग दिये, आकार दिये
और अपनी पहचान दी।
लगता है अब भी
कुछ कहने को बाकी है
क्योंकि
कलम और कलमकार का होता है
सांस–सांस पर रिश्ता।
कविता नहीं होती
केवल शब्दों का ताना–बाना
देह की रंगत, आँखों का जादू
एकांत में बुलबुल का गाना
निर्झर का बस बहते जाना,
कविता जीवित से कहीं ज्यादा
जीवंत होती हैं ।
कविता नहीं
चौंक–चौराहों के भाषण
सत्ता के भूखे भेड़ियों के आश्वासन
चापलूस अखवारों की सुर्खियां
रंगदार पोस्टरों की भाषा
कविता की अलग है परिभाषा ।
मित्रों !
टैक्स, मंहगाई, भूख के
पीड़ित क्षण भोगते
दलित राजनीति के
जबड़ों में कैद मेरे मित्रो –
कविता एक पुल है
तुम्हारे और मेरे बीच,
तुम मेरी
एक अलिखित कविता हो
कविता जो सब की साक्षी है
कविता जो नहीं होती ध्वस्त
आतंक, बारूद, विस्फोटकों और गोलीवारी में।
मेरी यह कविता
अलिखित कविता
तुम्हारे नाम
सम्पूर्ण क्रांति के नाम
जिसका इंतजार है
हम सबको बहुत दिनों से।

डॉ. जितेन्द्र उधमपुरी
पद्मश्री, जम्मू

'जमीन' उपन्यास में चित्रित नारी

'जमीन' उपन्यरस भीमसेन त्यागी की आखिरी तथा सर्वोत्तम कृति है। यह उपन्यास गणेशपुर गाँव को आधार बनाकर लिखा गया है। प्रस्तुत उपन्यास में आज़ादी के कुछ वर्श पूर्व से लेकर 1964 तक के समय की कथा को लिखा गया है।

उपन्यास में दो प्रकार की शोषित नारियों का चित्रण है एक तरफ वह जिनकी स्थिति दयनीय होते हुए भी वे अन्याय के विरूद्ध आवाज नहीं उठती और मूक बनकर सब कुछ सहन करती रहती हैं तो दूसरी तरफ उन नारियों का चित्रण है जो शोषित होती हुई भी संघर्षशील है और अपने आत्मसम्मान के लिए हर मुसीबत का सामाना करने को तत्पर रहती है। वास्तव में जो नारी अपने अधिकारों के प्रति सचेत होगी वही अन्याय के विरूद्ध आवाज़ उठा सकती है

भारत के आजाद हो जाने के बाद भी नारी शोषण अपनी जगह वैसे का वैसा कायम है बल्कि आज उसने एक उग्र रूप धारण कर लिया है। नारी पर हो रहे अत्याचारों को तो कभी हमारा समाज बड़ी ही आसानी से किसी पुराने रीति–रिवाज या परम्परा का नाम दे देता है तो कभी इन अत्याचारों को धर्म की आड़ लेकर उस चर्म सीमा तक पहुंचा देता है जिसको देखकर जो सुनकर हमारा दिल दहल जाता है।

'जमीन' उपन्यास में ऐसे ही रीति–रिवाज और धार्मिक आडम्बर का चित्रण स्पष्ट रूप से हुआ है। गॉव के उच्च वर्ग के ठाकुर द्वारा यह रीत बनाई गई है कि जो भी नारी ब्याह करके आती है उसे पहली रात ठाकुर की हवेली में गुजारनी पड़ती है। ऐसी ही रीत का शिकार होती है गांव की एक नारी पात्र अनारो । उपन्यास में जब अनारो का विवाह होता है तो उस गांव की परम्परा के अनुसार (बंधुआ मजदूर की शादी होने पर उसकी पत्नी को पहली रात मालिक के साथ गुजारनी पड़ती है) उसे ठाकुर चन्दन सिंह की हवस का शिकार होना पड़ता है। किन्तु वह ठाकुर चन्दन सिंह की हवस का शिकार केवल एक बार ही नहीं होती बल्कि उसे कई बार ठाकुर से यौन उत्पीड़न मिलता है – ''ठाकुर चन्दन सिंह को जब भी बुखार चढ़ता वह अनारो को बुलवा लेता और कभी तो नशे की झांझ में खुद ही उसकी कोठरी में पहुॅच जाता।''1 हमारे समाज में मूलतः दो वर्ग सामने आते हैं–शोषक वर्ग और शोषित वर्ग । शोषक वर्ग में जमींदार, साहूकार वगैरह आते हैं और शोषित वर्ग में मजदूर। इन शोषक ताकतों और शोषितों के बीच में बेचारी नारी बिना वजह ही पिस जाती है। जब मजदूर को पैसे ही जरूरत होती है तो मालिक लोग उन्हें पैसा तो देते हैं लेकिन उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर उनकी पत्नी, बहू, बेटियों के शरीर को नोंचते–खंचोटते है स्त्री को देखते ही उनकी लार टपकने लगती है, एक भूखे देहखोर भेड़िये की तरह उन पर टूट पड़ते हैं और उनके शरीर को मनचाहे ढंग से मसलते हैं। उनकी दंरिदगी का शिकार होकर भी स्त्री को चुप ही रहना पड़ता है और इच्छा न होते हुए भी यौन संबंध बनाना पड़ता हैं। उपन्यास में अनारो के न चाहने पर भी उसे ठाकुर से यौन संबंध स्थापित करना ही पड़ता है। जब एक बार अनारो मना करती है तो ठाकुर कहता है – ''हम तो इतनी रात गये चलकर आये हैं और तू नखरा दिखा रही है।'' ''नखरा नहीं, मेरा जी राजी नहीं है। गात में पीड़ा है।'' ''पीड़ा तो सब ठीक हो जाएगी, तू आ तो।'' ''ना ही, मेरा जी, नहीं चाह, रहा।'' ''तेरे चाहने का क्या मतलब । हम चाहते हैं तो तुझे चाहना ही पड़ेगा।''[2] इन सब बातों से लेखक ने हमारे समाज की कड़वी सच्चाई को भी सामने लाया है। अनारो तो एक दलित जाति की महिला थी लेकिन नारी चाहे उच्च वर्ग की हो चाहे निम्न वर्ग की उसे मनुष्य समझा ही नहीं जाता। उसकी

इच्छा क्या है वह क्या चाहती है इस पुरूष प्रधान समाज में किसी को इस बात से दूर–दूर तक कोई वास्ता नहीं होता। पुरूष तो सिर्फ नारी शरीर को रोंदना ही जानते हैं। चाहे उसका अपना पति हो या बाहर का कोई मर्द नारी को मात्र खिलौना ही समझा जाता है।

अनारो का पति भी कई बार खुद ही उसे चन्दन सिंह के पास भेजने को मजबूर हो जाता है उपन्यास में जब अनारो का पति चन्दन सिंह के यहां अनाज मांगने जाता है तो चन्दन सिंह रहस्मय ढंग से मुस्कुराकर कहते हैं, ''शाम को अनारो को भेज दिये। वह ले जाएगी''। ''मेहरबानी, सरकार।'' महकू के झुर्रीदार चेहरे पर फीकी चमक उभरी। उसने शुक्र मनाया कि अनारो आएगी तो अनाज के साथ तमाखू–तड़े के लिए रूपया–धेल्ली नगद भी हाथ जा आएगा।''[3] इससे यह स्पष्ट होता है कि महकू आर्थिक विपन्नता के कारण अपनी पत्नी को बार–बार उस जालिम चन्दन सिंह के पास भेजने पर मजबूर होता है। इसी तरह ठाकुर रौनक सिंह तथा मखमली (रौनक सिंह के बंधुआ मजदूर मिरची की पत्नी) के अवैध सम्बन्ध का संकेत भी उपन्यास में मिलता है। आर्थिक तंगी के कारण नारी देह का सौदा होता है। विवश होकर नारी भी परिवार की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए ठाकुर के पास जाने के लिए मजबूर हो जाती है।

भीमसेन त्यागी ने यह भी दर्शाने की कोशिश की है कि किस प्रकार नारी अपने घर के भीतर भी सुरक्षित नहीं है पुरूष की कामुक दृष्टि उसके अपने घर में भी पीछा नहीं छोड़ती। उपन्यास में नारी पात्र कला के माध्यम से यह बात स्पष्ट होती है कि किस प्रकार उसका देवर ठाकुर रौनक सिंह भी उस पर बूरी नज़र रखता है।

केवल उच्च वर्ग के ठाकुर ही नहीं बल्कि गांव का ढोंगी बाबा भी नारी उत्पीड़न में शामिल है। लेकिन यह शोषण केवल बाबा द्वारा ही नहीं होता बल्कि लोगों का अंधविश्वास इसका मूल कारण है। बाबा द्वारा लोगों के ठगे जाने का कारण है लोगों का विश्वास है कि बाबा चमत्कार से धन ऐश्वर्य, पुत्ररत्न आदि अन्य अनेक इच्छाओं की पूर्ति करेंगे, इसीलिए लोग अपनी बहू–बेटियों को बाबा के पास भेजते हैं जिसके चलते बाबा बिना किसी विद्रोह के नारी का यौन–शोषण करता है और ऐसे में नारी लोकलाज तथा बाबा के प्रकोप के डर से अपना मुँह भी नहीं खोल पाती । प्रस्तुत उपन्यास में भी एक नारी पात्र है (अंगूरी) जो गुदड़ी वाले बाबा के शोषण का शिकार बनती है। अंगूरी का बेमेल विवाह होता है लेकिन वह अपनी मॉ की बातों को याद रखती है कि पति चाहे जैसा भी हो पत्नी का धर्म अपने पति की सेवा करना ही है और अपने पति के साथ रहने के लिए तैयार हो जाती है। लेकिन उसकी सास उसे ढोंगी बाबा के पास भेज देती है और उसे अपना गुरू बनाने के लिए कहती है। उसकी सास खुद उसे बाबा की मालिश के लिए भेजती है – ''बहू तुमसे मसाला ठीक से नहीं पिसेगा। मैं पीस देती हूँ। तब तक तू बाबा की मालिश कर दे।''[4] वे बाबा को भगवान मानती है और बाबा की कोई भी बात नहीं टालती। उसे यह डर रहता है कि यदि बाबा की कोई बात टाली तो बाबा नाराज़ हो जाएंगे और कुल का नाश कर देंगे। बाबा और अंगूरी की निकटता बढ़ती जाती है और बाबा उसे अपनी शारीरिक भूख शान्त करने के लिए रोज रात को अपने पास बुलाता है। एक दिन ऐसा आता है कि वह बाबा के पास जाती है और अपने घर कभी वापिस नहीं आती है। इसी तरह उपन्यास में अंगूरी की सास मखमली का भी बाबा के साथ संबंध दृष्टिगोचर होता है।

उपन्यास में यहाँ अनारो और अंगूरी जैसी शोषित नारियों का उल्लेख है तो वहीं लता और चंपा जैसी साहसी महिलाओं का भी यथार्थ चित्रण मिलता है। चंपा एक साहसी नारी है जब उसका जेठ उसको अपनी

हवस का शिकार बनाना चाहता है तो वह उसका कड़ा विरोध करती है। चंपा का जेठ जितू उसे घर में अकेला पाकर उसका हाथ पकड़ लेता है तो चम्पा तेजी से अपना हाथ छुड़वाकर तन कर खड़ी हो जाती है और कहती है, ''कमीने, उस कुत्तिया से पेट नहीं भरता तेरा?''[5] चम्पा एक संघर्षशील नारी भी है। जिसका परिचय हमें तब मिलता है जब उसके पति को जेल हो जाती है तो वह महकू से हल चलाना सीखती है और अपनी फसल लगाती है लेकिन पंचायत वाले उसके इस साहस भरे कृत्य पर शाबाशी देने की बजाय उसे दण्डित करते हैं तो वह भरी पंचायत में यह कहने का दम रखती है कि ''हल चलना धरती का पेट फाड़ना नहीं, उसकी सेवा करना है और यही सेवा मैंने की है। हल चलाना पाप नहीं, पाप तो बिना मेहनत किये दूसरों की कमाई खाना है।''[6] इतना ही नहीं जब ठाकुर चन्दन सिंह का बेटा उसकी बेटी लक्ष्मी के साथ छेड़खानी करने की कोशिश करता है तो उससे वह माफी भी मंगवाती है। वह एक विद्राही स्त्री के रूप में तब हमारे सामने आती है जब वह ठाकुर के बेटे की शिकायत लेकर उसके पास जाती है तो ठाकुर औरत जात की तोहीन करता है। तो वह ठाकुर को ललकार कर कहती है– ''तू औरत जात को समझता क्या है? तुझे पता चल जाएगा कि औरत सिर्फ मर्दों के हाथ का खिलौना नहीं उसकी अपनी भी कोई ताकत है।''[7]

उपन्यास में लता भी कोई कम साहसी नहीं है। लता ग्राम सेविका है वह एक बड़ी नेक दिल लड़की है। गांव में वह ठाकुर चन्दन सिंह के घर ठहरती है। वह महिलाओं की निजी समस्याएं सुनती है तथा उनको उचित सलाह भी देती है। वह उनको परिवार नियोजन के बारे में भी बताती है। इससे वह एक सुलझी हुई नारी के रूप में हमारे सामने उभर कर आती है। ठाकुर उसे अपनी शारीरिक हवस का शिकार बनाना चाहता है लेकिन तमाम कोशिशों के बावजूद वह नाकामयाब रहता है। जब चन्दन सिंह उसकी कमर में हाथ डालकर अपनी तरफ खींचने लगता है तो ''लता ने एक चांटा चन्दन सिंह के मुंह पर जड़ दिया और चीख कर कहा शर्म नहीं आती तम्हें।''[8] और उसे धक्के लगाकर अपने कमरे से बाहर निकाल देती है। इन सब बातों से उसका साहसी होना साफ–साफ नजर आता है। साथ ही यह भी पता चलता है कि यदि नारी को शोषण का विरोध करना है तो उसका जागरूक होना आवश्यक है और जागरूकता तभी आ सकती जब वह शिक्षित हो।

उपन्यास को पढ़कर यह प्रमाणित होता है कि आजादी से पहले की बात हो या आज की, नारी पर अत्याचार होते रहे हैं। महिलाएं कहीं भी सुरक्षित नहीं हैं। चाहे घर के अन्दर हो या बाहर, महिलाएं यौन–उत्पीड़न, बलात्कार, छेड़खानी, हत्या, अपहरण, दहेज प्रथा आदि का शिकार हो रही हैं। वास्तव में उपन्यासकार भारतीय गांव में बसने वाली स्त्रियों की यथार्थ स्थिति से अवगत करवाना चाहते हैं साथ ही नारियों में जागरूकता लाने की भी कोशिश करते है कि वह सदियों से शोषण की इस जमीन पर अपने साहस व विद्रोह द्वारा शोषितों का दमन कर अपने अस्तित्व को स्थापित करें।

सन्दर्भः–

(1) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 59; (2) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 170; (3) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 52; (4) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 263; (5) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 60; (6) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 298; (7) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 285; (8) भीमसेन त्यागी, जमीन, पृष्ठ – 247 ।

कामिनी देवी–शोध अध्येता
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

आकाश-गंगा (एक मार्मिक अन्तर्कथा)

शिव तेरस का पर्व सम्पूर्ण राष्ट्र में बड़ी श्रद्धा के रूप में मनाया जाता है। विशेषकर शिव भक्तों के लिए शिव तेरस, इनका एक अलौकिक त्यौहार है। भंग की तरंग के साथ शिव–लीलाओं में डूबना, उनके आशुता रूप की मस्ती भरी चर्चाओं में खो जाना और फिर जी भरकर हंसी के ठहाके लगाना, कभी हंसना और कभी सुधी–सुधियों से आंखों को गीला करना, चाहकर भी इस रहस्य को न बताना, मानो जीवन के दोनों छोरों से स्वयं को बांधकर जैसे हमारी पूरी शिव मण्डली शिवत्व को पूर्ण निश्छल भाव से प्रणाम करती है। इसी परम्परा का निर्वहन इस वर्ष भी हुआ।

सोमवार का दिन था। सायंकाल से ही शिव भक्त अपनी नियोजित परम्परा में जुट गये। समर्पण धाम के ऊपरी कक्ष में ठंडाई की सुगन्ध आने लगी। दूध मिश्रित रबड़ी के पात्रों में, भंग का हरा रंग, हर हराने लगा। इलायची और बादाम के छिलके अपनी जीवन यात्रा पूरी कर, कक्ष के एक कोने में आनंद की प्रतीक्षा करने लगे। प्यास अलौलिक होने लगी। मिट्टी के बड़े–बड़े डब्बू सीना तानकर मस्ती से इस तरह भर गये, जैसे वे हिमालय से चलकर आये हों। हम लोगों ने भंग क्या छानी, ऐसा लगा जैसे स्वयं के जीवन को छानने की तैयारी कर डाली।

धीरे–धीरे डब्बू रीतने लगे, और हम स्वयं से परस्त जिन्दगी को जीतने लगे। सदियों पुरानी बातें नई सी लगने लगी। संसार पर दृष्टि डाली तो कहीं भी न राग–द्वेष दीखा, न कहीं क्रोध प्रतिशोध दीखा, न कहीं कोई पराया लगा। शिव की जटाओं का स्मरण करते ही, हर नदी गंगा की बहन दिखाई देने लगी। मान–सरोवर के हंस हमारी संगोष्ठी में न मालूम कैसे सम्मिलित हो गये ? हमने उन्हें निराश नहीं किया, प्रेम और भक्ति के आंसुओं के इतने मोती चुंगाये कि वे भी यह कहने के लिए बाध्य हो गये कि सच है, ''जहाँ शिव के भक्त भावना के भोर में जब आत्म स्नान करते हैं, वहां नश्वर देह पर भी कैलाश का मधुर वैभव नृत्य करने लगता है।'' आनंद के इस आरोहण में हमारा पवर्तारोहण कुछ इस तरह हुआ, कि हास्य–व्यंग्य, गीत, कविता, संगीत, चुटकलाओं की बौछार, इस क्षण, सब हमारे अप्रथक अंग बन गये। अंतश्चेतना की तलवारें हम लोगों के बीच कुछ इस तरह चलीं कि हमारे अविरल पाँच घंटे, इस तरह कटे कि वे कटकर भी किसी छाव को न छू पाये। साथियों ने भोले बाबा की जय बोली और शिव आस्था के साथ विदा हुये और मैं एक अविस्मरणीय ध्यान में डूबा–डूबा अपने आसान पर निद्रा की गोद में सो गया।

एक कहावत है कि निद्रा बुढ़ापे का अमृत है। मैं यह अमृतपान कर ही रहा था कि रात्रि के इस द्वितीय प्रहर में एक झटके की आहट हुई। मैं चौंककर अपने आसन पर झटपट उठकर बैठ गया। कपाटों की दराजों से छनकर फिर ध्वनि आयी, तुम अभी सो रहे हो? ध्वनि में कोमलता मिश्रित वह मिठास था कि मेरा हृदय स्वयं मीठा हो गया। मैंने विनम्रता के साथ पूछा, कौन ? उत्तर मिला, तुम्हारी आकाशगंगा। मेरी प्रसन्नता पीयूष पीनें लगी। मैंने झटपट कपाट खोल दिये और लगा कि जैसे मैं स्वयं खुल गया। बिजली इस समय मुझसे शत्रुता निभा रही थी। अतः मैं स्वयं एक छोटी सी मोमबत्ती से अंधकार के काले मुख पर प्रकाश की पर्त चढ़ा दी। आकाश गंगा की स्पष्टता सौभ्यता के सागर में स्नान कर उठी। नीली साड़ी में लिपटी हुई वह धुली–धुली सी देह। यौवन के ढलान पर भी मुख मण्डल पर तरलता का सरल आकर्षण। नयनों में स्पष्ट सघन निमंत्रण का सात्विकी संकेत। मैंने रोमांचित मन को स्थिर करते हुए धीरे से पूछा – इस समय ?और यहाँ ?

''भय तो प्रेम शून्यता से जन्य होता है, तुम तो आकाश गंगे! मेरी प्रेम यात्रा हो – मैंने कहा ।

आकाश गंगा – तो फिर इस यात्रा के लिए उठो, शिव तेरस की रात व्यर्थ न जाने दो। हम तुम इस यात्रा के लिए संकल्पबद्ध हो चुके हैं। मुझे स्मरण है, पर तुम भूल गये। यही स्मरण दिलाने के लिए, यहॉ आना पड़ा। मैं शिष्य के सादृश्य सिर झुका कर खड़ा हो गया। आश्रम का बाहर से ताला लगाया और भीतर का सब कुछ खोलकर मैं आकाश गंगा के गतिवान चरणों की चाँदी बटोरता हुआ – उसके पीछे–पीछे चल दिया।

वैसे हम दोनों के पैर चार थे, पर दो ही लग रहे थे और कभी–कभी ये दो भी अद्वैत हो जाते। जीवन–दर्शन की ये पहेली, प्रेम क माधुर्य को संजोये हुये, कभी उलझती और कभी सुलझती। जो भी हो अन्तर्द्वन्द्व अलौकिक था, माधुरी में डूबा था और इस पर आकाश गंगा के मौन हस्ताक्षर थे। इस यात्रा का परिणाम चूंकि कुँआरा था, इसलिए आन्तरिक जिज्ञासा जवान होकर बार–बार उछल रही थी। चलते–चलते हम दोनों एक छोटी सी नदी के किनारे पर आ गये। आकाश गंगा ने सजल ओठों को खोलते हुये कहा कि हे मेरे आकांक्षी पथिक। चलो कुछ समय इस छोटी नदी के तट पर विश्राम कर लें – फिर आगे बढ़ते हैं। हम दोनों बैठ गये। तट से टकराने वाली नदी धारा कल–कल की ध्वनि उगल रही थी। सम्पूर्ण प्रकृति हमारी मौन दर्शिका थी और इस समय मैं संसार का सबसे सौभाग्यशाली पुरूष था क्योंकि अखिल ब्रह्माणड की सर्वश्रेष्ठ सौन्दर्यात्मक धरोहर सिर्फ मेरे पास थीं, सिर्फ मेरे पास ..... ।

मैंने जिज्ञासु बनकर बड़े विनत्भाव से आकाशगंगा की ओर देखा। उसके विशाल नेत्रों से ज्योति छिटक कर उसी के सौन्दर्य को बोझिल बना रही थी। मैंने धीरे से प्रश्न किया – हे आकाश गंगे! मुझे यहाँ लाने का रहस्य ? आकाश गंगा का मौन मुखरित हुआ और उसने बोलना प्रारंभ किया। तुम्हें पता है पथिक! यही वह नदी है, जिसके किनारों पर हम बचपन में खेलने आते थे। बिना सेतु के नदी को पार करते थे। हम दोनों इतने अबोध थे कि हमें न यह पता था कि सूरज किसके लिए निकलता है और चन्द्रमा अपनी कलाओं में किसके लिए मुस्कराता है ?न हमें अमीरी का ज्ञात था और न गरीबी का। न हमें किसी जाति–पॉति का बोध था, न किसी धर्म सम्प्रदाय का। प्रसन्नता ही हम दोनों की मूल सम्पदा थी। राग–द्वेष, हित–अहित अपना–पराया क्या होता है, इसकी चर्चा हमारे कर्ण–कुहारों से बहुत दूर थी। हमारे छोटे पैरों को जो क्रीड़ा हमें आहलाद देती थी – वह अनुभूति का विषय थी, अभिव्यक्ति का नहीं। पैड़–पौधे, फूल, पक्षियों का कलरव सब हमारे साथी थे। थकान हमारे लिए महान थी क्योंकि तुम्हारे जैसा मनोनुकूल साथी थे। हालॉकि यह सारा प्रेम–व्यापार जो खाली हाथों से हुआ, पर मन आज भी भरा है। तुम्हारी अंगुलियॉ जब मेरी अंगुलियों में बंध जाती थीं तो ऐसा लगता था कि अब ये कभी छूटेंगी नहीं..... कहते कहते आकाश गंगा की भोली आँखें नम हो गई और सिर झुकाये ठगा सा रह गया।

तो पथिक ये है छोटी सी नदी हमारे बचपन की। जिसकी धारा में हमारा भोला बचपन, लहरों में कल–कल करता हुआ न मालूम कितनी दूर निकल गया होगा? शायद उतनी ही दूर जितनी दूर हमारा बचपन हमीं से दूर हो गया है, यह जानते हुये भी कि यह बचपन, इन्हीं शरीरों का था, इन्हीं शरीरों के हाव–भावों का था। परिवर्तन हालांकि शाश्वत है, फिर भी स्थान विशेष पाकर उदीप्त हुआ अतीत, सतीत हो ही जाता है–बस यही मानव–जीवन की व्यथामयी पवित्र कथा–जिससे प्रेमी और प्रेमिका दूर जा नहीं सकते। मैंने आकाश गंगा के हाथ को झट से थाम लिया, बूढ़ी आंखों से बचपनी आंसू टपकने लगे, मैंने धीरे से कहा, बस, आकाश गंगा बस..... यात्रा को आगे बढ़ाओ। आज की रात अंधकार की रात नहीं, अमृत की रात है, अपने भीतर रखे हुये अमृत–कलश को यूं ही छलकाती रहो, मैं अमर होता चलूँ..... और इस तरह हम इस बचपन की नदी

को छोड़, आगे के पथ के पथिक बन गये।

राह चलते–चलते मैं अनायास पूछ बैठा, आकाश! सुख की पुनरावृति में इतना सुख है, तो मूल सुख कैसा रहा होगा? आकाश गंगा खिल खिलाकर हंस पड़ी और एक लम्बा निःश्वास छोड़ते हुये बोली, हे मेरी आकांक्षी! बस यही जीवन की बिडम्बना है। जिसे तुम सुख समझ रहे हो और देख रहे हो, यह धुंआ है, बादल नहीं। बादल में पानी है, बिजली है, उमड़–घुमड़ है और स्वयं को मिटाकर प्यासी धरती पर शिवत्व के लिए बरस जाना ही उसके अस्तित्व की सार्थकता है। मेरा चिन्तन गहरा हुआ और देखते ही देखते सामने एक विशालकाय नदी आ गई। नदी पर भव्य सेतु भी बंधा था, जैसे कि वह हमारा चिर प्रतीक्षित भार ढोने की प्रतीक्षा कर रहा। हम दोनों ने चैन की सांस ली और मैं शिश्यवत् आकाश गांगा के उन ओठों की ओर देखने लगा, जिनसे कि मेरे सूखे जीवन का सात्विक सिंचन हो रहा था।

आकाश गंगा ने बोलना प्रारम्भ किया। पथिक! स्मरण करो! जब हम तुम युवक थे, तब यही नदी हम दोनों की वह क्रीड़ा केन्द्र थी–जहॉ प्रतिकूलतायें भी हमारे अनुकूल थी। नदी के किनारों के ये ऊँचे–ऊँचे पहाड़ ..... जैसे हमारी उमंगों के पहाड़ थे। नदी के किनारे खड़े हुए। आम्र–वृक्षों के फल सदैव गदराये लगते थे। कोकिल की कूंक, पंचम वाण बनकर हमारे सीने को चोटिल करते हुये भी घावों को फूलों से भर देती थी। हृदय में उठने वाले ज्वार–भाटों से यह विशालकाय नदी छोटी लगने लगती थी। तृम्हारी मनोगत चेष्टाायें मैं समझ जाती थी। पर तुम भी विवश थे और मैं भी। शारीरिक चेष्टाओं का अनुवाद बस आंखे कर लेती थीं। यौवन कालीन विवशताओं का रस संचित करने की कला का नाम ही तो प्रेम है। पथिक! ठोस स्थिति में यदि सामाजिक भय है, तो वह भी नन्दनीय है और यदि यह कायरता है तो वह भी कांतिवान है। मेरी जिज्ञासा से न रहा गया और मैंने तत्क्षण प्रश्न कर डाला, आकाश! काश, हम दोनों की उमंगे किसी तरंग के झोंके में टकराकर शिथिल हो गई होती तो! आकाश ने बड़े आत्म विश्वास के साथ उत्तर किया तो, शहद से माधुर्य निचुड़ गया होता और फूलों के पराग की अस्मिता सदैव के लिए सूख गई होती। यह सुनकर सचमुच मेरे हृदय की जागृत धारा नदी की धारा के साथ हो चली। हम दोनों उठकर खड़े हो गये और इस नदी का सेतु इस तरह पार कर गये, जैसे आंधी और तूफान के आने पर भी फूल, फूल रहता है और कली, कली रहती है।

रात का चौथा प्रहर लग चुका था। रात की मादकता ढलान की ओर थी। निकलना और ढलना सृष्टि का शाश्वत नियम है। पर, प्रेम की नियमावली में सारी सृष्टि उस समय डूबी हुई लगती है जब दो कांटो के मध्य खिला हुआ प्रेम का गुलाब, कांटों को भी अपनी कोमलता प्रदान कर देता है और फिर कांटों की चुभन में वह सुरमित सामर्थ्य आ जाती है कि इस चुभन की वेदना में स्वयं प्रेम एक मीठी हिचकी ले उठता है। यही द्वैत का अद्वैत आनंद है। हृदय के प्यासे ओढ़ी थे हम दोनों, ये प्रेम के बतासे फोडते हुये आगे बढ़े जा रहे थे, तभी आकाश गंगा ने बड़े सावधान होकर कहा कि आकांक्षी! ये सामने आने वाली तीसरी नदी ही हमारी अभीष्ट यात्रा है। हमें संतोष मिला और हम नदी के किनारे बैठ गये। नदी का फैलाव धाराओं में बंटकर भी आगे अखण्ड सा दिखाई दे रहे थे, पर असमर्थ थे। न मालूम कितना–कूड़ा करकट नदी की धारा में बहता चला जा रहा था। सारा वातावरण स्वब्ध था। हम दोनों की शारीरिक ऊर्जा धीरे–धीरे मानसिक ऊर्जा में संचित हो रही थी। दर्शन शास्त्र कभी पुस्तकों में पढ़ा था, पर आज और इस समय ऐसा लग रहा था, मानों मेरी आकाश गंगा मुझे वास्तविक दर्शन शास्त्र का व्यावहारिक मूल पाठ पढ़ाने के लिए पूछा, मुझे यहां लायी है। मैंने आकाश गंगा की ओर आकाश! क्या इस नदी के बाद भी कुछ देखना है? नहीं,, बस! यहीं जो कुछ देखना है देख लो, जो सोचना है, सोच लो। यही नदी वृद्धावस्था की महत्वपूर्ण नदी है। प्रायश्चिपत की नदी। त्रुटियों को स्वीकारने

की नदी। कूड़ा–कचरा बहाने की नदी। श्रृंगार के संयोग और वियोग को शांत रस के मंत्रों से स्वाहा करने की नदी, अतीत को भुला देने की नदी, परिधि से हटकर केन्द्र को पहचाने की नदी, विश्व रूपी बाग के मोहक आकर्शण से विलग होकर विश्व–माली की एक मात्र कृपा पाने की नदी और हे मेरे आकांक्षी पथिक! इस नदी में बस एक ही भंवर उठता है ..... कहते–कहते आकाश गंगा जैसे स्वयं उस क्षण, अतीत की न मालूम किन मधुर स्मृतियों से चोट खा गयी; किन्तु फिर भी उसने सत्य का अनुसरण न छोड़ा ।

मैं भीतर ही भीतर तमाम शंकाओं से भयभीत हो रहा था। मैंने पूछा, आकाश! अब लौटकर कब चलागी ? आकाश ने अपनी दोनों परिचित सी बाहें मेरे गले में डाल दीं और बोली, मेरे परम प्रियतम! यहाँ से आज तक न कोई लौटा है और न लौटेगा। ये तीनों नदी जो तुमने देखीं–बचपन की, युवावस्था की और वृद्धावस्था की, ये तीनों, एक ही धारा के तीन प्रकार हैं। इस त्रिवेणी को एक धारा बनकर समुद्र को, अपने अर्जित संस्कारों का पूर्ण परिचय देना है। परिणाम में आशीर्वाद मिले या अभिशाप, इसके निर्णायक हमारे संस्कार ही होंगे। पर मुझे विश्वास है कि तुम्हें सागर का आशीर्वाद ही मिलेगा क्योंकि मुझ जैसी प्रेयसी का प्रेम तुम्हारे साथ है जो तुम्हारे चरित्र को आद्योपान्त प्रमाणित करेगा।

मेरे पैरों के नीचे से जमीन खिसक रही थी, अतीत की मधुभरी एक–एक याद जैसे रोम–रोम में सिसक रही थी। मैंने भी आकाश गंगा को अपनी बाहों में जकड़ लिया और असहाय सा, आँसू टपकाते हुये बोला, क्या आकाश गंगा! मेरा और तुम्हारा साथ यहीं तक था। मैं जीवन भर अपनी अन्तर्कथा तुम्हें बता न सका, क्या यही मेरा दोष है? तुम्हारे लिए कितने प्यारे–प्यारे सम्बोधन माँ सरस्वती से मांग कर लाया, कितने सुन्दर–सुन्दर शब्दों से तुम्हारे भावों को गीतों में उतारा, क्या यह सब धोखा था ?

जब योग, वियोग में बदल जाता है तो यादों की गठरी स्वयं बिखर जाती है। बाहों का आलिंगन जब शाश्वत आलिंगन बन जाता है– तो बंधन स्वयं टूट जाते हैं। मैंने आकाश गंगा की ओर भिक्षुक की दृश्टि से देखा, और एक शिलाखण्ड पर दोनों बैठ गये।

मैं कुछ कहना ही चाहता था कि मैं चीख पड़ा। देखो, आकाश देखो, वह काला और भारी अजगर हम दोनों की ओर आ रहा है–बचो, चलो, भागो। जैसे ही हम दोनों भागने को उठे, त्यों ही वह अजगर धड़ाम से नदी में गिर पड़ा। एक भारी सा भंवर उठा। धड़ाम की आवाज सुनकर मेरी निद्रा भंग हो गयी। प्यारी भंग का नशा मेरे जागरण में मिलकर जाने कहाँ खो गया ?

मैंने अपने समर्पण आश्रम के कपाट खोले। पूरा विश्वास हो चुका था कि मैं स्वयं देख रहा था, फिर भी मैंने बाहर निकलकर आकाश गंगा को ढूँढ़ने की चेष्टा की। पर आकाश गंगा नहीं मिली। निराश होकर आकाश की ओर आंखें उठायीं तो तारों के मध्य आकाश गंगा के अनंत तारे खण्ड–खण्ड होकर भी अखण्ड साधना के साथ मानो मुझसे कह रहे थे कि हे मेरे आकांक्षी पथिक मैं दूर कहाँ मैं सदैव तुम्हारे भीतर हूँ क्योंकि मेरे अनंत तारों में से तुम भी तो एक हो।

मैंने भोले शंकर को प्रमाण किया और प्रार्थना की कि हे आशुतोष भण्डारी! अग्रिम वर्ष आने वाली शिव तेरस को एक बार पुनः भंग की दिव्य तरंग में मेरी आकाश गंगा को पुनः मिला देना, ताकि यात्रा के अधूरे पड़ाव भी पूरे हो सकें।

बहादुर सिंह निर्दोषी
फिरोजाबाद (उ.प्र.)

वृद्ध जीवन का आख्यान : समय सरगम

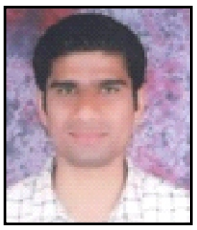

कृष्णा सोबती पचास के दशक की लेखिका हैं जिनका चना कर्म आज तक निरंतर कार्यरत है। कृष्णा सोबती ने अपना लेखन बड़े ही व्यवस्थित ढंग से किया है। उनका खुद का कहना है कि कम लिखना वे अपनी विशेषता मानती हैं। वे बहुत ही सोच–विचार करके लिखती हैं। उनके कहानी या उपन्यास को पढ़ते समय हम उनके साथ बंध जाते हैं। उनकी प्रत्येक पंक्ति पढ़ते समय हम उसमें से किसी भी पंक्ति को नज़र अंदाज नहीं कर सकते क्योंकि कई बार वो पंक्ति हमें पूरे उपन्यास या पात्र का रहस्य बता देती है या कुछ ऐसी बात कह देती है जो दूसरी जगह कहीं नहीं मिलती है। उनके उपन्यासों में स्त्री चेतना का मुखर रूप मिलता है। कृष्णा सोबती न पुरूषों का विरोध करती हैं, न परिवार का और न ही विवाह संस्था का। वे इन सबके बीच में ही स्त्री की 'निजता' को प्रतिष्ठित करना चाहती हैं।

कृष्णा साबती के उपन्यास उनके व्यक्तित्व को उद्‌घटित करते हैं। उमर के हर मोड़ पर उन्होंने नए प्रश्नों को सुलझााने हेतु रचनाएँ लिखी हैं। उन्होंने यह स्पष्ट बताया है कि स्त्रियों का जीवन वही नहीं जो मनुवादी व्यवस्था ने निर्मित किया है। समय, परिवेश और परिस्थितियों के अनुसार वे अपना जीवन स्वंय आगे ले जाएँगी। उन्होंने अपनी रचनाओं में यह दर्शाया है कि औरत अपनी जिंदगी रोकर ही क्यों जिए? हँसकर क्यों नहीं ? हॅसकर जीने की ही एक रचनात्मक कोशिश है।

'समय सरगम' कृष्णा साबती के अभी तक लिखे गए उपन्यासों में अन्तिम उपन्यास है जो सन् 2000 ई. में प्रकाशित हुआ। 1990 ई. के बाद से ही भूमण्डलीकरण ने अपने पॉव भारत में पसारने शुरू कर दिए थे। धीरे–धीरे उसने अपना व्यापक असर दिखाना प्रारंभ कर दिया। 21वीं शताब्दी तक आते–आते उसका असर भारतीय परिवारों पर भी दिखाना शुरू हो गया। कई मानवीय मूल्य बदल गए। नए मूल्यों का निर्माण हुआ। स्त्रियों को शिक्षा के कारण नए अधिकार मिले और वह अपने हक को पहचानने लगीं। कृष्ण जी ने इससे यह दर्शाने की कोशिश की है कि 21वीं सदी स्त्रियों के लिए बीसवीं सदी से अधिक उदार और खुली हुई होगी। इस सदी में स्त्रियों को बराबरी के अधिकार हों, उन्हें हीनता की दृष्टि से न देखा जाए और वह हमारे समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई बने। 'समय सरगम' की अगर हम बात करें तो इसे इसी संदर्भ में देखना चाहिए।

कृष्णा जी ने इस उपन्यास में आरण्या और ईशान के माध्यम से दो ऐसे चरित्रों की कहानी कही है जो विपरीत मानसिकता के होते हुए भी एक–दूसरे के पूरक बनते हैं। वृद्धावस्था की चरम अवस्था में अकेले होते हुए भी दोनों एक–दूसरे का अकेलापन बांट लेते हैं। आरण्या जहॉ जिन्दादिल है, वहीं ईशान हर कदम सावधानी से चलता है। इसमें दो और स्त्री चरित्रों दमयंती और कामिनी की रचना लेखिका ने की है। दोनों परिवार में रहकर भी एकदम अकेली हो जाती हैं या यूँ कहें की अकेला कर दिया जाता है। उन दोनों की अपनी समस्याएँ हैं जिनका समाधान उनके पास नहीं है। एक तरफ आरण्या अकेले रहते हुए अपने निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हैं वहीं वे दोनों चाहकर भी ऐसा नहीं कर पाती हैं। दमंयती अपने बच्चों पर निर्भर है और कामिनी अपने भाई–भाभियों पर। दोनों अलग–अलग तरह से उन्हें परेशान करते हैं। यह पूरा उपन्यास जीवन को जीने, पहचानने और स्वीकारने की कहानी है।

वृद्धावस्था में व्यक्ति को प्रत्येक कदम ध्यान से चलना पड़ता है खासकर तब ज बवह अकेला हो क्योंकि अपना ध्यान उसे स्वयं रखना पड़ता हैं। ईशान आरण्या को पार्क में गीली घास पर चलने से रोकते हैं और कहते हैं कि यह तुम्हारे लिए खतरनाक हो सकती है।– ''मतलब यह है कि गीली घास पर चलना मुझ जैसे पुराने नागरिक के लिए ठीक नहीं। हॉ आरण्या, पुराने नागरिकों को इस तरह की लापरवाहियॉ बहुत महॅगी पड़ सकती हैं।''[1] यानि इससे वह बीमार पड़ सकती हैं और फिर डॉक्टर आदि के पास भी जाना पड़ सकता है, तो अकेले होने के कारण खुद का ध्यान स्वयं रखना पड़ सकता है। जो चीज़ हम जवानी में कर सकते हैं वो

वृद्धावस्था में नहीं कर सकते। आख्या अपना जीवन खुले मन से जीती है मगर कहीं न कहीं उसके मन में भी यह भाव आ जाता है कि वो अकेली है–''आख्या ने उत्साह से छाता और बरसाती निकाले और बरखा में घूमने निकल गई। अपार्टमेन्ट्स के सामने बिछी थी नईं सड़कें। इन पर तो अपने पुराने दिनों को खोजा भी नहीं जा सकता। जाने कितने पीछे छूट गए। छप्प–पानी का बड़ा–सा थक्का पैरों तले! बचो । बचाओ अपने को कीचड़ में जूते सन जाएँगे। आरण्या फॉदकर एक ओर हो गई।''2 यहॉ वह चाहकर भी पहले जैसा जीवन व्यतीत नहीं कर सकती है। वहीं ईशान अपनी स्मृतियों में खो जाता है। उसे अपने परिवार की जब याद आती है तो वह उनकी यादों में डूब जाता है और उनकी चीजों से अपने आपको सांत्वना देते रहते हैं–''आज न जाने क्यों पुराने बक्से खोलने की सोच ली। बेटे का पुराना सामान कब से बंद पड़ा था। सुबह उठते ही लगा कि जैसे इसे आज खोलना ही है। देखिए यह पत्रिकाओं की कटिंग, स्टाम्प–एलबम, डायरी।''3 उन सारी चीजों को बड़े मनोयोग से उसने संजो कर रखा था और अपना अकेलापन बांटने के लिए कभी–कभी उनको देख लेता था। अपने बेटे की याद में वह उसकी उपस्थिति को इनमें महसूसता रहता था। वो तो उसे छोड़ कर विदेश चला गया पर पिता का स्नेह उसके प्रति हमेशा बना रहा।

उच्च वर्ग में फ्लैट में रहने की परंपरा पनपती जा रही है। वहॉ किसी को किसी से कोई मतलब नहीं रहता। ईशान और आरण्या का भी अपना फ्लैट है जहॉ वह दोनों अकेले रहते हैं। दो वृद्ध एक–दूसरे का सहारा पाकर अपने जीवन को खुशहाल बनाने का प्रयत्न करते हैं। परिवार रहित होने के कारण उन पर कोई बंधन नहीं। आरण्या उनसे प्रभावित है और कहती है– ''सचमुच में आधुनिक है। नहीं तो प्राचीन गृहस्थों की तरह–सब कुछ दूसरे करें। आपके एक काम में दस हाथ जुटे हो तो आपका रूतबा सुरक्षित है।''[4] समय के साथ खुद को ढ़ाल लेते हैं वे दोनों जोकि उनकी नियति भी है। दोनों एक–दूसरे से अलग–अलग हैं मगर फिर भी दोनों अपना साथ बनाए हुए हैं। उन दोनों को साथ रहना पसंद है क्योंकि दोनों अकेलेपन के शिकार हैं। ईशान आरण्या से कहता है–''मेरे आराम का समय आपके काम का है और मेरे काम का आपके आराम का। हम दोनों को असुविधा होगी। स्वीकृति और अस्वीकृति के बीच खड़ी अनजान सूक्ष्म से भयभीत दोनों एक–दूसरे को जॉचते रहे।''[5] दोनें के समय प्रायः भिन्न–भिन्न थे फिर भी आपसी जरूरत को दोनों महसूस करते हैं। दोनों को अपना खाली समय बातचीत करने का सहारा भी मिलता है। इसलिए विपरित होते हुए भी दोनों एक–दूसरे का साथ निभाते जाते हैं।

उत्तर–आधुनिक को भी लेखिका ने दमयंती और कामिनी के माध्यम से इस उपन्यास में दिखाया है कि। पारिवारिक विघटन तो हमारे सामज की एक विकट समस्या पहले से ही थी, पर वर्तमान में भूमण्डलीयकरण और बाज़ारीकरण से मानवीय मूल्यों का जो ह्यास हुआ है उसका सीधा प्रभाव हमारे परिवारों पर पड़ा है। परिवार में अवसरवादिता हावी हो गई है। बेटा अपने मॉ–बाप को रखना नहीं चाहता, भाई–बहन की सम्पत्ति पर नज़रें गढ़ाए रहता है। दमयंती घर का सारा खर्च चलाती है फिर भी अपने ही घर में वह उपेक्षित है। जब आरण्या दमयंती को कहती है कि आपके साथ तो आपका पूरा परिवार है आप अकेली तो हैं नहीं तो वह फट पड़ती है – ''मैं तुम्हारी तरह अकेली होती तो क्यों परेशान होती। बच्चे साथ रह रहे हैं। मेरे घर में मेरा–किचन चल रहा है। खर्चा मैं कर रही हूॅ और मैं अपने कमरे में अकेली पड़ी रहती हूॅ। बिना मेरी इजाज़त मेरा सामान इधर से उधर करते रहते हैं। आरण्या से बहुत दुःखी हूॅ। पीछे आश्रम गई तो माधो को धमकाते रहे। बताओ, मम्मा लॉकर की चाबी कहा रखती है।''[6] इस प्रकार दमयंती अपने ही घर में मेहमान बनकर रह जाती है। उसकी चिकित्सा सम्बन्धी भी किसी को कोई लेना–देना नहीं है। बेटे ऐसे हुक्म चलाते हैं जैसे वह कोई नौकर हो। अपने ही घर में परायेपन का एहसास उसको हर पल बना रहता है। पति के चले जाने के बाद उसके जीवन को ढ़ोने का इरादा उसके बेटों का नहीं था और उनके इसी इरादे की बलि एक दिन वो चढ़ जाती है जब ईशान को माधो का फोन आता है कि मेमसाहब नहीं रहीं।

इसका दूसरा उदाहरण हमें कामिनी के रूप में मिलता है जो अपने घर पर अपनी नौकरानी खूकू के साथ

अकेली रहती है जहॉ अकेलेपन का डर सदैव उस पर बना रहता है। उसके घर को हथियाने में उसके अपने भाई ही हर–पल नज़रें गढ़ाए रहते हैं। कामिनी ईशान को बताती है कि – ''मुझे दलाल बता गया है कि भाई ने मेरे घर का सौदा कर लिया है। बयाना ले चुका है। खूकू ने मुझे नहीं बताया पर बिल्डर दो बार घर को आगे–पीछे और अंदर से देख गया है। मैं तब सोई पड़ी थी।''[7] उसकी अलमारी में उसके घर के असली कागज़ात की जगह फोटोस्टेट रख दिए जाते हैं। उसके सगे भाई उसका घर बेच देते हैं। यहॉ तक की उसकी नौकरानी खूकू भी अपने लिए एक कमरे की सिफारिश करने को ईशान को कहती है। अंत में उसके भाई उसे नर्सिंग होम में शिफ्ट कर देते हैं। इस प्रकार अपने भाईयों द्वारा ही वह ठगी जाती है। जहॉ भाई अपनी बहन की रक्षा की कसमें खाते हैं कामिनी के भाई उसी को लूट कर चले जाते हैं। इस घटना से आरण्या अन्दर तक व्यथित हो जाती है और अपने को संयम करती हुई कहती है – ''भूल जाओ उसकी बेबसी को, उसे मदद की जरूरत है। पर क्या सचमुच कोई एक–दूसरे के लिए कुछ कर सकता है! ओल्ड–ऐज होम। वही एक इलाज। देख–रेख करनेवाले कहॉ हैं। कहॉ हैं पुराने परिवार! छोटी–बड़ी तल्खियों से तो वही अच्छे थे! वही।''[8] पहरवार में रहकर बुजुर्गों की स्थिति अत्यंत शोचनीय बनती जा रही है। उनके लिए आखिरी पड़ाव क्या ओल्ड–ऐज होम बच गए हैं ?

अकेले बुजुर्गों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है। वह अपना समय व्यतीत करने के लिए कभी गरीब बच्चों की मदद कर देते हैं, कभी उनके लिए किताबों की व्यवस्था कर देते हैं। कभी अपने बेटे–बेटियों की चर्चा करते हैं जो उन्हें छोड़कर अमेरीका, इग्लैंड, आस्ट्रेलिया आदि देशों में चले गए हैं–''अकेलों के समुदाय की गिनती अब पहले से कहीं ज्यादा![3] उनकी अपनी ही कठिनाइयॉ और अपनी ही सहूलियतें। परिवार से अलग–थलग अपनी आर्थिक क्षमताओं को संयम से इस्तेमाल करते हुए यह 'अकेले' भी अपने ही ढंग से अपने को सॅवारते चले जाते हैं। बूंद–बूंद अर्जित अपनी शक्तियॉ रोग, बीमारी और संकट के लिए सॅभालकर अपने में घिरे रहते हैं। समय–समय पर बच्चे–बूढ़ों के संस्थानों की मदद।''9 इस प्रकार वह अपने आप को किसी न किसी कार्य में उलझाए रखते हैं ताकि अकेलापन उन पर हावी न हो।

ईशान और आरण्या अकेले रहते–रहते अन्त में एक–दूसरे का सहारा बनते हैं और दोनों एक साथ सर्वसम्मति से रहने लगते हैं। ईशान आरण्या को कहता है। – ''आरण्या, तुम्हें जान लेने पर यह तो लगता है कि जीना बैंक का अकाउंट नंबर नहीं, जिसका कुल जोड़ कुछ आकड़ों में हो। मैं अब किसी असमंजस में नहीं हूॅ। क्यो न अपने जीने को सहज–सरल कर लें। हम दोनों में से किसी को दिक्कत न होगी।''[10] इस तरह वह दोनों अपने जीवन को नए सिरे से शुरू करते हुए एक साथ अपनी बची हुई जीवन यात्रा को आगे ले जाते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कृष्णा जी ने इस उपन्यास में उत्तर–आधुनिकता के दुष्परिणाम दिखाए हैं। यह वर्तमान समय में हमारे उच्च वर्ग का वास्तविक सत्य है। आज बुजुर्गों की स्थिति परिवार में खत्म होती जा रही है, उन्हें अपने ही परिवार के सदस्य सबसे बड़ा कॉटा समझने लगे हैं। अगर किसी को उनकी जरूरत भी है तो वह केवल एक नौकर की तरह, क्योंकि पति–पत्नी दोनों के व्यस्त होने के कारण बच्चों की देख–रेख के लिए ही वे उन्हें अपने साथ विदेश ले जाते हैं क्योंकि विदेशों में नौकर बड़ी मुश्किल से मिलते हैं। हमारे सामज की यह विडम्बना ही है कि जहॉ पहले बुजुर्गों को परिवार में एक उच्चस्थ पद प्राप्त था वही वृद्धा आज अपने आप को उस परिवार में स्थापित ही नहीं कर पा रहे हैं। वहीं दूसरी तरफ लेखिका ने ईशान और आरण्या के माध्यम से यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि अकेले रहकर भी परिवार से अच्छा जीवन जिया जा सकता है। एक दृढ़ इच्छा शक्ति से हम अपने जीवन को सुखी बना सकते हैं क्योंकि समय की सरगम तो अपनी गति से निरंतर प्रवाहमान होती रहती है। उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलते रहना ही जिंदगी है।

सुनील कुमार सलैडा,
जम्मू

विश्व शान्ति में शिक्षक और प्रशिक्षु शिक्षक का योगदान

आधुनिक युग में शिक्षा अपनी महती प्रासंगिताएं लिए हुये है। आज शिक्षा को समयानुसार नवीन परिभाशाओं में ढ़ाला जा रहा है तथा इसके क्षेत्राधिकारों में भी नवीनता लाई जा रही है। आज शिक्षा को इसके प्राचीन प्रतिमानों में ही नहीं आधुनिकता के नवीन प्रतिमानों में स्थापित करने क प्रयास किया जा रहा है। शिाक्षा का क्षेत्र आज व्यक्ति के एक ही पक्ष पर नहीं वरन् बहुदा पक्षों पर अवलम्बित दिखाई देता है।

आज शिक्षा सर्वांगीण विकास व उन्नति का पर्याय बनती जा रही है। शिक्षा शारीरिक विकास, मानसिक विकास, आध्यात्मिक विकास, चारत्रिक विकास में ही सक्षम नहीं वरन् शिक्षा समात, राश्ट्र व सम्पूर्ण विश्व को भी एक सूत्र में बॉधने में समर्थ है। परन्तु यह समर्थता तभी क्रियान्वित में रूपान्तरित होगी जब शिक्षा को विश्व शान्ति हेतु एक नवीन दिशानुसर व नवीन दृष्टिकोण प्रदान कर उसके उद्देश्य मानव समुदाय में प्रविश्ट कराये जायेंगे।

शिक्षा द्वारा विश्व शान्ति का प्रयास कतिपय पूर्व विद्वानों व विचारकों ने प्रस्तुत किए है, परन्तु आज इस अवधारण की पुश्टिकरण हेतु एक समग्र दृश्टिकोण का होना आवश्यक है तभी शिक्षा विश्व शान्ति में पूर्वरूपेण कार्यान्वित कर पायेगी।

शिक्षा में शिक्षक व प्रशिक्षक दोनों अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते है। इन दोनों ही पक्षों पर आज तक कई विचारकों, दार्शनिकों व शिक्षाशास्त्रियों ने अपने मत प्रस्तुत किये हैं परन्तु क्या एक शिक्षक शिक्षा द्वारा विश्व शान्ति में अपना योगदान दे पायेगा ?

- क्या एक शिक्षक बालकों का विश्व शानित के घटकों से अनुभव कराने वाली चेतना उनमें प्रविश्ट करा पायेगा?
- क्या सिर्फ शिक्षक का एक शिक्षक ही बने रहकर इस शॉन्ति के महायज्ञ की सम्पन्नता निर्धारित कर पायेगा?

आज शिक्षा में इन प्रश्नों के उत्तर के प्रति इतनी असम्भावनाएं इसलिए हैं कि शिक्षक केवल शिक्षक ही बनकर रह गया है, अनेक वर्शों में कितने ही शिक्षण कौशल, शिक्षण सिद्धान्त प्रतिपादित हुए पर कभी भी एक शिक्षक की अवधारणाओं को स्पश्ट नही कर सके कि शिक्षक को शिक्षक कम और गुरू ज्यादा होना चाहिए।

शिक्षक जो कि केवल विशयों को सीखने तक ही अपने को सीमित रखता है, पर एक गुरू अपना क्षेत्र विस्तृत रखता है। उसका क्षेत्र वहां तक विस्तार लिये होता है, जहां तक मानव समुदाय के आदर्श व सफल जीवन के पक्ष होते हैं। गुरू, बालक को न केवल विशयान्तर्गत बल्कि आत्मिक व सामाजिक पराकाश्ठाओं की ओर भी अग्रसर करता है और उसे विश्व शान्ति का दूत बनाता है। इस तरह बालक को सामान्य स्थिति से विश्व शान्ति का दूत बनाने तक की निर्माण यात्रा शिक्षा द्वारा ही निश्पादित की जाती है।

शिक्षा के अन्तर्गत विश्व शान्ति के प्रयास में निम्न पक्ष विशेष रूप से विचरणीय हैः–

➢ ऐसे संक्रमण और तीव्र परिवर्तन के दौर में असहिष्णुता नस्लीय, नृजातीय विद्वेश सभी प्रकार का

आतंकवाद, विभेद, युद्ध और हिंसा का बोलबाला है एवं अर्न्तराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर गरीबों और अमीरों के बीच की असमानताएं बढ़ती जा रही है। कार्यवाही की रणनीतियों का उद्देश्य मूल स्वतंत्रताओं, शक्ति, मानवाधिकारों और लोकतंत्र को सुनिश्चित करना और साथ ही स्थाई एवं न्याय सम्मत आर्थिक तथा सामाजिक विकास को प्रोत्साहन देना चाहिए जिनमें सभी को शान्ति की संस्कृति के निर्माण में एक आवश्यक भूमिका निभानी है। इसका तकाजा यह है कि शैक्षिक कार्य की पारम्परिक शैलियों का रूपान्तरण किया जाए।

- शिक्षा में सन्तुलित तथा दीर्घकालीन विकास के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय और अर्न्तराष्ट्रीय स्तरों पर एकजुटता और समानता की भावनाओं का विकास करना चाहिए।
- शिक्षा से विवादों में अहिंसक निपटारे की योग्यता का विकास करना चाहिए इसलिए उसे विद्यार्थियों के मानस में आन्तरिक शान्ति का भी विकास करना चाहिए ताकि उनमें सहिष्णुता, दया और दूसरों के साथ भागीदारी करने एवं दूसरों का ध्यान रखने की सद्वृत्तियों का सन्निवेश अधिक सुदृढ़ बुनियाद पर हो।
- शिक्षा द्वारा नागरिकों में अपने मार्ग का चयन, ज्ञान एवं विवेक युक्त रीति से करने की योग्यता विकसित करनी चाहिए, ताकि वे अपने निर्णयों तथा कार्यों का आधार न केवल वर्तमान परिस्थितियों के विश्लेशण को बनाएं, बल्कि इसमें वे अपनी कल्पना के भविष्य को भी ध्यान में रखें।
- शिक्षा के अर्न्तगत ही पूरे विश्व में किसी ऐसे एक पाठ्यक्रम का विकास करना जो कि पूरे विश्व की विभिन्नता को प्रत्यक्ष रख शान्ति का अध्याय पढाये।
- बालकों को विश्व शांन्ति में अवरोधों से परिचित करवाकर उनके निराकरण की एक विस्तृत योजना बनानी चाहिए तथा उसको एक अन्तर्राष्ट्रीय योजना व संगठन द्वारा कार्यान्वित करना चाहिए।
- शिक्षा द्वारा स्वतंत्रता की कद्र करने की योग्यता और उनकी चुनौतियों का सामना करने के कौशलों का विकास चाहिए।
- विभिन्न देशों के बीच सहयोग के लिये प्रस्ताव तैयार करना, अध्ययन के विषयों को परिभाषित करने, सभी स्तरों पर शिक्षा को नये अर्थ देने, पद्धतियों के विषय में पुनर्विचार करने, इस्तेमाल की जा रही अध्यापन सामग्री की समीक्षा करने, शोध को बढ़ावा देने, शिक्षक प्रशिक्षण का विकास करने और सक्रिय सहभागिता के जरिये समाज के लिए प्रणाली के द्वार को और अधिक प्रशस्त बनाने के लिये उद्विष्ट विभिन्न उपायों को एक संसलिष्ट समग्रता के अर्न्तगत लाने का भी प्रयास किया जाना चाहिए।

अतः कतिपय इन शिक्षा के आधारों को व्यवहारिक कर हम विश्व शान्ति का यह पावन संदेश विश्व में प्रसारित कर सकते है, ताकि विश्व में शान्ति का जो आज हमारा प्रमुख लक्ष्य है, वह सम्पन्न हो सके। ध्यान यह रखना होगा कि यह पक्ष पूर्णता के साथ कार्यान्वित हो सकें और इसके लिये आवश्यकता है कि हम सब उठें और शिक्षा का आधार लेकर शान्ति की पताका विश्व में फहरायें ताकि मानवतावाद अपने पूर्ण वेग के साथ शान्ति का मार्ग प्रशस्त कर सके।

डॉ. हरबिलास सिंह,
प्राचार्य, (पी.जी.),
महिला महाविद्यालय, एटा

गुमशुदा विज्ञापन

पिता की तरफ से.....

मेरा पुत्र छदम्मी लाल वल्द मौसमी लाल उपनाम नायक है, पिछले तीन महीनों से गायब है, जहां कहीं भी श्रोताओं का जमघट जुटता है, कम से कम बीस कविताएँ सुनाकर उठता है, उसको कविता सुनाने की बीमारी पुरानी है, बड़े–बड़े डॉक्टरों को हैरानी है, उसकी बीमारी में अब तक कई सौ रूपये फूंके, दो बार आगरा और बरेली भेज चुके हैं, राँची भेजने का खर्च कहाँ से लाएं, देश में पर्याप्त पागल खाने कहाँ है? पागलखाने कम हैं, पागल ज्यादा है, इसलिए लोग कविता करने पर आमदा है, जिन साहब को भी यह व्यक्ति, मिले सावधान रहे, भूल कर भी कविता सुनाने को न कहें पहले आपको किसी बीयर बार में ठण्डा पिलाएगा, फिर अपनी ढेर सारी कविता सुनाएगा, रिश्तेदारों से प्रार्थना है इसको कोई गिफ्ट न दे, इसकी दारू तो पी सकते हैं पर कविता सुनने की लिप्ट न दे, थोड़े लिखे को ही बहुत समझ ले आप। एक कवि का अभागा बाप !

भाई की तरफ से .....

प्रिय कवि भइया, जहाँ कहीं भी हो वहीं रहना, जो भी कष्ट पड़े अकेले सहना, तुम्हारे जाने से किसी को दुख होगा यह सब मन की भ्रांति है, जब से तुम गये हो घर में पूर्ण शांति है, तुम्हारी बीमार माता सुखी जीवन जी रही है, तुम्हारी पत्नी दोनों वक्त बॉर्नविटा पी रही है, तुम्हारे तीनों साले खेल रहे हैं, उधारवाले दुकानदार जरूर घबरा गये हैं, कई बार घर के चक्कर लगा गये हैं, इसलिए कवि भईया तुम जहाँ कहीं भी हो वहीं रहना, जो भी कष्ट पड़े अकेले सहना, तुम्हारे जाने से फालतू कवि प्रेमी अवश्य दुखी हो गए हैं, पर मुहल्ले के सभी लोग सुखी हो गए हैं!

नोटः– जो कोई भी इस गुमशुदा का पता हमें देगा, हमारे साथ दुश्मनी करेगा, जो भी इसे मनाकर घर लाएगा वो पुरस्कार नहीं दंड पाएगा!

पत्नी की ओर से .....

हे मेरे बारह बच्चों के बाप, तुम्हें लग जाए शीतला मैया का शाप, पता नहीं आदमी हो या कसाई, तुम्हें इस तरह जाते शर्म नहीं आई, जाना ही था तो आधा दर्जन अपने साथ ले जाते, आधे दर्जन मुझे दे जाते, पूरे पलातून को, एक ही बात कहकर डराती हूँ, नहीं मानोगे तो तुम्हारे बाप को वापस बुलवा दूंगी, उनकी ढेर सारी कविताएं सुनवा दूंगी, बच्चे सहम कर चुप होने लगते हैं, कुछ तो डर कर रोने लगते हैं, इसलिए तुम्हारी आँखों की शर्म पूरी तरह न बह गई हो, थोड़ी सी भी बाकी रह गई हो, तो कभी लौट कर मत आना, ज्यादा तुम्हें क्या समझाना, चाहे जहाँ नाचों, चाहे जहॉ गाते रहना, मानीऑर्डर हर महीने भिजवाते रहना,

तुम्हारी प्राणों की प्यासी,
श्रीमती सत्यानाशी!

फिजिक्स का चक्कर

अपनी आँखों से वो लाखों सवाल कर गई,
मिली फिजिक्स की क्लास में बुरा हाल कर गई,
नजरे मिलाने का असर इस कदर हो गया,
जैसे दिल का यूनिट और डाइमेंशन फेल हो गया।
मैं उसके चेहरे का दीदार इस तरह कर रहा था,
जैसे न्यूटन का फोर्स मुझपर काम कर रहा था,
दिल में मिलने की चाह थी और पक्का इरादा था,
पर उसके पारे का एफिशिंएण्ट ऑफ विस्कोसिटी का मान ज्यादा था।
लिखकर कागज पर इलू, 45^{0} के एंगल पर यूँ उछाल दिया,
रेंज मैक्सिमम होने के कारण कागज उसके आगे निकल गया,
मिल गया भाइयों को पेपर, वो डंडे बांटने लगे,
और इलेक्ट्रॉन की तरह मेरे चक्कर काटने लगे,
वहाँ की सिचुएशन काफ़ी लाइट हो गयी,
उसको देखकर मेरा पारा भी 104^{0} फॉरेनहाइट हो गया।
वेक्टर के कॉम्पोनेन्ट की तरह हड्डियाँ टूट गई,
जैसे एक इक्वेशन के दो भेरिएबल हो गये,
मोशन वन डाइमेंशन से श्री–डाइमेंशन हो गया,
अब मैंने अपने कान पकड़ लिए,
सोचा अब नहीं पढ़ेंगे फिज़िक्स बहुत हो लिए।

मनीष कुमार
वरि. तकनीकी सहायक
आइ.आइ.आइ.एम, जम्मू

हिन्दी पखवाडा

हिन्दी पखवाड़ा की मन लुभावनी आभा में आप और आप के संस्थान के हिन्दी–अनुभाग को प्रणाम करता हूँ। खास तौर पर डॉ. राम विश्वकर्मा साहब का जिनके नेतृत्व में हिन्दी का सवल संवर्धन जनमानस को प्राप्त हो रहा है। आपके प्रतिष्ठान द्वारा लोकार्पित ज्ञानवार्ता पत्रिका की विषय सामग्री एवं गद्य और काव्य की श्रृंखलाबद्ध प्रणेताओं की कृतियों ने मुझ जैसे हिन्दी सेवक को अभिभूत करने के साथ–साथ सद्प्रेरणा का संवल प्रदान कर रही है। किसी भी भाषा का जिम्मेदार साहित्य जो समाज की वषु प्रवृत्तियों पर सांघातिक चोट करता है और अपनी भाशा में छद्म वेषी पशु आचरणों के पीछे छिपे सामाजिक तथ्यों को उद्घाटित करता है, साहित्यिक हथकंडों वालों से जूझता है, माँ के फटे आंचल को सीता है, और लोगों को उन सरोकारों से परिचित कराता है कि माँ के आंसू कभी झूठ नहीं बोलते, उसी को साहित्य कहते हैं। लोहे का राख होना सर्व विदित है, लेकिन राख को इस्पात की शक्ल प्रदान करना साहित्य की बहुत बड़ी मिशाल है। आप का प्रतिष्ठान इन संदर्भों को अंगीकार करते हुये 'हिन्दी सेवा–भारत–सेवा' की मुहिम को उत्तरोत्तर विकासोन्मुख कर रहा है, इसके लिये आपके साथ जुड़े हिन्दी सेवारत संस्थानों एवं प्रतिष्ठानों को अपना साधुवाद संप्रेषित करते हुये मंगलकामना दे रहा हूँ।

कमलेश राजहंस
(राष्ट्रीय कवि)
सोनभद्र (उ.प्र.)

समीश

नगर राजभाशा कार्यान्वयन समिति, भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू के तत्वावधान में दो दिवसीय राजभाषा सम्मेलन/भाषा कौशल/कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम का शुभारम्भ आई.आई.आई.एम. जम्मू के सभागार में दिनांक 13–14 मार्च, 2013 को डॉ. राम विश्वकर्मा की अध्यक्षता में पूर्वाह्न 9.55 बजे दीप प्रज्ज्वलन के साथ हुआ। दीपमंत्र तथा सरस्वती वन्दना का प्रस्तुतीकरण दिल्ली से पधारे विद्वान कवि एवं लेखक श्रीकृष्ण निर्मल के मधुर कंठ से हुआ। अध्यक्ष महोदय द्वारा आमंत्रित विशिष्ट अतिथियों का पुष्पगुच्छ तथा शॉल द्वारा स्वागत किया गया। इसके पश्चात् संस्थान के वरिष्ठ अधिकारी एवं सचिव डॉ. अमर सिंह जी द्वारा अत्यनत सरस व प्रभावशाली शब्दों के द्वारा सभागार में उपस्थित अतिथियों/प्रतिभागियों का स्वागत किया गया। इसके बाद विशिष्ट अतिथियों ने सभागार का संक्षिप्त परिचय डॉ. अमर सिंह जी द्वारा किसा गया। इसके पश्चात उनके निर्देश पर विशिष्ट अतिथियों ने सभागार का सम्बोधित किया। उनके सम्बोधन के पश्चात अध्यक्ष महोदय द्वारा अत्यन्त विनम्र व सटीक शब्दों में अपने सारगर्भित उद्‌गार प्रस्तुत किये। अन्त में डॉ. आर.के.रैणा द्वारा धन्यवाद ज्ञापन किया गया।

अन्तर्बेला में जलपान के पश्चात भाषा कौशल प्रशिक्षण सत्र प्रारम्भ हुआ। इसके अन्तर्गत दिल्ली से पधारे डॉ. महेशचन्द्र गुप्त द्वारा राजभाषा नीति, राजभाषा प्रबन्धन और कर्मचारियों का दायित्व, व्यावहारिक ज्ञान एवं भाशा की तकनीकी पर विस्तृत प्रकाश डाला गया जिससे समस्त प्रतिभागी लाभान्वित हुए। इसके पश्चात् दिल्ली से आमंत्रित विद्वान श्री श्रीकृष्ण निर्मल जी ने अक्षर तथा शब्द की दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विवेचना की। उन्होंने अपने व्याख्यान को काव्यात्मक पुट देते हुए इतना सरस, मधुर तथा बोधगम्भ बना दिया कि उपस्थित प्रतिभागी मण्डल व्याख्यान को समाप्त करने की अनुमति ही नहीं दे रहा था।

अपराह्न भोजनोपरान्त श्री अमित कुमार जी द्वारा हिन्दी में यूनिकोड तथा फान्ट कैसे सक्रिय करें, इसके विशय में आनेवाली समस्याओं के समाधान पर प्रकाश डाला। इसके बाद डॉ. अमर सिंह, वरि. हिन्दी अधिकारी द्वारा प्रशासनिक एवं पारिभाशिक शब्दावली निर्माण पर प्रकाश डाला गया जा सभी प्रतिभागियों के लिए अत्यन्त बोधगम्य था ।

दिनांक 14.03.2013 को पूर्वाह्न 9.30 बजे डॉ. महेशचन्द्र गुप्त द्वारा हिन्दी की वर्तनी चब्दावली और भारतीय भाशाओं में साम्य पर विस्तृत विवेचन किया गया जिससे प्रतिभागीगण विशेश लाभान्वित हुए। इसके बाद 10.30 बजे कवि श्री श्रीकृष्ण निर्मल जी द्वारा 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' का दार्शनिक व वैज्ञानिक स्वरूप प्रस्तुत किया गया। इस सन्दर्भ में उन्होंने यह स्पष्ट किया कि मानव का जीवन तथा राष्ट्रीय चिन्तन सत्यं चिवं सुन्दरम् मंत्र होना चाहिए इसमें ही मानव एवं राष्ट्र का कल्याण निहित है।

इसके पश्चात् खुला सत्र प्रारंभ हुआ, जिसमें प्रतिभागियों के प्रश्नों व समस्याओं के समाधान किये गए। इसके पश्चात् अपराह्न भोजनोपरान्त श्री ओमप्रकाश जी द्वारा सतर्कता से सम्बन्धित लोगों का मार्गदर्शन किया गया। इसके बाद डॉ. अमर सिंह जी द्वारा कार्यालय कार्यसंस्कृति एवं संसदीय प्रश्नावली के सन्दर्भ में विस्तृत विवेचन किया गया। उक्त विशय से सम्बन्धित उन्होंने प्रतिभागियों की गम्भीर समस्याओं का समाधान किया। अन्त में सानन्द वातावरण में अध्यक्ष महोदय द्वारा समस्त प्रतिभागियों को पुरस्कार प्रदान किये गये तथा अन्त में उन्होंने सभी प्रतिभागियों व आयोजन में सहयोग करने वाले सभी महानुभावों का हार्दिक धन्यवाद किया।

शकुन्तला रानी
आईआईआईएम, जम्मू

ज्ञानवार्ता के तृतीय अंक की समीक्षा

प्रस्तुत पत्रिका ''ज्ञानवार्ता'' के सभी लेख व कविताएँ अत्यन्त उत्कृष्ट और चिन्तन की दृष्टि से गहन मूल्यपरक हैं। इस पत्रिका के अन्तर्गत लिखित निबन्ध हिन्दी–भाषा और साहित्य का स्वरूप विकास और वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हिन्दी की प्रासंगिकता जो प्रसार का उज्ज्वल स्वरूप प्रस्तुत करता है। संघ और राज्य द्वारा आयोजित, परीक्षाएँ अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं एवं निबंध हेतु इस पत्रिका की विषय सामग्री विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त लाभदायक व ज्ञान सवंर्द्धित करने वाली है, जो पाठक–गण को अधिगम करने की और अपनी राष्ट्र–भाषा हिन्दी को जानने, समझने के नवीन पहलुओं के लिए मार्ग प्रशस्त करने में उपादेय है।

पत्रिका का प्रथम लेख ''हिन्दी की विकास यात्रा और उसका वर्तमान स्वरूप'' श्रीमान् श्रीकृष्ण निर्मल जी द्वारा लिखित है। हिन्दी भाशा का संक्षिप्त इतिहास अपने सुव्यवस्था से प्रस्तुतत किया है, जैसे, क्रम से पाठक एक सीढ़ी से दूसरी सीढी चढ़ता हुआ अपने गंतव्य स्थल पर पहुँचता है और अपने प्रत्येक कदम को स्मरण करके मन में उसकी पुनरावृत्ति कर लेता है।

वस्तुतः श्रीकृश्ण निर्मल जी का लेख हिन्दी साहित्य के संक्षिपत इतिहास के प्रस्तुतीकरण का अत्यन्त श्लांघनीय प्रकटीकरण है।

''भाषा का भौतिक विज्ञान और शैली'' के लेखक डॉ. अमर सिंह जी ने अत्यनत प्रभावी ढंग से चॉमस्की के अभ्यान्तरवाद की व्याख्या की है। डॉ. सिंह की ये पंक्ति ''जन्म से ही एक भाषा लेकर सभी पैदा होते हैं पिल्ले और वत्स भी'' ये भाषा की सार्वभौतिकता को तय करती है। भाषा न्यूरॉलोजी के विद्युत–तरंगीय प्रयोगों की तरह मस्तिश्क के अवयवों को भी प्रकाशित करती है। लेखक ने भाषा–विज्ञान का सुव्यवस्थित, सहज रूप से अधिगम में सक्षम स्वरूप समझाया है, उन्होंने विद्वानों द्वारा उद्धत आठ साधन, शब्द ग्रहण हेतु वर्णित किए हैं–व्याकरण, उपमान, कोष, निवृत्ति, व्यवहार, आप्तवाक्य, वाक्यशेष और सान्निध्य। इसी से शब्द विज्ञान और प्राचीन अर्थज्ञान जुड़ा है, जिसके उत्सव को समझने में 'अयोद्धवाद' का जन्म हुआ।

डॉ. अमर सिंह जी ने भाषा–शैली को साधन और तत्व ग्रहण को साध्य माना है। अभिव्यक्ति प्रणाली का भी प्रमुख केन्द्र अर्थ विस्तार को माना है। 'विशिष्ट' और 'सामान्य' को सापेक्षिक प्रत्यय माना है।

डॉ. अमर सिंह का भाषा को भौतिक विज्ञान के साथ सम्बद्ध करके उसे वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत करना प्रतियोगी परीक्षार्थियों हेतु अत्यन्त लाभदायक है और भाषा–क्षेत्र और शैली की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण अत्यन्त श्लाघनीय है।

श्री राजेन्द्र प्रसाद वर्मा जी के लेख ''यूनीकोड का विस्तृत परिचय पढ़कर सिस्टम्स में यूनीकोड को सक्रिय करने की विस्तृत जानकारी मिलती है। श्री राकेश 'मन्जर' जी अपने लेख ''आधुनिक शिक्षा पद्धति में

सुधारों की आवश्यकता'' के माध्यम से सच्ची शिक्षा को व्यावहारिक, सामाजिक, आर्थिक अर्थात् सर्वांगीण विकास की पक्षधर मानते हैं।

श्री कैलाश मठपाल जी के लेख ''संपर्क भाषा हिन्दी का देश में स्थान'' में मैक्समूलर, फादर कामिल बुल्के, सर विलियम जॉर्ज आदि का हिन्दी के योगदान में बिन्दुवार प्रस्तुतीकरण सराहनीय है। डॉ. कान्तिरेखा जी की कृषिकरण जिरेनियम के संदर्भ में जानकारी उपादेय रही। शिवकरण दुबे वेदराही जी की महान् साहित्यकार प्रेमचन्द जी का विवरण और शकुन्तला रानी का लेख 'भाषायी सोच', डॉ. राकेश सक्सेना जी का ''हिन्दी की सार्थकता एवं संभावनाएँ'' सुभाषचन्द्र शर्मा जी का लेख ''चिंतन'' उमेश गुप्ता जी का ''भारतीय संस्कृति'' सभी लेखों ने ज्ञानवर्द्धन किया। डॉ. राजबहुदर सिंह निर्दोषी जी क`लेख ''कप्लवृक्ष'' ने पारस, कामधेनु और कल्पवृक्ष की प्रतीकात्मक व्याख्या ने शाश्वत जीवन मूल्यों का मान बढ़ा कर अभिव्यक्त किया है।

काव्य रचनाओं में त्रिलोक चन्द शर्मा की रचना ''यादें'' अनूपकुमार मौर्य की ''हिन्दी भाषा'', डॉ. मधु चतुर्वेदी की ''अर्थ–अनर्थ लगा मत लेना'' प्रभावशाली हैं। श्री सुरेन्द्र पाल सिंह जी की ''राजभाषा हिन्दी की स्थिति'' में हिन्दी भाषा, हॉकी व फुटबाल की व्यथा का सजीव वर्णन है। सुन्दर सहनी जी की ''उतनी दूर मत ब्याहना बाबा'' में एक भोली कन्या का अपने पिता से भावी वर और उसके शहर की चयन प्रक्रिया में कामना करके निवेदन करना मन को संवेदना से परिपूरित करता है। दिव्या सिंह का ''गीत'', डॉ. रचना तिवारी की कविता ''मैं नदी हूँ, नदी'' में एक नारी के विस्तार का बिम्ब नदी के माध्यम से प्रस्तुत करना श्लांघनीय है। शिवकरण दुबे वेदराही जी की कविता ''हिन्दी ही कंठहार बने'', और सुमन सोलंकी का गीत, और राजेन्द्र कुमार जी की ''भाषाओं में न्यारी'' उत्कष्ट कविताएँ हैं। वाहिद अली द्वारा ''मानक हिन्दी गज़ल'' में गज़ल व सांस्कृतिक समन्वय का मर्मस्पर्शी रूप प्रस्तुत हुआ है।

श्रीकृष्ण निर्मल जी की काव्य–रचना ''कन्या भ्रूण हत्या'' के माध्यम से वर्तमान परिप्रेक्ष्य की सबसे बड़ी समस्या पुत्री और पुत्र में होने वाले मतभेद और पक्षपात को अत्यन्त निपुणता से दर्शाता है। ''कन्या भ्रूण हत्या'' के माध्यम से एक अजन्मी कन्या का गहरा दर्द गहनता से उभारा है, जो हृदय को कचोटता है, और समाज की इस विसंगति के प्रति विडम्बनात्मक स्वरों को तीव्र करता है, एक अजन्मी बालिका की गहन व्यथा को विचलित और विद्वेलित करके ऑख के कोनों में अश्रु की बूँदें छलकाने में सक्षम रहती है, और इस समस्या से लड़ने की चुनौती और प्रेरणा देने को कटिबद्ध कराती है। ये एक उत्कृष्ट काव्य–रचना है, जो हृदय को स्पर्श करती है, और मस्तिश्क को झकझोरती है।

निष्कर्षतः ''ज्ञानवार्ता'' पत्रिका में समावेषित समूची रचनाएँ उत्कृष्ट, उपादेय व ज्ञानवर्धक हैं।

डॉ. सारिका शर्मा
अध्यापक 'हिन्दी'
नई दिल्ली

अपनी बात

डॉ. अमर सिंह जी,
सम्पादक–ज्ञानवार्ता (तृतीय संस्करण),
नराकास, जम्मू

महोदय,

आपकी **'ज्ञानवार्ता'** पत्रिका प्राप्त हुई। आद्योपान्त दृष्टि चरणों ने उनकी यात्रा की। पत्रिका का आवरण बहुत श्रेष्ठ लगा। सम्पादन की श्रम–साध्यता सर्वत्र प्रशंसनीय है। निबन्ध, संस्मरण, नाटक, गीत, कहानी तथा शोधात्मक सामग्री आदि सभी विधाओ का पत्रिका दमें पूर्ण परिपाक है। **अध्यक्ष की कलम से शीर्शक संदेश में, अध्यक्ष जी की अपने सहयोगियों से जो सकारात्मक अपेक्षा है–वन्दनीय है**। निबंध कला में डॉ. बहादुर सिंह निर्दोषी द्वारा लिखित 'कल्पवृक्ष' नामक निबन्ध दार्शनिकता और चिंतन की दृष्टि से बहुत ही श्रेष्ठ लगा। इसी तरह 'हिन्दी की सार्थकता एवं संभावनाएं' निबन्ध में डॉ. राकेश सक्सेना ने हिन्दी के कई पहलुओं को अच्छी तरह छुआ है। साथ ही स्वयं सम्पादक डॉ. अमर सिंह का निबन्ध 'भाषा का भौतिक विज्ञान और शैली–वैज्ञानिक मौलिकता के अति निकट मिला। श्रीमती दिव्या सिंह का गीत 'हंसना देखा, रोना देखा' सचमुच प्राणवंत और प्यारा गीत लगा। 'कन्या भ्रूण हत्या' से जुड़ी श्रीकष्ण निर्मल की कविता में मानवीय संवदेना का स्पष्ट स्वर है–जो अनुकरणीय है।

कुल मिलाकर पत्रिका भावना के इन्द्रधनुषी रंगों में पूर्णतः अपने स्तर के साथ रूपायमान है। विश्वास है, अग्रिम पत्रिका इससे भी दो कदम आगे मिलेगी। धन्यवाद

राशि राशि शुभकामनाओं सहित,

डॉ. भरत सिंह राजपूत
सुकृति–सदन (एटा) उ.प्र.

आदरणीय डॉ. राम विश्वकर्मा जी,
सादर प्रणाम,

भारतीय समवेत औषध संस्थान की ओर से दिनांक 13–14 मार्च, 2013 की प्रतिक्षण कार्यक्रम के सफल आयोजन के लिए हार्दिक बधाई स्वीकारें। आपने इस अवसर पर प्रेरणादायक विचार व्यक्त किए जिससे आपके हृदय में राश्ट्रभाषा के प्रति अनुराग की पुष्टि होती है।

ज्ञानवार्ता पत्रिका के अंक 3 की एक प्रति भी मिली। नराकास, जम्मू की यह पत्रिका संग्रहणीय जानकारियों से भरपूर है। श्री कृष्ण निर्मल जी, श्री कैलाश चन्द्र मठपाल जी, डॉ. कान्ति रेखा के लेख तो उच्च स्तरीय हैं ही साथ–साथ श्रीमती शकुन्तला रानी का ''भाषायी सोच'' लेख भी उनके ज्ञान की गहराई का द्योतक है। डॉ. अमर सिंह जी, वरि. हिन्दी अधिकारी सहित संपादक मण्डल को ज्ञानवार्ता के अंक 3 सफल संपादन हेमु मेरी मंगलकामनाएं ।

सादर,

महेश चन्द्र गुप्त
सदस्य हिन्दी सलाहकार समिति,
दिल्ली